आधुनिक साहित्य

Aadhunik Sahitya

साहित्य, संस्कृति एवं आधुनिक सोच की त्रैमासिकी

संपादक

डॉ. आशीष कंधवे

विश्व हिंदी साहित्य परिषद

प्रकाशन | वितरण | राष्ट्रीय अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन

प्रमुख उद्देश्य

- हिंदी का प्रचार-प्रसार
- उत्तम साहित्य का प्रकाशन
- साहित्यकार साहित्य योजना
- पुरस्कार प्रतियोगिता का संचालन
- रोजगारोन्मुख हिंदी के लिए प्रयास
- हिंदी एवं भारतीय भाषाओं का समग्र विकास
- साहित्य एवं संस्कृति के चहुँमुखी विकास के लिए प्रयत्न
- संग्रहालय, पुस्तकालय एवं संगोष्ठी कक्ष की स्थापना में प्रयासरत

मुख्यालय
एडी-94-डी, शालीमार बाग, दिल्ली-110088
संपर्क सूत्र : 09811184393, 011-47481521
ई-मेल : vhspindia@gmail.com, aadhuniksahitya@gmail.com
Website : www.vhsp.in

आधुनिक साहित्य

साहित्य, संस्कृति एवं आधुनिक सोच की त्रैमासिकी

वर्ष/Year-14 अंक/Vol.-53 जनवरी-मार्च 2025/Jan. - March 2025 द्विभाषी/Bilingual

Aadhunik Sahitya

संस्थापक संपादक

डॉ. आशीष कंधवे*

Founder Editor

Dr. Ashish Kandhway

सह-संपादक	Co-Editor
रजनी सेठ	Rajni Seth
कार्यकारी संपादक	Executive Editor
ममता गोयनका	Mamta Goenka
संवाददाता (अंग्रेजी)	Correspondent (English)
निलांजन बैनर्जी	Nilanjan Banerjee
संरक्षकगण	Patrons
प्रो. उमापति दीक्षित	Prof. Umapati Dixit
कुमार अविकल मनु	Kumar Avikal Manu

*आशीष कंधवे (मूल नाम आशीष कुमार)

आधुनिक साहित्य में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबन्धित लेखकों के हैं जिनसे संपादक, प्रकाशक, मुद्रक एवं पत्रिका से जुड़े किसी भी व्यक्ति का सहमत होना अनिवार्य नहीं है। सभी विवादों का निपटारा दिल्ली क्षेत्र के अन्तर्गत सीमित है। पत्रिका में सम्पादन से जुड़े सभी पद गैर-व्यावसायिक एवं अवैतनिक हैं।

आधुनिक साहित्य

साहित्य, संस्कृति एवं आधुनिक सोच की त्रैमासिकी

RNI No. DELBIL/2012/42547
ISSN 2277 - 7083

© सर्वाधिकार सुरक्षित
प्रकाशित सामग्री के पुनः उपयोग के लिए लेखक, अनुवादक अथवा आधुनिक साहित्य की स्वीकृति अनिवार्य है।

संपादकीय कार्यालय
एडी-94-डी, शालीमार बाग, दिल्ली-110088
फोन : 011-47481521, +91-9811184393
ई-मेल : aadhuniksahitya@gmail.com
adhuniksahitya@gmail.com

आलेख/रचना/कहानी में व्यक्त विचार संबंधित लेखकों के हैं इससे प्रकाशक या संपादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है।

मूल्य : ₹ **500 प्रति अंक**

शुल्क : तीन वर्ष (12 अंक) ₹ 6000
पांच वर्ष (20 अंक) ₹ 9000
(डाक/कोरियर खर्च सहित)
आजीवन सदस्यता ₹ 21,000
विदेश के लिए (3 वर्ष) 200 डॉलर

शुल्क **'AADHUNIK SAHITYA'** के नाम पर भेजें।

Account Name	:	Aadhunik Sahitya
Account No.	:	16800200001233
Bank	:	Federal Bank Ltd.
Branch	:	Shalimar Bagh New Delhi-110088
IFSC Code	:	FDRL0001680

'**आधुनिक साहित्य**' द्विभाषी त्रैमासिकी आशीष कुमार के स्वामित्व में और उनके द्वारा एडी-94डी, शालीमार बाग, दिल्ली-110088 से प्रकाशित तथा आभा पब्लिसिटी, 163, देशबंधु गुप्ता मार्केट, करोलबाग, नई दिल्ली से मुद्रित। स्वामी/संपादक/प्रकाशक/मुद्रक : डॉ. आशीष कुमार।

'AADHUNIK SAHITYA' A quarterly bilingual (Hindi & English) Journal of Literature, Culture & Modern Thinking owned/published/printed/edited by Ashish Kumar from AD-94-D, Shalimar Bagh, Delhi-110088 and printed at Abha Publicity, 163, Deshbandhu Gupta Market, Karolbagh, New Delhi.

अनुक्रम

संपादकीय

- डॉ॰ आशीष कंधवे / *विश्व में हिंदुत्व और हिंदुत्व का विश्व*/ 7

हिंदी प्रभाग

- शुभदा मिश्र / **गर्वीला गोल्लर / 13**
- डॉ. पराक्रम सिंह / **संवाद संस्कृति के माध्यम से जुड़ती मानवता / 18**
- आत्माराम यादव पीव / **अनेक वैरायटी के मोटा भाई / 21**
- मनोज कुमार 'शिव' / **उजाले की ओर / 25**
- डॉ. हरप्रीत कौर / **अनुवाद के साहित्यिक, सांस्कृतिक और अन्य संदर्भ / 32**
- राकेश कुशवाहा / **उपासना / 39**
- श्यामल बिहारी महतो / **बाप की लताड़ / 44**
- अरूणा सब्बरवाल / **ललक / 51**
- शोधार्थी-इन्द्रजीत यादव, शोध निर्देशक-डॉ. प्रदीप कुमार / **भक्तिकाल की सूफी परंपरा-काव्यधारा या आंदोलन / 59**
- ज़किया ज़ुबैरी / **और... ब्लॉसम सूख गये... / 64**
- अनीता सक्सेना / **ख़ैबर दर्रा- संग्रह की कहानियाँ बहुत देर तक साथ बनी रहती हैं / 76**
- स्मृति आदित्य / **'घुमक्कड़ी'- सुध-बुध खोकर आप लेखिका के साथ-साथ चलते हैं / 79**
- अशोक गौतम / **टेंशन न लो, हो जाएगा / 82**
- शैली बक्षी खड़कोतकर / **अब मैं बोलूँगी- एक खरी और ज़रूरी किताब / 85**
- कान्ता रॉय / **मोक्ष / 87**
- डॉ. मुकेश असीमित / **साउथ ट्रिप का अंतिम पड़ाव / 94**
- मनोज कुमार शिव / **अनंत की यात्रा के पथिक / 98**

संपादकीय

विश्व में हिंदुत्व और हिंदुत्व का विश्व

वर्तमान वैश्विक परिदृश्य में अलगाववाद, आतंकवाद, आंदोलनवाद और विश्व में अंतिम सांस लेते हुए मार्क्सवाद तथा विशेषकर पश्चिमवाद का प्रभाव भारत में बहुत तेजी से बड़ा-खड़ा हुआ। आजादी के पश्चात 5-6 दशकों में एक नए तरह के बुद्धिजीवी वर्ग, विशेषकर सेक्यूलर बुद्धिजीवी वर्ग का उदय हुआ जो अपनी विचारधारा को नई पीढ़ी में किसी तरह जीवित रखने के लिए प्रयत्न कर रहे हैं। ये लोग अपने प्रयोजन से सिद्ध करने का अथक प्रयास कर रहे हैं कि वे लोग अभी भी बचे हुए हैं। उनकी विचारधारा बची हुई है। साहित्य, संस्कृति में उनके आदर्श बचे हुए हैं। इन सब के पीछे जो मूल अवधारणा थी वह थी हिंदुओं को कमजोर करने की, हिंदुत्व को खत्म करने की। भारतीय साहित्य-संस्कृति की मूल चेतना को नष्ट करने की, भारतीय इतिहास के गौरवशाली परंपरा को दूर कर देने की और भारतीय आध्यात्मिक शक्ति को आडंबर, ढोंग बताकर षड्यंत्र रचने की। इसके अलावा सामाजिक तौर पर एक विशेष धर्म वर्ग को प्रोत्साहित करने की ताकि भारत में एक ऐसा डेमोग्राफिक चेंज हो सके जिससे हिंदुओं का अस्तित्व संकट में पड़ जाए और हिंदुत्व खुद व खुद मर जाए। इन प्रयासों में तथाकथित सेक्यूलर नायकों ने अपने आप को सफल भी घोषित कर दिया क्योंकि भारत के एक बहुत बड़े वर्ग पर प्रभाव डालने में यह सक्षम रहे, विशेषकर शिक्षण संस्थानों के माध्यम से।

धर्म, सभ्यता, संस्कृति, साहित्य, राजनीति सभी क्षेत्रों में इस तरह के उद्दंड और देश की मूल प्रकृति, प्रवृति के साथ खिलवाड़ करने वाले इन लोगों ने संगठित अराजकता और बौद्धिक आतंकवाद के माध्यम से प्रचार-प्रसार ही नहीं किया बल्कि उसे लंबे समय तक भारत के इकोसिस्टम में जिंदा भी रखा। इसका दुष्परिणाम यह हुआ कि भारत में बहुत बड़ी संख्या में ऐसे लोग पैदा हो गए जिन्होंने भारतीय मूल चेतना को, मूल अवधारणा को बहुत बड़ी चोट पहुँचाई। हिंदू होकर भी हिंदू धर्म को नष्ट करने में कोई प्रयास-उपक्रम नहीं छोड़ा। यहाँ मैं बिना लाग लपेट के एक पंक्ति में कहना चाहूँगा कि विश्व में हिंदुत्व को न इस्लाम से इतना खतरा है, न

क्रिश्चियनिटी से बल्कि सबसे ज्यादा खतरा हिंदुओं को सेक्यूलर हिंदू से है।

हुआ ये कि भारतीय शास्त्र, दर्शन, अध्यात्म आदि के अपरिचित अथवा अल्प परिचित बुद्धिजीवियों ने विशेषकर अपने समय के नवयुवकों पर वाम विचारधारा का ऐसा प्रभाव डाला की देश में एक विषम परिस्थिति उत्पन्न हो गई। समय-समय पर यह लोग ऐसे आंदोलन और वैचारिक लड़ाई लड़ने में सफल रहे जिसके कारण देश में असंतोष की भावना बहुत बलवती होकर प्रकट हुई।

नक्सलिज्म का प्रभाव क्षेत्र बढ़ा। देश के अनेक हिस्सों पर दबदबा बनाने में यह लोग सफल रहे। जे एन यू और ए एम यू जैसे विद्या के मंदिर के माध्यम से एक ऐसी पीढ़ी का निर्माण किया गया जो स्वयं के नहीं थे, हिंदुत्व के नहीं थे, अपने परिवार समाज के नहीं थे तो वह देश के कैसे हो सकते थे? इन्हीं विश्वविद्यालयों से सौभाग्य कहे या दुर्भाग्य विश्व के अनेक देशों में स्कॉलर के रूप में ये लोग स्थापित हो गए और अपने बुद्धि-कौशल और अध्ययन से हिंदुत्व को कैसे खत्म किया जाए इसमें अपनी संपूर्ण शक्तियों को झोंक दिया।

मुझे ये कहने में अतिशयोक्ति नहीं है कि मूल धरातल पर हिंदुत्व को मानने वाले लोग सहिष्णु एवं शेष संसार से ज्यादा धैर्यवान होते हैं। धैर्यवान शब्द का प्रयोग मैं इसलिए कर रहा हूँ क्योंकि कई बार इसी धैर्य को कुछ लोग कायरता समझ लेते हैं। ऐसा बिल्कुल नहीं है। हिंदू के धैर्यवान होने का अर्थ उनके कायर होने से निकाला जा सकता है। हाँ, यह अवश्य है कि अपने अधिकारों के प्रति अगर विश्व में कोई संस्कृति, कोई धर्म सबसे कम लड़ता है या ध्यान रखता है तो नि:संदेह हिंदुत्व ही है। अधिकांश समय में यह देखा गया है कि विशेष परिस्थितियों में ही हिंदू विद्रोह के लिए खड़ा होता है अन्यथा उसकी प्रवृत्ति और प्रकृति शांत रहना ही है।

शांति और विकास का मार्ग शुरू से हिंदुओं को आकर्षित करता रहा है। यही कारण था कि हम उन दिनों में जब विश्व की किसी भी सभ्यता के पास कुछ भी नहीं था हम परम ज्ञान को प्राप्त कर चुके थे, परम वैभव को देख चुके थे एवं विज्ञान की पराकाष्ठा को छू चुके थे। सामाजिक-सांस्कृतिक रूप से हम इतने विशाल हो चुके थे कि विश्व की अन्य कोई संस्कृति हमारे आसपास भी खड़ी दिखाई नहीं देती थी। यहाँ मैं यह भी कहना चाहूँगा कि हम लोग मानसिक रूप से भी इतने सक्षम, परिपक्व और विद्वता की पराकाष्ठा को प्राप्त कर चुके थे कि शायद और जानने की इच्छा हमारे भीतर कहीं दम तोड़ते हुए नजर आने लगी थी।

भारत में लोकतंत्र की जनवादी लोकसत्ता व्यवस्था ने आम नागरिकों को भाषण, लेखन, जनमत, आंदोलन, विद्रोह जैसे शब्दों के साथ खेलना सिखा दिया। एक ऐसा समय भी आया जब इस देश में आंदोलनों की संख्या इतनी बढ़ गई कि आज के समाज ने लगभग आंदोलनों को अस्वीकार कर दिया है। अन्ना हजारे के द्वारा लोकपाल के लिए किया गया आंदोलन शायद

आंदोलनों के इतिहास में अंतिम सफल आंदोलन के रूप में स्मरण किया जाएगा। उसका परिणाम क्या निकला, हम लोगों के सामने हैं। आंदोलनों की उपयोगिता लगभग समाप्त हो गई। लगभग 6 महीने से धरने पर बैठे कुछ राज्यों के किसानों ने आंदोलनों की मूल चेतना को न समझते हुए उसकी उपयोगिता को नष्ट करने में कोई कमी नहीं छोड़ी। शायद शाहीनबाग और किसान आंदोलन वर्तमान लोकतांत्रिक व्यवस्था में असफल आंदोलन के रूप में हमेशा याद किए जाएंगे और ये आंदोलन इसलिए भी याद किए जाएंगे कि आंदोलनों के नाम पर किस तरह से देश को तोड़ने-मरोड़ने और अस्थिर करने की साजिश रची जाती है।

बड़ी बात यह है कि मैंने अभी तक किसी भी मंच से, किसी भी फोरम से वैश्विक हिंदुत्व को बचाने के आंदोलन के बारे में आवाज लगाते या फिर नारे लगाते भारत की आम या खास जनता को कम ही देखा है। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ, विश्व हिंदू परिषद, बजरंग दल, हिंदू महासभा जैसे कुछ ऐसे मंच जरूर हैं जिन्होंने हिंदू और हिंदुत्व की चिंता की है एवं राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अपना-अपना कार्य किया है, परंतु मैं यह जरूर कहना चाहूँगा ये प्रयास वैसे नहीं है जो समाज के एक बहुत बड़े वर्ग को प्रभाव में ले लें। यही कारण है कि आज हिंदुइज्म संकटों के बादल के नीचे भीगने को विवश है।

मेरा तो यह मानना है कि सृष्टि का आरंभ ही हिंदुत्व से हुआ है, सनातन संस्कृति से हुआ है, सनातन प्रवृत्तियों से हुआ है, सनातन सोच से हुआ है। इस बात में तो कोई संशय है ही नहीं कि हम से पुरानी कोई सभ्यता इस सृष्टि में नहीं है। यह भी जोड़ना चाहता हूँ कि हमसे समृद्ध भी कोई सभ्यता इस सृष्टि में नहीं है। मुझे यह कहने में भी कोई संशय नहीं है कि हमसे समृद्ध कोई सभ्यता अब इस सृष्टि में उत्पन्न भी नहीं हो सकती।

अवतारों की परिकल्पना से लेकर लोकतंत्र की यात्रा तक हम अपनी संस्कृति, अध्यात्म, धर्म और साहित्य को संपूर्ण रूप से बचाने में सफल तो नहीं हुए परंतु एक बड़े हिस्से को आज भी बचाया जा सका है। समय-समय पर हिंदुओं में जिन नायकों का अवतरण हुआ उन्होंने ग्लोबल हिंदुइज्म को बढ़ाने में और बड़ा करने में अपनी महती भूमिका निभाई। वे चाहे स्वामी विवेकानंद हो या फिर वर्तमान में गायत्री परिवार स्वामीनारायण हिंदू मंदिर के माध्यम से वैश्विक स्तर पर हिंदुइज्म को प्रतिष्ठित करने वाले आध्यात्मिक संस्थान संगठन।

मित्रों, वैश्विक स्तर पर हिंदू धर्म के बचे रहने और प्रतिष्ठित रहने का मूल कारण धर्म और अध्यात्म के अलावा और कुछ भी बहुत प्रतीकात्मक रूप से नहीं दिखाई देता है। यहाँ मैं एक बात और जरूर जोड़ना चाहूँगा कि सिर्फ अध्यात्म और धर्म के माध्यम से किसी विचारधारा को वैश्विक स्तर पर बहुत दिनों तक प्रतिष्ठित नहीं रखा जा सकता इसके लिए जरूरी है कि उसकी वैचारिक तर्कशक्ति वैश्विक स्तर पर सिद्ध हो।

मैंने विश्व के लगभग 50 से अधिक देशों की यात्रा की है और अनेक देशों की यात्रा अनेक बार की है। चाहे वह मॉरीशस हो जिसे हम लघुभारत के रूप में जानते हैं या फिर साउथ ईस्ट एशिया में इंडोनेशिया का बाली द्वीप, या सुदूर पूर्व में फिजी, सुदूर पश्चिम में ग्वाटेमाला-होंडुरस की बात करें, सुरीनाम की बात करें, त्रिनिदाद और टोबैगो की बात करें या अपने पड़ोस में थाईलैंड, नेपाल, श्रीलंका, भूटान की बात करें, कंबोडिया की बात करें, वियतनाम के कुछ हिस्सों की बात करें, फिलिपिंस की बात करें हिन्दुत्व का प्रभाव उनके नित जीवन में साफ दिखाई देता है। वर्तमान विश्व में 30 से अधिक देश ऐसे हैं जहाँ हिंदू धर्म-व्यवस्था की उपस्थिति संपूर्ण वर्चस्व के साथ देखने को मिलती है। मॉरीशस, श्रीलंका, इंडोनेशिया का बाली द्वीप, कंबोडिया जैसे देश तो सदियों से हिंदुत्व का पताका लहराते हुए आज तक विश्व पटल पर अपनी उपस्थिति को दर्ज करा रहे हैं। विश्व के सबसे बड़े इस्लामिक देश इंडोनेशिया में लगभग रोज 150 रामलीलाओं का आयोजन किया जाता है। इन रामलीलाओं में काम करने वाले 80 प्रतिशत कलाकार इस्लाम धर्म को मानने वाले हैं। प्रभु श्री राम, हनुमान, सीता के चरित्र में वह उतने ही मनोयोग और श्रद्धा के साथ चरित्रों का निर्वहन करते हैं जितना अपने धर्म के प्रति किसी व्यक्ति की आस्था होती है। इतना ही नहीं जब आप बाली जाएंगे तो आपको वहाँ के लोग गुड मॉर्निंग, गुड इवनिंग कह कर संबोधित नहीं करते हैं बल्कि वह परिचय के समय नमस्ते के स्थान पर आप को कहते हैं- 'ॐ स्वस्ति अस्तु' या 'ॐ नमः शिवाय'।

बैंकॉक की तो बात ही निराली है वहां तो बैंक को भी 'धनागार' कहते हैं और हवाई अड्डे का नाम स्वर्णभूमि विमानपत्तनम रखा जाता है जो अपने आप में ग्लोबल हिंदुइज्म का उत्कृष्ट उदाहरण है। थाईलैंड में आज भी वहां के राजा को प्रभु श्री राम का वंशज माना जाता है और इसी तरह कोरिया में भी यह मान्यता है कि उनके वंशज भी हिंदू ही थे।

सबसे आश्चर्यजनक तथ्य ग्वाटेमाला और होंडुरस की यात्रा करेंगे तो आपको देखने को मिलेगा कि वहाँ पर एक विशेष प्रकार की जनजाति आज भी रहती है जो मंकी गॉड (बजरंग बली) की पूजा करती है। एक विशेष जनजाति की स्त्रियां त्रिपुंड चोटी बांधती हैं। ये सब कुछ ऐसे तथ्य हैं जो हिंदुत्व की सृष्टि के आरंभ से लेकर अभी तक की यात्रा को बताने में सक्षम हैं। कंबोडिया का अंकोरवाट मंदिर विश्व का एक ऐसा धरोहर है जिसे हिंदुत्व के ध्वज के रूप में देखा जा सकता है।

ग्लोवल हिंदुत्व के समकालीन परिदृश्य का हम आंकलन करें तो यह पाते हैं कि चाहे वह इंग्लैंड हो, अमेरिका हो, कनाडा हो, ऑस्ट्रेलिया हो या फिर विश्व का कोई बड़ा या छोटा देश उन सभी देशों में हिंदुइज्म के जीवित रहने का एकमात्र मंत्र वहां पर निर्मित मंदिर, धार्मिक संस्थान, योग, आयुर्वेद की ही मूल भूमिका दिखाई देती है।

शिक्षण के माध्यम से हिन्दू संस्कृति

हिंदू और हिंदू धर्म को वैश्विक स्तर पर जीवित वहाँ रखने में विश्व के उन विश्वविद्यालयों का भी एक बड़ा योगदान है जहाँ इंडोलॉजी का विभाग है। हिंदी-संस्कृत भाषाओं का अध्ययन अध्यापन किया जाता है। गर्व की अनुभूति होती है कि विश्व के लगभग 150 से अधिक विश्वविद्यालयों में हिंदी के बहाने हिंदुत्व को जानने का अवसर मिल रहा है। संस्कृत के बहाने हमारी सभ्यता-संस्कृति के मूल अस्तित्व से विश्व परिचित हो रहा है। ये अलग बात है कि वहाँ पर शोध के विषय ज्यादातर 19वीं और 20वीं सदी के साहित्यकारों लेखकों अथवा चिंतकों पर केंद्रित रहते हैं परंतु फिर भी आंशिक रूप से वह हिंदू धर्म के महत्त्व को समझते भी हैं कहीं न कहीं उसका संरक्षण भी करते हैं।

समस्याएँ और आत्म चिंतन

समकालीन विश्व अनेक विकट परिस्थितियों से गुजर रहा है और धीरे-धीरे विश्वास की भावना कम होती जा रही है। एक देश दूसरे देश पर भरोसा नहीं करता। किसकी दोस्ती किससे है यह भी अनुमान लगाना अब कठिन हो गया है। अगर किसी कारणवश विश्व में युद्ध की स्थिति बन जाए और तीसरे विश्वयुद्ध की संकल्पना के बारे में हम सोचे तो यह निश्चय कर पाना अत्यंत कठिन होगा कि कौन सा देश किसके पक्ष में लड़ेगा। अनुबंधों का ज्यादा आधार नहीं रह गया और तात्कालिक लाभ को देखते हुए क्षणिक संबंधों पर विशेष महत्त्व दिया जाने लगा है। वैश्विक आतंकवाद रोज नए रूप में हमारे सामने आ रहा है। इस वैश्विक आतंकवाद के मूल में भी धर्म ही सबसे बड़ा फैक्टर है। अस्तित्व की लड़ाई में धर्म को केंद्र में रखकर लड़ा जा रहा है क्योंकि विश्व के अधिकांश देश धर्म को तो परिभाषित कर सकते हैं लेकिन अध्यात्म से उनका परिचय बिल्कुल नहीं है। जबकि भारत धर्म की सीमाओं से बाहर निकल कर अध्यात्म के परम सत्य को परिभाषित कर चुका है और पुनः परिभाषित भी कर सकता है। मनुष्यता की पराकाष्ठा को समझ और समझा भी सकता है। इसलिए वर्तमान विश्व के लिए हिंदू धर्म ही एक मात्र ऐसा धर्म है जिसके माध्यम से वैश्विक शांति, वैश्विक समरसता और सफल राष्ट्र की परिकल्पना की जा सकती है। कहने का तात्पर्य है कि विश्व को बचाए रखने के लिए हिंदुत्व को बचाए रखना अत्यंत आवश्यक है अन्यथा मनुष्य जाति का बहुत बड़ा नुकसान आने वाले दिनों में देखा जा सकता है।

यहाँ प्रश्न यह उठता है कि आखिर हिंदुओं को और हिंदुत्व को बचाएगा कौन? कौन से ऐसे उपाय करने चाहिए जिससे हिंदुत्व की रक्षा राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय दोनों पटल पर हो सके? पहली बात तो यह है कि हमारी आबादी और फैलाव विश्व के अनेक देशों में इतना था कि हम अभी तक अपने अस्तित्व को बचाए रखने में सफल रहे हैं लेकिन आने वाले दिनों में ऐसी स्थिति बनी रहेगी यह कहना अत्यंत कठिन है। इस्लाम अपनी आबादी के बल पर ही

विश्व पर कब्जा करने की ओर बढ़ रहा है वहीं ईसाइयत अपने वैचारिक क्षमता से विश्व को अपने कब्जे में लेना चाहती है। लेकिन हिंदुत्व न अपनी वैचारिक क्षमता का उपयोग वैश्विक विस्तार के लिए कर रहा है और न ही जनसंख्या में उसकी कोई विशेष वृद्धि हो रही है। यानी हम संख्या और वैचारिकी दोनों स्तरों पर दोनों धर्मों से पीछे जाने और पीछे धकेल दिए जाने से दो-चार पायदान दूर खड़े हैं।

भारत का आम हिंदू इन विचारों से बहुत दूर हो चुका है कि आने वाले समय में उनका भविष्य क्या होने वाला है। हिंदुओं की मूल प्रवृत्ति में भी कोई खास फर्क नहीं आया है चाहे वह मुगल काल का समय रहा हो, अंग्रेजों का समय रहा हो या फिर वर्तमान लोकतांत्रिक व्यवस्था में घोर हिंदूवादी पार्टी शिव सेना की भूमिका हम सब ने यर्थाथ देखा है। सत्ता के लिए संघर्ष और अपने मूल सिद्धांतों से अलग होकर लोभवश कुर्सी पर बैठना हिंदुओं के लिए एक विकट समस्या के रूप में देखा जा सकता है। कथनी और करनी में अंतर, हिंदुओं को आने वाले समय में बहुत बड़े संकट में डालने वाला है।

आज मैं इस संपादकीय के माध्यम से कहना चाहूँगा कि हिंदुत्व की संख्या और बड़े-बड़े आंकड़ों के बल पर या विश्व में बने स्वामीनारायण और बिरला मंदिर की संख्या के बल पर हिंदू धर्म की मूल स्थिति का आकलन नहीं किया जा सकता। वस्तुत: हिंदुत्व की मूल अवधारण ा भारत में बची रहे। जब तक भारत में इसका अस्तित्व बचा रहेगा तभी तक ग्लोबल हिंदुत्व को किसी भी तरह का कोई संकट नहीं होगा। विश्व में हिंदुत्व और हिंदुत्व के विश्व का आकलन संभव होगा। साहित्यकारों, पत्रकारों, कलाकारों एवं अन्य क्षेत्रों में कार्य करने वाले प्रत्येक हिंदू का यह दायित्व होना चाहिए कि वह अपने धर्म, अध्यात्म, संस्कृति, साहित्य की रक्षा के लिए कम से कम अपने परिवार को शिक्षित करें, कम से कम अपने व्यापारिक प्रतिष्ठानों को जागृत करें जिससे विश्व की सबसे पुरानी संस्कृति, विश्व की सबसे समरसता पूर्ण संस्कृति और विश्व की सबसे विद्वता पूर्ण संस्कृति की रक्षा हो सके उसके अस्तित्व को बचाया जा सके।

जय भारत!

–डॉ. आशीष कंधवे
+91–9811184393

गर्वीला गोल्लर

– शुभदा मिश्र

पाठक बंधु आप सोचेंगे कि गर्वीला तो ठीक है मगर यह गोल्लर क्या है! तो बता दूं, छत्तीसगढ़ में गोल्लर कहते हैं नंदी को, यानी सांड़ को, यानी बुल। मगर नंदी या सांड़ से लेखक का क्या काम। है काम। न बताऊं तो घुलती रहूँ।

दरअसल किस्सा यह है कि उस दिन तड़के मैंने घर के सामने का दरवाजा खोला तो दरवाजे पर बैठी मिली गोमाता। भूरे रंग की हृष्टपुष्ट गोमाता। आराम से बैठी जुगाली करती हुई। सुखद आश्चर्य। दरवाजा तो रोज तड़के मुँह अँधेरे ही खोलती हूँ, भगवती बमलेश्वरी के मंदिर के दर्शन करने। दूर पहाड़ी की ऊची चोटी पर विराजमान है भगवती का मंदिर। अँधेरे में जगमगाता। धर्मध्वजा फहराता। मंदिर को प्रणाम कर घर के भीतर अपनी दैनिकचर्या में लग जाती हूँ। मगर उस दिन खोला तो सामने बैठी मिलीं गोमाता। गायें मेरे घर के सामने अक्सर बैठती हैं। मगर इतने सबेरे! जरूर रात अपने घर गई ही नहीं, मेरे ही दरवाजे गुजार दीं हैं माता। मन भर आया। सो भगवती के मंदिर को प्रणाम कर सीढ़ियों से उतरी। गोमाता को स्पर्शकर प्रणाम किया। कोमल करुण नेत्रों ने निशब्द आशीर्वाद दिया। आशिर्वादिक अनुभूति से घिरी मैं भीतर गई। काम में व्यस्त हो गई।

दूसरे दिन दरवाजा खोला तो फिर वही गोमाता। वैसे ही भगवती मंदिर को प्रणाम किया। नीचे उतरी। इस बार स्पर्श ही नहीं किया। उनका सिर सहलाया। गर्दन सहलाया। पीठ थपथपाई। धन्यवाद कि मेरे दरवाजे पधारीं। प्रणाम कर भीतर चली गई। सुखद अनुभूतियों से भरी।

दो तीन दिन ऐसे ही। चैथे दिन देखा, साथ बैठी हैं एक और गोमाता। फिर सुखद आश्चर्य। उनका भी सिर सहलायां। गर्दन सहलाया। पीठ थपथपाई। उनके नेत्रों में भी वही कोमल करुण आशीर्वादक

दो तीन दिन मैंने भीतर जाकर रात में बची रोटी भी लाकर दिया। मगर जब माताओं की संख्या बढ़ने लगी,तो नहीं दे पायी। मगर माताओं को तो जैसे कोई फर्क ही नहीं। संभवतः वे मेरी श्रद्धा जनित स्पर्श दुलार पाने के लिये ही रात भर बैठी रहती थीं। महाबली नंदी महाराज को भला कौन ऐसा भावभरा स्पर्श दुलार देने की हिम्मत करता। सो वे भी इसी आस में रात भर डटे रहते।

अभिव्यक्ति। विभोर ही हो गई मैं तो।

अगले दिन एक और गोमाता। उनका भी वैसा ही विभोर सत्कार। पाँचवे दिन, छठे दिन। सातवें,गोमाताओं की संख्या बढ़ती गई। मेरा दूर तक पसरा पैत्रिक घर। लाईन से बैठी गोमातायें। सबको लाईन से ही प्रणाम सत्कार करती। आशीर्वादक अनुभूतियों से घिर जाती। दिनभर घिरी ही रहती। कि एक दिन देखा, एक विशालकाय नंदी महराज भी आकर बैठ गए हैं लाईन में। झिझकी मैं। पर आगे बढ़कर उनका भी वैसे ही सिर सहलाया। गर्दन सहलाया। पीठ थपथपाई। महाबली की कोमल कृतज्ञ दृष्टि। आशीर्वाद ही तो।

दो तीन दिन मैंने भीतर जाकर रात में बची रोटी भी लाकर दिया। मगर जब माताओं की संख्या बढ़ने लगी,तो नहीं दे पायी। मगर माताओं को तो जैसे कोई फर्क ही नहीं। संभवतः वे मेरी श्रद्धा जनित स्पर्श दुलार पाने के लिये ही रात भर बैठी रहती थीं। महाबली नंदी महाराज को भला कौन ऐसा भावभरा स्पर्श दुलार देने की हिम्मत करता। सो वे भी इसी आस में रात भर डटे रहते।

लोग कहते....आप बहुत भाग्यशाली हैं जी। लक्ष्मी मैया दलबल के साथ आपको आशीर्वाद देने बैठी रहती हैं। मैं गदगद।

पर फिर एक परेशानी भी।

सुबह जब ये मातायें जातीं तो मेरे घर के सामने गोबर, गोमूत्र, उनके मुँह नाक, आँख से निकली कीच, गंदे द्रव्य, वमन, लाईन से बिखरे पसरे रहते। जाने इन गोमाताओं का पेट खराब रहता था या क्या ,गोबर पिलपिले पसरे हुये। साथ में इनके बीच घुस आये कुत्तों की गंदगी भी। एकदम घिनाई। अब ये गंदगी कौन साफ करे। जाहिर है, मैं ही। यों सड़कें साफ करने सफाई कर्मचारी आते , मगर वे सड़कें साफ करते । लोगों के घरों की दीवारों से सटी गंदगी नहीं। फिर इन दूर तक पसरी विद्रूप गंदगियों को साफ करने बड़ा सा सूप, फावड़ा,खर्राटा झाड़ू की जरूरत पड़ती। साथ में ढेर सारे पानी की भी। जब तक दो तीन गायें थीं, मैं कर ही लेती सफाई। पर जब माताओं की संख्या बढ़ती गई, गंदगी का विस्तार और फैलाव बढ़ता गया, मेरी हिम्मत जवाब देने लगी।

खिजलाहट भी हावी होने लगी। दरअसल मैं गंदगी साफ करने का काम सुबह सुबह नहाने के पहले ही कर लेती हूँ। मगर ये मातायें अक्सर सुबह हो जाने के बाद भी टलें ना। मैं घर की सफाई करने के बाद बार बार बाहर झाँकती रहूँ। मगर ये मातायें अपनी गंदगी में ही मगन जुगाली करती बैठी दिखें। दुख तारी हो जाये।

दुख और भी घनीभूत, कारण कि मेरे सारे पड़ोसियों के घर के सामने का दृश्य हो बड़ा ही मनोरम। दरअसल मेरा मुहल्ला है खानदानी श्री संपन्न लोगों का। सामान्यतः मकानों में आधुनिकता तो आ गई है,

पर साथ है परंपराओं की हृदयग्राही विरासत भी। परंपरानुसार लोग मुँह अँधेरे ही अपने घर के सामने का हिस्सा स्वयं साफ करते हैं। "खोरबहरा" छत्तीसगढ़ में सामान्य नाम रहा है। खोरबहरा का मतलब है, घर के सामने के हिस्से की भी सफाई करने वाला स्वच्छताप्रिय।। हमारे मुहल्ले में महिलायें ही करती हैं सफाई, पर कई घरों में पुरुष भी करें, चाहे खानदानी रईस हों। झाड़ू से बुहारकर, पानी से धोकर,स्वच्छ चिकना किया जाता है सामने का प्रांगण, फिर महिलायें उस पर छोटी सी रंगबिरंगी रांगोली बना देती हैं। रंगोली के बीचों बीच दीप बाल कर रख देती हैं । भोर के मधुरिम आभा मे सद्यः संवारी सतह पर सजी मनोहारी रांगोली, उसपर झिलमिलाता नन्हा सा दीप। प्रभाती का मासूम स्वागत करता ।

सुबह टहलने वाले गुजरते तो इन्हें देखते अनूठी सी आनंदमयी ऊर्जा से भर जाते। मेरे घर तरफ देखते तो तत्क्षण नजरें फेर लेते।

कई बार गोमातायें इतनी देर से आसन त्यागतीं कि सड़क में आवाजाही शुरू हो। राह चलते लोग मुझे सूप झाड़ू फावड़ा लिये सफाई करते देखते, तो दया से भर जाते। कहते...काम वाली बाई से कहिये न, सफाई करने। मैं चिढ़ जाती..."बताईये कहाँ है ऐसी कामवाली बाई जो सबेरे सबेरे ऐसी गंदगी साफ करे"। बस फिर लोग ठिठक जाते। कामवाली बाईयों पर चर्चा शुरू..."कामवाली बाईयाँ तो अब मैडम हो गई हैं। क्या कपड़े, क्या गहने, क्या साजश्रृगार और क्या तेवर। क्यों न हो, मुफ्त राशन,मुफ्त बिजली पानी, मुफ्त घर,मुफ्त चीजों की भरमार। तिसपर लाड़ली बहनों पर मुफ्त पैसों की बारिश भी। मुफ्तखोरी का खून जिन्हें लग गया वे ऐसी गंदगी साफ करेंगे? हमारे जैसे आमजन के लिये?"

सो चर्चा गंदगी फैलाई गोमाताओं पर। चर्चा कि गोमातायें हैं तो आखिर पशु ही। इन्हे कोई प्रशिक्षण तो दिया नहीं गया है कि यहाँ यहाँ विसर्जन नहीं करना है। कूड़े के ढेर मे मुँह नहीं मारना है। बीच सड़क में बैठ जुगाली नहीं करना है। सभी लावारिस नहीं हैं, पर जिनके मालिक हैं वे भी लावारिस सी। गोबर, कीचड़ में सनी घिनाई रहें, रातभर न लौटें, बूढ़ी गोमाताये कहीं मर खप जाय, मालिक को पर्वाह ही नहीं। अमुक अमुक हाईवे पर बैठी गोमातायें अक्सर भारी वाहनो से कट जाती हैं। खून से लथपथ कुचली लाश पड़ी रहती है। देखा नहीं जाता। मालिक को पता ही नही। पर मालिक हैं ही कितने! बस वही जो दूध का धंधा करते हैं। इन्हें भी कोई दूसरा धंधा मिल जाये तो गायें रखना छोड़ दें। असल में गायें रखना मजाक नहीं है। बहुत सेवा लगती है। शहरों में तो गाय पालना संभव नहीं। गाँवों में भी बहू बेटियाँ गोबर, मूत्र, कीचड़ छूना नहीं चाहतीं। चरवाहे भी नहीं मिलते। मजदूरी का रेट बहुत बढ़ गया है। सो शहर भाग जाते हैं मजदूरी करने। विदेश भी जाने लगे हैं। "महाराजजी लोग" अपने प्रवचनों में गोमाता का इतना महात्म्य बताते हैं, गोहत्या, गोतस्करी पर प्रतिबंध,राष्ट्रमाता घोषित हो वगैरह, पर गाय पालकर "सेवा करने" पर "असरदार जोर" नहीं। सो लोग खिलापिलाकर, सत्कार कर, पुण्य कमा लेना चाहते हैं, पर सेवा नहीं। महात्म्य फलीभूत कराना

हो तो जबर्दस्त ''सेवाअभियान'' चलाने की जरूरत है। अभियान कि हर समर्थ व्यक्ति अपने घर में गाय पाले। ऐसी सेवा करे कि गोमाता स्वस्थ, सुंदर घर की शोभा लगें। जिसकी गाय सबसे सुंदर, स्वथ्य, उसे शानदार ढंग से सम्मानित किया जाये। गाय पालना शान हो। इस मुद्दे को तो विरोधी पक्षं को लपक लेना चाहिये। जहाँ देखें,कूड़े के ढेरों में मुँह मारती गंदी संदी दुर्गति की मारी गोमातायें, सेवा शुरू कर दें। नहलायें, धुलायें, संवारें। घर घर जाकर पूछें भी....''भाई गोसेवक की जरूरत है क्या।'' देखकर लोग गदगद। आस्था प्रधान देश। अगली सरकार पक्की उनकी। अगर कोई मुस्लिम संगठन इस मुद्दे को लपक ले, जबर्दस्त सेवाअभियान चलाये तो देश में अभूतपूर्व क्रांतिकारी परिवर्तन। सौ खून माफ। बाजी उनके हाथ। मुस्लिम प्रधानमंत्री का सपना साकार।

मैं बिगड़ जाती....''सड़क पर खड़े खड़े सेमिनार करने की जरूरत नहीं। मुझे यह बताईये कि आप लोगों के घर के सामने ये गोमातायें क्यों नहीं बैठतीं।'' बताते लोग.....हम बैठने ही नहीं देते। जैसे ही बैठीं, हम पानी छिड़ककर कर भगा देते हैं।

मैं सहम गई। प्रेम से जुगाली करती बैठी गोमाताओं को पानी छिड़क कर भगाना,मैं ऐसा नहीं कर सकती। न मैं पानी छिड़क कर भगा सकती, न मैं इतनी भारी भरकम गंदगी साफ कर पा रही हूँ, तब?

आखिरकार मुझे उपाय सूझा। ये गोमातायें तो रात में आकर बैठती हैं। सो शाम ढलते ही मैं पानी का पाईप लेकर घर के सामने की पूरी दीवार के नीचे ढेर सारा पानी बिखेरने लगी। किसी किसी ने पूछा भी, ''यह घर के सामने कीचड़ क्यों फैला रही हैं।'' मैं चुप। अब दंखूंगी परिणाम।

रात भर ठीक से नींद नहीं आई.... तड़के बिस्तर से उठी। सहमते हुये सामने गई। धीरे से दरवाजा खोला। दूर जगमगाता मंदिर। प्रणाम किया। मुँह निकालकर बाहर देखा। दायें बायें। कीचड़ का असर। कोई गोमाता नहीं। दिल बल्लियो उछल पड़ा। किं दूर से आती भारी भरकम हलचल। देखा, अरेबाप! वही नंदी। झट दरवाजा बंद किया। घर के भीतर दुबकी बैठी रही। आहत जानवर। तिस पर महाबली सांड़। कहीं दरवाजा न पेलने लगे। तोड़ न दे दरवाजा। संकट से हनुमान छुड़ावें...''कभी हनुमानजी को मनाऊं, कभी शंकरजी को.....भोलेबाबा, अपने नंदी को बुला लो...''

सड़क में आवाजाही शुरू। भगवान भास्कर आसमान में चढ़ गये। दिन का चमकदार उजाला। अब जाकर दरवाजा खोला। नंदी महाराज जा तो चुके थे। मगर दस गायों के बराबर गोबर गंदगी फैलाकर। जाने कौन सा जुलाब खाकर आये थे।

और नंदी महाराज का यही बदला। रात मैं पानी बिखेरकर सामने बुरी तरह गीला कर दूं। एकदम कीचड़। बिस्तर में जाने के पहले झाँकू, ''कहीं आ तो नहीं गया दुष्ट।'' नहीं दिखे। मगर जब तड़के डरते डरते

जरा सा दरवाजा खोलकर झाँकूं तो सामने बैठे। चट मेरी तरफ देख दें। मेरी जान सूख जाये। दरवाजा लगा दुबकी बैठी रहूं। सूरज देवता सिर चढ़ जाये तब ये जायें। भरपूर गंदगी फैलाकर।

पड़ोसियों ने समझ लिया। बोले..यह दुष्ट ऐसे नहीं मानेगा। इसे डंडे डंडे.मारना पड़ेगा। अकेली औरत देख सता रहा है।

सता तो रहा है। मगर मैं डंडे से नहीं मार सकती। हाँ, पानी डाल सकती हूँ। जरा सा पानी छिड़कने से यह जानेवाला नहीं। तब?

तब मैंने जी कड़ा किया। कई दिनों तक हिम्मत जुटाती रही। आखिर एक तड़के बाल्टीभर पानी लेकर सामने गई। भगवान का नाम लेकर दरवाजा खोलां कि सामने बैठे ने पूरी आँखों से मुझे देखा। प्राण कंठ में। आँख मीचकर पूरी ताकत से बाल्टीभर पानी उसपर उड़ेला और दरवाजा बंद। भागकर अंदर चली गई। एकदम अंदर। दुबकी बैठी रही।

नहीं दरवाजा पेलने की आवाज नहीं आई। उजाला फैल गया। सूरज चढ़ गया। आवाजाही की आवाजें। सहमते हुये दरवाजा खोला। डरते हुये झाँका। नहीं दिखा। पूरी गर्दन निकालकर झाँका। सामने निकलकर दूर दूर तक देखने लगी। कहीं नहीं। मेरा दिल बल्लियों उछलने लगा। सामने बिखरा पानी अब तक सूखा नहीं था। धन्यवाद पानी।

कि राहगीरों की बातचीत कानो में पड़ी। सबेरे सबेरे बेचारा गोल्लर कट गया।

मेरा जी धक्। पूछने लगी....ये भैया, कौन गोल्लर कहाँ कट गया।

बाईपास रोड में बहनजी। तड़के बाईपास पर भारी भरकम लदीफँदी ट्रकें गुजरती हैं। पूरी रफ्तार से। यह बीच सड़क में बैठ गया था। एक ट्रक ने किसी तरह बचाया। अगला रौंदकर निकल गया। बाद के भी रौंदते निकलते गये। लाश पहचान में नहीं आ रही। पर जरूर वही है जो सबेरे सबेरे आपके घर के सामने ठसके से बैठा रहता था। जाने क्या सूझी कि मरने चला गया।

जाने क्या सूझी, मैं समझती रहती हूँ क्या सूझी होगी, और घुलती रहती हूँ। मूक जीवों का प्रेम लोग समझते हैं। गदगद होते हैं। मगर मूक जीवों का प्रतिकार? वह भी गर्वीले गोल्लर का।

आज भी तड़के दरवाजा खोलती हूँ तो मुझे वह गर्वीला आहत नेत्रों से ताकता दिखता है।

❐❐❐

14, पटेलवार्ड, डोंगरगढ़

संवाद संस्कृति के माध्यम से जुड़ती मानवता

– डॉ. पराक्रम सिंह

आजादी का अमृत महोत्सव मना रहा यह देश कैसे कुछ लोगों के धरनें से हटानें के लिए संशोधन नहीं वापस किया जाना यह किसान की जीत नहीं देश के हित में देखा जाना शायद अच्छा होगा। प्रधानमंत्री का यह कथन कि- 'किसान हित में लाया था देश हित में वापस ले रहा हूँ ' यह कथन न कहते हुए बहुत कुछ कह जाता है। संवाद जीवंतता का परिचायक है इसके आभाव में मनुष्य और अन्य जीवधारियों में कोई अंतर नहीं होता। बच्चे के जन्म के साथ ही उसके रोने का भाव इस बात का सूचक है कि वह एक जीवित हाड़-माँ का पुतला है। धीरे-धीरे उसके क्रमिक विकास के साथ रोना, खिलखिलाना, तोतली भाषा में बोलते हुए माँ परिवार के सामने व्यक्त करना संवाद का स्वरूप होता है। वर्तमान में सम्पूर्ण विश्व संवाद के द्वारा जुड़कर विकसित होने के लिए तत्पर दिख रहा है। विकास एवं सूचना संचार की क्रांति में इसके लिए अनेक संसधान उपायों को टटोला जा रहा है। किसी एक ही माध्यम को संवाद का अंतिम रूप मान लेना यह मात्र स्वयं को भरोसे में लेना है। इस देश में संवाद का प्राचीन काल से महत्त्व रहा है। देवताओं के लिए नारद ऋषि,आकाशवाणी, रामायण काल में शक्ति और प्रखर हनुमान, अंगद का लंका में जाकर रावण से वार्तालाप करना, महाभारत मे कृष्ण द्वारा दुर्योधन को समझाने का प्रयास एवं अर्जुन को उपदेश देकर धर्म अधर्म के दोनों ही परिणामों को दिखाने का अवसर बताया। आज अस्सी प्रतिशत कृषि प्रधान इस देश नें संवाद को विभिन्न रुपों में लोक से लेकर अभिजात वर्ग ने इसे अपनाया है। समय-समय पर अनेक आक्रांताओं विदेशी शासकों से बचने और उनसे सामना करने के लिए इस देश के पंथ, धर्म समुदायों ने भी संवाद को अपनाया। स्वतन्त्रता संग्राम के समय अनेक सभावों, 'सर फरोशी कि तमन्ना

हथियारों एवं शक्तियों का विविधत वीडियो बनाकर एक दूसरे को दिखाकर संवाद को तूल पकड़ाया जा रहा है। एकाकी परिवार से संवाद संस्कृति को अधिक संकट हुआ है जिससे संस्कार, समाज एवं राष्ट्र में अनेक बाधाएँ स्वत: उत्पन्न होती जा रहीं है। ऐसे खतरनाक मोबाइल कंप्यूटर गेम जो कि मरने के लिए विवश कर देते है।

अब हमारे दिल मैं है' या 'तुम मुझे खून दो मैं तुम्हें आजादी दूंगा' जैसे कथन देश की स्वतंत्रता के लिए अनेक युवाओं को जोड़ने का कार्य किया।

भूमंडलीकरण के इस दौर में निरंतर वैज्ञानिक विकास से सूचना एवं संवाद के माध्यमों में परिवर्तन होता जा रहा है। रैलियों , समाचारों पत्रों से होते हुए इलेक्ट्रानिक मीडिया संचार के संसाधन ने संवाद की गति को विभिन्न रूपों में विस्तार एवं प्रभाव भी छोड़ा है। संसधानों के विस्तार से ही विज्ञान के क्षेत्र में हो रहें परिवर्तन एवं भौतिक संसाधनों से हमारा परिचय तेजी से बढ़ता जा रहा है। मेलों, सिनेमाघरों,सर्कस नुक्कड़नाटको, नाटकों कलाकरों द्वारा कलाओं का प्रदर्शन तथा उसमें निहित जनसमुदाय के लिए विभिन्न संदेश से प्रेरित होते हुए, लोक ने राम, कृष्ण, हरिचंद्र, बुद्ध, श्रवण आदि जैसे महापुरुषों से नैतिकता, ईमानदारी, पितृभक्ति, कर्तव्य परायणता को समझा। मेलों में पैरों में बड़ी सी लाठी बांधकर छोटे से माइक में बोलता हुआ आदमी मुफ्त में तेल, बीड़ी, अगरबत्ती जैसे उत्पादो को बांटता हुआ चलता था जिसका मात्र उद्देश्य था उत्पादन और उभोक्ता के बीच परिचय कराना होता था। बड़े -बड़े आकर्षण पोस्टर शहरों की गलियों में घूमती बग्गी, निकलते जुलूस के माध्यम से दर्शक को सिनेमा घरों से जोड़ा जाता था। जिसमें वर्तमान समय में बड़ा ही तेजी से परिवर्तन होता जा रहा है उत्पादन को उपभोक्ता से जोड़ने के लिए पाठकों के अंदर जिज्ञास से संवाद कराता है जैसे लक्स साबुन के प्रचार शीर्षक में ही लक्स बदल गया है, जैसे शब्द से उत्पाद के नए रूप, रंग एवं गुणों से जोड़ता है। आंवला तेल का विज्ञापन का सही चीज सही दाम के माध्यम से ग्राहक के लाभ का संवाद कराता है।ऊपर वाला सब देख रहा है यह सीसीटीवी कैमरे का प्रचार है जो धार्मिक दृष्टि सा लग रहा है । आकार के लिए उम्र की कोई सीमा नहीं में छोटे से बच्चे के हाथ का आधार कार्ड यह स्पष्ट करता है कि छोटे बच्चों के लिए भी आधार कार्ड बनवानें की सुविधा है।

सिमटते घरेलू उघोग और अधिक से अधिक लोगो तक उत्पादन पहुंचाने की इस बाजारवादी मंशा के बीच मूल उद्देश्य को छोड़कर किसी एक पर ज़ोर देकर उसकी पहचान बनाने की भी होड़ सी देखने को बिगत वर्षों में तेजी से देखने को मिल रहा है जैसे ओप्पो मोबाइल फोन हो गया है सेल्फी, वीवो म्यूजिक और कैमरा फोन के नाम से पहचाना जाना जाने लगा। पतंजलि के सारे उत्पाद को शुद्ध, आयुर्वेदिक घरेलू बताकर बाजार में भ्रम को पैदा किया जा रहा है। यह सही है कि शुद्धता की मात्रा के प्रतिशत में कुछ सुधार की गुंजाइस तो हो सकती है। गांवो, नगरों, महानगरों के चौराहों , गलियों में तेज आवाज में किसी फिल्म के बजते गाने या बोलते संवाद तथा बड़े-बड़े आकर्षक पोस्टरों को देखकर सिनेमाघरों तक पहुंचता दर्शक आज के इस इलेक्ट्रानिक मीडिया के युग में अधिक सुगम होने पर भी लोकप्रियता को प्राप्त नहीं कर पा रहा है।

आज इक्कीसवीं सदी का विश्व इस बात से ही चिंतित नजर आ रहा है कि जिसके लिए हमने अनेक

आविष्कार रेडियों, टेलीविज़न, सैटेलाइट, फोन आदि का निर्माण किया जिससे संवाद को बढ़ावा मिले वह नहीं हो सका। ऊपर हमने जहां उपभोक्ता एवं उत्पादन के माध्यम से या उसके कई रूपों को देखा वहीं परिवार के स्तर पर भी इस पर विचार किया जाना आवश्यक हो जाता है निरंतर खत्म होती संस्कृति या लुप्त होती कई भाषाओं से इस बात कि अधिक पुष्टता माना जा सकता है। लगभग प्रत्येक देश अपने-आप की सुरक्षा के लिए अनेक हथियार, उपग्रहों का निर्माण क्रय-विक्रय करने में लगा हुआ है जो संवाद का नहीं शक्ति प्रदर्शन का हिस्सा बनता चला जा रहा है। हथियारों एवं शक्तियों का विविधत वीडियो बनाकर एक दूसरे को दिखाकर संवाद को तूल पकड़ाया जा रहा है। एकाकी परिवार से संवाद संस्कृति को अधिक संकट हुआ है जिससे संस्कार, समाज एवं राष्ट्र में अनेक बाधाएँ स्वत: उत्पन्न होती जा रहीं है। ऐसे खतरनाक मोबाइल कंप्यूटर गेम जो कि मरने के लिए विवश कर देते है। अपने गेम को खेलते हुआ बच्चा बगैर पूरा किए वह अपनी कुर्सी से उठना नहीं चाहता क्यों न उसे भूख लगी हो, परिवार के साथ बैठने से भी बचता है। संबंधों के महत्व एवं मानवता को तार-तार करती इलेक्ट्रानिक मीडिया में दिखाई जाने वाली या अखबारों में छपी हाल ही में किसान आंदोलन के नाम पर देश के कई जगह की घटना देखकर मन दु:खी हो जाता है साथ ही इन घाटनाओं से समाज पर भयावह चिंतन का संवाद पैदा करता है। आज शायद इस पर विचार ना करते हुए तथा कथित समाज साधु-संतो के भीड़ को देश का हिस्सा बनाकर दोषी को भीड़ के माध्यम से निर्दोष बताने का प्रयास कर रहे हैं। आज हमारा देश विश्व की सर्वाधिक युवाशक्ति वाला देश होकर भी सार्थक संवाद के अभाव में एक दूसरे को छलने में लगा हुआ दिखाई देता है जिसका मुख्य कारण बताया जा रहा है अधिक जनसंख्या, बेरोजगारी,दिखावा, महत्वाकांक्षी होना अधिक जनसंख्या को यदि इसे हम सकारात्मक रूप में देश की शक्ति मानते है तथा बेरोजगारी को अपनी कौशल को न तलाशे जाने एवं अपने –आप तक सीमित रखा जाना इसका कारण माना जा सकता है।विगत वर्ष जिस तरह पूरा विश्व वैश्विक महामारी से जूझते हुए संवाद के नए - नए तरीके ताली –थाली चाहे अपने घरों से दीपक जलाकर लोगों में आशा एवं उम्मीद के संवाद को जोड़ने का अनूठा प्रयास ही भारत की वैश्विक शक्ति एवं मानवता के रूप में देखा जा सकता है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि संवाद जीवन का महत्वपूर्ण हिस्सा है जिसके प्रभाव से सम्पूर्ण विश्व संचालित होता है उसके प्रयोग, प्रभाव एवं परिणाम के लिए आविष्कार, निर्माण की दिशा की अलग-अलग रूपों तक ले जाने का काम करते है और जहां एक बार पुन: दिखाई देता है जीवित संवाद आज।

❐❐❐

प्रधान सम्पादक के सहायतार्थ, हिंदी विश्व कोश परियोजना, केंद्रीय हिंदी संस्थान दिल्ली केंद्र, कुतुब संस्थागत एरिया, बी-26ए शहीद जीत सिंह मार्ग -16, ईमेल - merasafar.parakram@gmail.com, मो. 9039121891,9873008397

अनेक वैरायटी के मोटा भाई

–आत्माराम यादव पीव

मोटा भाई का प्रभाव जगत विदित है। कोई जगत का मोटा भाई है, कोई देश का तो कोई प्रदेश का मोटाभाई है। ऐसे ही संभाग, जिला,तहसील,गाँव, मोहल्ले ओर घर का मोटा भाई भी होता है, इस तरह कहा जा सकता है की कई प्रकार के मोटाभाई यहा मौजूद है ओर हर व्यक्ति अपने-अपने कार्य व्यवहार व अच्छी बुरी आदतों वाले मोटाभाई को जानते-पहचानते ओर उनकी मानते है। एक माँ के तीन बेटे एक ही समय जन्मे, इसलिए ये तीनों बेटे अपने को बड़ा मोटाभाई मानते है इसमें छोटा ओर मंझला मोटाभाई नहीं? ये तीनों मोटाभाई आपके यहाँ हो सकते है या मेरे यहाँ नर्मदापुरम के हो सकते है। ये तीनों सगे भाई एक ही घर में रहते हुये तीन बैरायटी के निकले जिसमें एक राजनेता है, एक शासन में उच्चाधिकारी है ओर एक पढ़ा लिखा योग्य होने पर नौकरी न मिलने पर वेरोजगारी के कलंक को अपने माथे पर उठाए इन दोनों के तलुए चाटने से लेकर इन्हे सिर पर उठाए चलने वाला इनका प्रतिनिधि बन गया है ताकि इन दोनों की पंच इंद्रियों ओर पंच विषेयन्द्रियों को स्वर्ग सा सुखानुभव कराता रहे ओर तीनों त्रिवेणी संगम जैसे घुले मिले हुये है। राजनेता को शहर के विकास की चिंता है अधिकारी चूंकि शराब विभाग का प्रमुख है उसे प्रदेश के विकास के लिए शराब से राजस्व की चिंता है ओर तीसरे भाई को न विकास से मतलब न राजस्व से, बस शराब की नदिया बहाकर वह अपने दोनों मोटाभाइयों के लिए देशविदेश की बैंकों में खाते, लाकर के अलावा हर शहर में उनके स्कूल, कालेज, अस्पताल तो हो ही वही सुखानुभव के लिए खेतों –जंगलों में खुदके रिसोर्ट हो, हर शहर में उनकी बसे-रेले चले, उनके प्लेटफार्म हो हवाई अड्डे हो इसकी चिंता में वह दिन रात घुलता रहता है ओर जितनी चापलूसी करता है उसमे वह भी परिवार सहित गंगा स्नान कर सबका मोटाभाई बना रहता है।

अब मेरे ही जिले को देख लीजिये यहाँ एक से एक मोटाभाई

सच कहा जाये तो ये अधिकारी सत्ता पक्ष की हर आदेश की पालना हेतु हुक्म के गुलाम बाँकेवीर है जो नीबू निचोड़ने आई मीन रुपया बटोरने में किसी गुरुघंटाल से कम नहीं इसीलिए इन्हे कागजी वीर कहना इनकी शान के साथ गुस्ताखी होगी, मगर ये मोटाभाई होते हुये मोटाभाई न कहलाना पसंद कर उस ठेकेदार को मोटाभाई का तमगा देना चाहते है

है हर मोटाभाई के पास कार्यकर्ताओं की बड़ी गेंग है किन्तु सभी बड़ा मोटाभाई होने की दौड़ में है इसलिए कौन बड़ा मोटाभाई है, निर्णय कर पाना मुश्किल है? यहाँ 4 विधायक 2 सांसद मोटाभाई है पर बड़ा कौन है इसका निर्णय न होने तक हम उन्हे मोटाभाई की जगह लड़ाके-बाँकेवीर कह सकते है। तो ये चार यहाँ के लड़ाके-बाँकेवीर है। आप सोचेंगे लड़ाके बांकेवीर क्यों? लड़ाके यानि लड़ने वाले, ये साम दाम भाव से पार्टी से लड़कर टिकिट लेते है ओर चुनाव में विरोधी से लड़कर जीतते है तब दंडभेद के शस्त्र से जनता को अपनी मुस्कान देते है। इनकी सिफारिश शेयर बाजार की तरह कभी आसमान छू जाती है तो कभी धड़ाम से जमीन चटा देती है, बाबजूद हर जरूरतमंद अपने पर दाव लगाकर इनकी एक बार सिफ़ारिश का स्वाद जरूर चखना चाहता है। जिसे सिफ़ारिश की जाती है वह शासन-प्रशासन खुद एक मोटाभाई है, जो हर एक आम-खास की सिफ़ारिश देख हरकत में आकार तितिर बितिर सा खूब मनमानी कर एहसान जता दोनों हाथ लूट मचाये हुये है। शराब अधिकारी अपनी मनमानी से इन लड़ाके बाँकेवीरों को खूब छका रहे है ओर ये सभी प्रदेश सरकार के मुखिया यानि इनके मोटाभाई डॉ मोहन यादव के सामने शिकायत कर रहे है। शराब अधिकारी ओर उसकी फौज ने नर्मदापुरम की गली-गली ओर हर मोहल्ले में शराब की नदिया बहा रखी है वहीं पूरे जिले में शराब की बाढ़ आई हुई है ओर हर तहसील गाँव शराबखाने से अटे नर्मदापुरम की पवित्रनगरी को अपवित्र बनाए हुये है।

सच कहा जाये तो ये अधिकारी सत्ता पक्ष की हर आदेश की पालना हेतु हुक्म के गुलाम बाँकेवीर है जो नीबू निचोड़ने आई मीन रुपया बटोरने में किसी गुरुघंटाल से कम नहीं इसीलिए इन्हे कागजी वीर कहना इनकी शान के साथ गुस्ताखी होगी, मगर ये मोटाभाई होते हुये मोटाभाई न कहलाना पसंद कर उस ठेकेदार को मोटाभाई का तमगा देना चाहते है जिनकी कंपनी का अवैध अनुचित कारोबार कर ये नोटों का अम्बार लगा उसपर बैठे है। हालांकि सभी को यह इनकी मानसिक दिवालियापन नजर आता है, पर इसी दिवालियापन के आधार पर ये सरकार ओर प्रशासन की आमदनी का दिवाला निकालते है ताकि सभी ओर पूरब से पच्छिम और पच्छिम से पूरव तक नाजायज घरेलू कारोवारियों की भट्टी शराब को चुनौती दे रही नकली अवैध शराब छककर बेची जा सके ओर शराबमाफिया के दिये गए तोहफे, घूस और चंदे के ऐसे बम के गोलों की अतिवृष्टि हो जिससे इनकी आमदनी की बाढ़ इनके घरों में नोटी के ढेरों की तबाही मचा दे जिसे देख कर इन "बाँकेवीरों की पूरी ताकत इन बम बोल, नोटों के गोलों से हिमालय सी हो जाये ओर इनपर बुरी नजर रखने वाले पत्रकारों की हवा निकलने के साथ उनकी कलम टांय टांय फिस्स हो जाए" यानि जिला शराब अधिकारी इस धूमधड़ाका से इन्हे मोटा भाई बना-बनाकर मुंड ले। इनका मुंडना आप इनकी खुशामद करना मान सकते हो तभी इन लड़ाके बांकेवीरों ओर मोटाभाई का डर किसी को नही है, जिला प्रशासन का पूरा महकमा इनकी शरण लिए दिखाई देता है पर ये जिला प्रशासन की शरण में साष्टांग दंडवत है।

त्रैलोक्य में प्रभुत्व जमाने के लिए सभी अपने अपने प्रभु को याद करने से पूर्व रोज सुबह नहाने से

पहले टट्टी कर हल्के होते है। फिर जिसका जैसा कर्म होता है वैसे ही उस क्षेत्र में सफलता की प्रार्थना अपने-अपने कुलदेवता देवी से की जाती है। जो पथ्यगामी है वह पथ्य के लिए ओर जो कुपथ्यगामी है वह कुपथ्य के लिए सफलता चाहता है, ओर आनंद की बात है कि उनकी सुनी भी जाती है। यानि देवी देवता उनके प्रबल प्रताप को बनाए रखते है ताकि दीन दुखी जनता के काम कराने के लिए ये चतुराई से उनका धन भी अपनी जेब मे पाकर उनका वजन हल्का कर सके/ इन प्रतिनिधियों की नित्य प्रार्थना होती है कि हमारे शहर में जानलेवा बीमारी आए ओर सभी को यह बीमारी घेर ले ओर ये लोग गंभीर बीमारी के शिकार हो तो इन्हे मौत का भय बता लड़ाके बांकेवीरों से स्वास्थ्य लाभ की खुरचन दिला अपना कमीशन ओर जीविका बचाए रखे। अधिकांश अस्पताल ओर डाक्टर रोग ठीक करने के लिए नहीं बल्कि रोगी बनाए रख इस से रोगी ओर सरकारी योजना की राशि हजम कर समाजसेवी बने है ओर जिस समाज को रोगी बनाए रखे है उससे समाजसेवा के बदले अपना ही नही अपितु बांकेवीर मोटाभाइयों का भी सम्मान कर नहीं अघाते है।

अब थोड़ा जिले के शराब अधिकारी/मोटी रकम बटोरने/बांटने वाले की बात कर ले, उनकी मेहरवानी से पवित्रनगरी कि नालियों में, बीच सड़क पर कुछ लोग इतने टुन्न पड़े दिख जाते है की कुत्ता उनका मुँह चाटे या उनके मुह में टांग उठाकर मूते, वे उसे भगाने तक की ताकत नहीं रखते ओर अच्छेखासे लाटसाहब ही शराब में डूबे हुए मिलते है। इन्हे अपना होश तक नहीं रहता बस शराब ही इनकी जिदगी होती है जिसके नशे के कारण सभी प्रकार की तकलीफ उठाना उसे मजे का नाम देकर पड़े हुये हाथ-पैर हिलाना तक अच्छा नहीं लगता है। इनके लिए तब ऐसे हालत बन जाते है की ये मरे के समान लाश बने पड़े रहते है जहां इनके लिए उठकर घर तक जाना अच्छा नहीं लगता ओर नाली/सड़क को ही वह विस्तर समझ कपड़े पहने है या नहीं यह तक भान न रखकर पड़े रहते है। शराब से होने वाले इस कुप्रभाव पर शराब अधिकारी मदिरा/ शराब के दो स्वरूप दिखाई देते है, एक आध्यात्मिक और एक आधि- मौलिक, जो लोक में अज्ञान और अँधेरे के नाम से प्रसिद्ध है। दो मोटाभाइयों के सगे होने पर जिला शराब अधिकारी धर्मकर्म को मानते है ओर अपना ज्ञान बघारते हुये कहते है की मूर्ख लोग जिसे शराब कहते है असल वह मदिरा है ओर वह बुरी नहीं है लेकिन पीने वालों को जब अपच हो जाती है ओर वे सड़क या नालीगामी हो जाते है तो बेचने वालों को बदनाम करते है। पीने बालों को निमंत्रण नहीं देते बिना बुलाये पीने आ जाए ओर खुराक से ज्यादा पी ले तो हम क्या करे? ये तो पीने वाले को देखना था की उसे कितनी पीना है, खामोखा ज्यादा पीकर टुन्न हो लुड़क जाते है।

मदिरा असल में भगवान सोम की कन्या है जिसे वेदों में आदर देकर मधु नाम दिया है। देवताओ की प्रिया होने से मधु सुरा कहलाई और जिन सुसुरों को अपच हो गई तो उन्होने उसे सुरा से शराब कहना शुरू कर दिया जबकि साहित्य में हरिवंशराय बच्चन ने इसे शराब नही होने दी ओर इसकी पवित्रता को बनाए रख मधु नाम से सम्मान दे मधुशाला लिखी। कहा जा सकता है कि काव्य मंचों पर कवियों की प्रिय तथा संगीत साहित्य की जननी यही मदिरा होती है जिसे ग्रहण कर भला कोई सोम की पुत्री मदिरा जो सोमरस

भी कहलाती है को अशुद्ध कहकर देवताओं से दुश्मनी मोल ले? यह मदिरा राज्य सरकार के लिए कीमती रत्न है जो सरकार के खजाने में सर्वाधिक धन की बढ़ोत्तरी करती है, फिर कौन मोटाभाई होगा जो धन से इंकार करे। इसलिए मदिरा सबको प्रिय है कोई इसके विमुख नहीं है, प्रमाण चाहिए तो किसी सुरापान अर्थात शराबी से पूछिये जब उसके हलक के नीचे यह उतरती है तो भूतनी भी उसे परी से कम नजर नहीं आती है ओर पत्नी में भूत देख वह थर थर कांपने लगता है ओर तो ओर बूढ़ी उसे कमसिन दिखाई देती है तथा कुत्ते, बिल्ली, हाथी, मच्छर के प्रति भी उसमें सम्मान जाग जाता है।

अपनी बात समाप्त करने से पहले पाठको को अवगत करना चाहूँगा कि परब्रह्म बिना हाथो के काम करता है, बिना पैरो के चलता है, बिना आंखो के देखता है, इस दृष्टि से इन मोटाभाइयों का सारा काम इसके विपरीत होता है ओर ये हाथों में शस्त्र लिए, पैरों में नतमस्तक हुये तथा आँखों में शर्मिंदगी के बादलों से अनावृष्टि कर चलता है। खुशामद के पानी से नहाना इनकी फितरत है, इसलिए खुशामदी इनके परम भक्त है। जहां तक खुशामद करने की बात है, तो हमें ये किसी ने सिखाया नही ओर न हमने सीखा। इसलिए इन लड़ाके बाँकेवीरों/मोटाभाइयों की खुशामद हमने आज तक नही की, पर इतना अवश्य है कि इन बाँकेवीरों की राजनीति के खेतों में फलने फूलने वाली विषैले कुमार्गी बीजों की फसलें उगने नही दी है। इनके राजनैतिक खेतों में अक्सर सामाजिक अस्त्र-शस्त्र जिसमें फूटडालना, डाह करना अर्थात ईर्ष्या-जलन, द्वेष-द्रोह, लोभ, भय, उपेक्षा, स्वार्थपरता, पक्षपात, हठ, शोक, अभिमार्जन और निर्बलता का प्रकटीकरण या छिपाव के बीज हुआ करते है जिसे इनके चाल चलन व्यवहार खाने पीने में देखकर सुनकर अलग- अलग शब्दों से इनका नीबू निचोड़ने का काम अपनी कलम से जरूर करता रहा हूँ।

हा अगर इनके सद्गुण, सामाजिक सद्भाव या जनहित की इनकी उपलब्धि रही है तो इन्हे जगजाहिर कर इनकी आत्मीयता को झूले में प्रतिष्ठित कर पालना झुलाने में कभी भी झिझक अथवा परहेज नहीं किया है। इन लड़ाके बांकेवीरों के पास धन, बल ओर दिमाग तीनों है ओर इनकी अपनी-अपनी फौज है ओर सेनापति है जिसे आमबोलचाल की भाषा में फौज को कर्मठ कार्यकर्ता ओर सेनापति को सांसद प्रतिनिधि ओर विधायक प्रतिनिधि कहा जा सकता है। ये सभी तथाकथित प्रतिनिधि धन, बल, दिमाग के साथ इन लड़ाके बाँकेवीरों का बल भी रखते है, इन्हे किसी कि परवाह नही रहती है ये जब चाहे, जिसे चाहे जहां चाहे, जैसे चाहे वैसे सपराने में होशियार होते है ओर जिसे सपराते है उसे पता भी नहीं चलता कि कपड़े पहने सपरे थे कि बिना कपड़े ही सपरा अर्थात नहला दिये गए। एक माँ के इन तीन मोटाभाइयों के किस्से अनेक है जिनके दम पर अनेक प्रकार के मोटाभाई जिंदा है, जिसपर आगे भी चिंतन जारी रहेगा।

❐❐❐

1. श्रीजगन्नाथधाम, काली मंदिर के पीछे, ग्वालटोली, नर्मदापुरम मध्यप्रदेश मोबाइल 9993376616

उजाले की ओर

–मनोज कुमार 'शिव'

यह कस्बा अभी शहरीकरण के रंग में इतना नहीं रंगा है। यहां एक सरकारी स्कूल ,एक प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र, एक डाकघर व 25- 30 दुकानें हैं। इस क्षेत्र में एक ही बैंक है।यहां लगभग गांव का सा माहौल है । पिछले प्रबंधक महोदय की बहुत से लोग तारीफ करते हैं। उनके साथ वहां के ग्रामीण बहुत अच्छे से घुल मिल गए थे ।

आज सोमवार है। दो दिन के अवकाश के बाद आज बैंक शाखा में ग्राहकों की काफी भीड़ जमा हुई है। महीने का पहला सप्ताह होने की वजह से मासिक पेंशन धारक यानि वरिष्ठ नागरिक भी काफी संख्या में आए हैं। कैशियर केबिन के सामने दो पंक्तियों में खड़े ग्राहक पैसों का लेनदेन कर रहे हैं। पंक्ति के नियम को तोड़ने वाले ग्राहकों को कैशियर ऊंची आवाज में डांट भी रहा है। नेकटाई और गले में आइडेंटिटी कार्ड लटकाए बैंक स्टाफ के दो अधिकारी अपने समक्ष बैठे ग्राहकों को फिक्स डिपाजिट, म्युचुअल फंड व ऋण आदि योजनाओं के बारे में बता रहे हैं। चपड़ासी स्टाफ के लिए चाय पानी लाने व फाइलों को इधर-उधर ले जाने में व्यस्त है।

बैंक शाखा कस्बे की एक तिमंजिला इमारत के भूतल में है। शाखा की सुरक्षा के लिए दो-दो गेट लगे हैं। कैंची गेट के साथ अंदर की तरफ एल्युमिनियम का गेट हॉल में खुलता है। हॉल की दाईं तरफ कैशियर केबिन है जिसमें प्रवेश के लिए उसी केबिन की पिछली तरफ से एक दरवाज़ा है। एक तरफ़ दीवार से सटे इस केबिन का दो तरफ का हिस्सा ज़मीन से लगभग तीन फुट तक लकड़ी व उसके ऊपर का मोटे व मजबूत पारदर्शी कांच से बना है। सामने की तरफ को केबिन में एक झरोखा है जिससे ग्राहकों के साथ पैसों का लेनदेन किया जाता है।

हॉल के दाएं तरफ को शाखा प्रबंधक का केबिन है। इस केबिन के साथ में लोहे की बड़ी-बड़ी अलमारियां लगी है जिनमें संभवतः जरूरी दस्तावेज रखे गए होंगे। दीवारों पर वर्तमान में चल रहे सावधि जमा खातों पर ब्याज दरों को प्रदर्शित करने वाले लुभावने पोस्टर लगे हैं। एक जगह दुर्घटनाग्रस्त हुए बीमित व्यक्तियों के परिजनों को मिली हुई क्लेम राशि के चेक के साथ स्टाफ की फोटो लगी हैं। किसी आगजनी की घटना के रोकथाम हेतु हर दीवार पर अग्निशमन यंत्र लटका कर रखे गए हैं। ग्राहकों

की हल्की-फुल्की बातचीत से ज्यादा पासबुक प्रिंटर बैंक की किसी अमुक भाषा में कोई गीत गाकर उस परिसर को गुंजायमान कर रहे हैं। आज ग्राहकों में एक अजीब सी उत्सुकता है सभी की निगाहें टुकुर-टुकुर कर प्रबंधक महोदय के केबिन की तरफ जा रही है।

दरअसल पिछले हफ्ते ही तीन वर्षों से इस शाखा में अपनी सेवाएं दे रहे प्रबंधक महोदय श्रीमान उपाध्याय किसी दूसरी शाखा में स्थानांतरित हुए हैं। उनकी जगह उस शाखा का प्रबंधन कार्य संभाला है पदोन्नत होकर आई शिवांगी मिश्रा ने। अपने नए प्रबंधक को देखने का कौतुहल सभी ग्राहकों के मन में है।

यह कस्बा अभी शहरीकरण के रंग में इतना नहीं रंगा है। यहां एक सरकारी स्कूल ,एक प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र, एक डाकघर व 25- 30 दुकानें हैं। इस क्षेत्र में एक ही बैंक है।यहां लगभग गांव का सा माहौल है। पिछले प्रबंधक महोदय की बहुत से लोग तारीफ करते हैं। उनके साथ वहां के ग्रामीण बहुत अच्छे से घुल मिल गए थे। अगर किसी किसान के घर गाय बछड़े को जन्म देती तो वे ताज़ा दूध लाकर प्रबंधक महोदय को यह कह कर जबरदस्ती थमा जाते कि आप भी तो हमारी सेवा ही कर रहे हो। किसी के बगीचे में अगर आम ,आड़ू, खुमानी की फसल पकती तो प्रबंधक महोदय के शाखा में पहुंचने से पहले ही उनकी टेबल पर खुशबूदार फल अपनी महक बिखेर रहे होते। मानो यह महक उन फलों की नहीं बल्कि प्रबंधक महोदय के उन ग्रामीणों के साथ मधुर संबंधों की हो। शादी ,विवाह तो छोड़िए लोग उन्हें अपने बच्चों के मुंडन व गृह प्रवेश आदि के मौकों पर भी सपरिवार आमंत्रित करते। इसे ग्रामीणों का आतिथ्य भाव कहिए या प्रबंधक महोदय का उदारतावादी चरित्र लेकिन लोग उन्हें आज ही याद करते हैं।

शिवांगी को यहां आए अभी ज्यादा वक्त नहीं हुआ है। उसने यहां की भौगोलिक व आर्थिक परिस्थितियों और शाखा के माहौल को समझने की पूरी कोशिश की है। शिवांगी के अंदर कुछ कर गुजरने का जबरदस्त माद्दा है। पदोन्नति के बाद उसके उत्साह में और भी बढ़ोतरी हुई है। छब्बीस वर्षीय शिवांगी ने अभी तक की अपनी यह सफलता कड़ी मेहनत व बेहद प्रतिकूल हालातों में संघर्ष के बल पर प्राप्त की है। शिवांगी का जन्म गरीब परिवार में हुआ था। गांव आर्थिक व विकास की दृष्टि से पिछड़ा हुआ था। उच्च शिक्षा प्राप्त करने का प्रचलन गांव में नहीं था। शिवांगी ने दसवीं कक्षा तक की परीक्षा अपने गांव की विद्यालय से प्राप्त की। उसके बाबा उसे आगे पढ़ाने में बिल्कुल भी इच्छुक नहीं थे। दिहाड़ी मजदूरी से प्राप्त पैसों से गृहस्थी बमुश्किल चल पा रही थी और ऊपर से बाबा की गांजा शराब की बढ़ती लत। शिवांगी की आगे की पढ़ाई के लिए होने वाले जरूरी खर्चों के बजाय उन्होंने स्वंय का शराब के नशे में धुत रहना चुना था। ऐसा नहीं था कि शिवांगी व उसकी मां ने विरोध नहीं किया था लेकिन बाबा के कान पर कभी जूं तक नहीं रेंगी। कहते हैं नशा पहले व्यक्ति के विवेक को खा जाता है।

नशा जब सर चढ़कर बोलने लगा तो परिवार में अशांति और कलह और बढ़ती गई। देखते ही देखते परिस्थितियां प्रतिकूल होने लगीं। शिवांगी के बाबा छोटी-छोटी बातों को लेकर उसकी मां की बेवजह पिटाई कर दिया करते थे। एक बार शिवांगी ने मां को बचाने की कोशिश की तो उसे भी एक जोरदार थप्पड़ रसीद कर दिया

गया । उसे उसकी पढ़ाई बंद करने की धमकी दी गई। पंचायत से समाधान निकालने की नाकाम कोशिशें हुई । अंततः शिवांगी की मां ने अपने व बेटी के गुजारे के लिए मेहनत मजदूरी करना शुरू कर दिया । मेहनत से प्राप्त पैसों को छुपा कर रखती । कई दफा पैसे बाबा के हाथ लगते तो वो उन पैसों को मांस मदिरा में उड़ा देता। अपने नशेड़ी दोस्तों के साथ बेसुध पड़ा रहता । दो-दो दिन तक घर नहीं आता।

एक बार शाम को शिवांगी के बाबा शराब के नशे में धुत्त होकर घर आए। उन्होंने आते ही गाली गलौच करना शुरू कर दिया। दरअसल उन्हें अपनी पत्नी का आत्मनिर्भर होना बिल्कुल नहीं सुहा रहा था । उसने शराब के नशे में चूल्हे पर खाना बना रही पत्नी पर एक जलती लकड़ी से वार किया। बेचारी पत्नी आग की दाह से चिल्लाने लगी। रसोईघर से मां की आवाज़ सुनकर शिवांगी दौड़ी आई और बड़ी बहादुरी से अपने बाबा के हाथों से जलती लकड़ी को छीन कर दूर फेंक दिया व अपनी मां के साथ बाहर भाग गई । थोड़ी देर में पड़ोसी भी आंगन में जमा हो गए थे।

हमेशा गुमसुम व संकोची स्वभाव की शिवांगी ने पहली बार अपने बाबा का इस कदर विरोध किया था या यूं कहें कि अपना पक्ष जोरदार तरीके से रखा था। शिवांगी ने अपने बाबा को दो टूक कह दिया था कि आज के बाद कभी मां पर हाथ उठाया तो पुलिस थाने में जाकर शिकायत कर देगी। रही बात उसकी पढ़ाई की तो आगे की पढ़ाई वह अपने व अपनी मां की मेहनत से पूरा करेगी।

बाबा को इस तरह के प्रत्युत्तर की बिल्कुल भी उम्मीद नहीं थी । उसके बाद बाबा के व्यवहार में थोड़ा बदलाव यह आया कि वह गाली-गलौच व मारपीट नहीं करता था। शिवांगी ने गांव के बच्चों को समय निकाल कर ट्यूशन पढ़ाया और उन पैसों से अपनी आगामी पढ़ाई व प्रतियोगी परीक्षाओं में आवेदन करती रही। उसकी कड़ी मेहनत रंग लाई और आज बैंक में पांच वर्ष की नौकरी करने के बाद वह पदोन्नत होकर शाखा प्रबंधक के पद पर है ।

शिवांगी ने जीवन को एक चुनौती के रूप में लिया है। उसमें हर मुश्किल परिस्थिति में खुद को बाहर निकालने का अद्भुत साहस है। तभी तो अपने छोटे से कार्यकाल में वह आज इस मुकाम पर पहुंची है जहां पहुंचने में लोगों को अपनी जिंदगी के कई बेशकीमती वर्ष खर्च करने पड़ते हैं । बैंक शाखा में शिवांगी दिन में दो-तीन बार हर सहकर्मी के पास जाकर उनसे कार्य के बारे में बातचीत करती व कार्य में आ रही किसी भी परेशानी के बारे में अवश्य पूछती।

बैंक की हायर अथॉरिटी के द्वारा दिए जाने वाले त्रैमासिक बजट टारगेट्स को शिवांगी बड़ी कुशलता व सूझबूझ के साथ अपने सहकर्मियों के सहयोग से पूरा कर लेती। एक कुशल नेतृत्व तले बैंक शाखा प्रगति की राह पर बढ़ने लगी ।

यह कस्बा आसपास की पांच सात पंचायतों का सामूहिक व्यवसाय केंद्र भी है। यहां के ज्यादातर लोग ग्रामीण परिवेश के हैं ।पशुपालन , दुग्ध उत्पादन ,रेशम पालन आदि मुख्य व्यवसाय है । कई लोग सरकारी नौकरियों में कार्यरत भी है । भौगोलिक रूप से पहाड़ों की गोद में बसा यह गांव बरबस ही किसी भी प्रकृति प्रेमी को अपनी ओर आकर्षित करता है । सर्दियों में पहाड़ बर्फ की चादर ओढ़ लेते । हालांकि इस बार उतनी बर्फबारी नहीं हुई है ।

लगभग सर्दियों की विदाई का समय है। मार्च महीने की शुरुआत हो चुकी है। इसी माह महिला दिवस भी मनाया जाना है। बैंक के उच्च अधिकारियों ने इस खास मौके पर महिला ग्राहकों को अपनी लुभावनी योजनाओं से आकर्षित करने की कोशिश की है। महिला ग्राहकों को सावधि जमा योजना पर थोड़ा ज्यादा ब्याज दर व ऋण खातों पर सस्ती दर पर ब्याज की सुविधा दी जा रही है।

इस मौके पर शिवांगी व उनके स्टाफ ने गांव गांव जाकर महिलाओं को बचत खाता, सीमावधि खाता खुलवाने व सामाजिक सुरक्षा योजनाओं में शामिल होने के लिए प्रोत्साहित किया। उनके इन प्रयासों का परिणाम भी देखने को मिला जब अगले ही दिन महिलाएं बचत खाता खुलवाने बैंक शाखा पहुंच गई।

महिलाओं को आर्थिक तौर पर सशक्त और आत्मनिर्भर बनाने के लिए स्वयं सहायता समूह के गठन की मुहिम चलाई गई। शिवांगी अपने एक सहकर्मी के साथ गांव गांव जाकर महिलाओं को स्वयं सहायता समूह के बारे में अवगत कराती। उन्हें उनके द्वारा बनाए जाने वाले उत्पादों जैसे अचार, मुरब्बा ,जूस आदि व सिलाई, कढ़ाई , बुनाई से तैयार उत्पादों को बढ़िया दामों में बेच कर आमदनी बढ़ाने की सलाह देती। स्वयं सहायता समूह के द्वारा एकजुट हुई महिलाएं इस तरह अपने थोड़े-थोड़े पैसों को बचाकर किसी आपातकाल स्थिति में भी प्रयोग कर सकती थीं।

शिवांगी बैंक से पैदल चल गांव गांव जाकर मेहनत कर रही थी। सहकर्मी भी उसका पूरा साथ दे रहे थे। एक ऐसे ही विजिट के दौरान एक दिन वे पहाड़ी पर बसे एक गांव काली टिब्बा पहुंचे थे। यहां से तलहटी में बसा कस्बा साफ नजर आ रहा था। इस गांव का नाम इसलिए काली टिब्बा पड़ा क्योंकि यहां मां काली का एक भव्य मंदिर है। शिवांगी ने मंदिर में जाकर मां काली के दर्शन किए।लगभग 10 फुट ऊंची मां काली की रौद्ररूप धारण किए हुए मूर्ति मंदिर के गर्भ गृह में स्थापित थी। मंदिर के प्रांगण में ही ग्रामीण महिलाओं को बुलाया गया था। शिवांगी ने बैंक में खाता खुलवाने और दूसरी बहुत सी योजनाओं का लाभ उठाने की बात कही।

' देखिए अगर आप 10- 12 महिलाएं मिलकर अपना एक समूह बनाती है व सुनिश्चित तरीके से थोड़ा थोड़ा पैसा बचाती है तो बैंक आपको आर्थिक रूप से और मजबूत बनाने में मदद करेगा।' शिवांगी ने महिलाओं को संबोधित करते हुए कहा।

' आप में से बहुत सी महिलाएं अच्छा सिलाई ,बुनाई करती होंगी। अचार ,मुरब्बा बनाती होंगी। आप अपनी प्रतिभा का प्रयोग कर गुणवत्ता से भरपूर उत्पाद बनाइए और उन्हें बढ़िया बाजारों में ले जाकर पैसा कमाइए। इस तरह से आप आत्मनिर्भर तो होंगी ही आपको किसी से पैसा भी नहीं मांगना पड़ेगा।'

शिवांगी की ये बात सुनकर कुछ महिलाओं के चेहरों पर चमक आई तो कुछ ने अपने-अपने चेहरे शर्म से छुपा लिए। कुछ पुरुषों में हल्की खुसर फुसर सुनने को मिली। 'तो आप आओगे ना बैंक में अपनी महिला सदस्यों को लेकर ' शिवांगी ने सामने बैठी महिलाओं से पूछा। त्वरित प्रतिक्रिया न मिलने के बावजूद दो महिलाओं ने हाथ उठाकर अपनी सहमति प्रकट की। ये दो महिलाएं थी रक्षा और अंजना।

एक व्यक्ति की सफलता उसके जीवन के विभिन्न घटकों के बीच सही सामंजस्य बैठने पर निर्भर करती है। शिवांगी की दफ्तरी जिंदगी तो अच्छी चल रही थी वह घर पर मां से फोन के माध्यम से जुड़ी रहती। मां भी अपनी सफल बेटी के ऊपर गर्व महसूस करती थी। मां बेटी दोनों ने एक साथ मिलकर प्रतिकूल हालातों का डटकर सामना किया था।

अगले दिन जब कार्यालय में काम शुरू हुआ तो थोड़ी देर में ही दस-बारह महिलाएं शिवांगी के पास पहुंच गई। शिवांगी ने उन्हें अपने-अपने बचत खाता खुलवाने के साथ साथ स्वयं सहायता समूह का खाता खुलवाने की बात की। आपसी सहमति से समूह का नाम मां काली टिब्बा स्वयं सहायता समूह रखा गया। इस समूह की प्रधान रक्षा और सचिव अंजना को सर्वसम्मति से बनाया गया। वे दोनों पढ़ी-लिखी तो थी ही जागरूक और समूह के सभी सदस्यों की विश्वास पात्र भी थी। दोनों ने समूह के सदस्यों के खाते व समूह का खाता खुलवाने की प्रक्रिया शुरू कर दी।

उन्होंने हर महीने थोड़ा-थोड़ा बचत करना भी शुरू कर दिया। रक्षा ने एक दो बार शाखा में आकर शिवांगी से समूह के विकास और भविष्य की योजनाओं के बारे में विचार विमर्श किया। वह समूह की बाकी महिलाओं के साथ मिलकर कस्बे में एक सिलाई दुकान खोलना चाहती थी। सुबह-शाम अपने घर के कामों को निपटाकर वो दोपहर का समय सिलाई में लगाना चाहती थी। इससे समय का सदुपयोग तो होगा ही साथ में आमदनी भी बढ़ेगी। अपने सामूहिक प्रयासों से उन्होंने समूह के बचत खाते में काफी धनराशि जुटा ली थी बाकी का जरूरी पैसा समूह खाते पर ऋण लेकर प्राप्त किया जाना था। शिवांगी ने महसूस किया कि उन महिलाओं के चेहरों पर अपने ख्वाबों को पूरा होने की खुशी साफ झलक रही थी। रक्षा और अंजना ने अपने समूह में जान फूंक दी थी। उनसे प्रेरित होकर इलाके की और महिलाओं ने भी स्वयं सहायता समूह में अपने दिलचस्पी दिखाई।

रक्षा और अंजना संग समूह के सदस्यों ने अपनी सिलाई दुकान का उद्घाटन शिवांगी के हाथों करवाने की योजना बनाई। सभी ने मिलकर एक दिन चुना। उस दिन सभी सदस्यों ने मिलकर शिवांगी को स्टाफ सहित कुछ समय के लिए दुकान पर बुलाया। शिवांगी ने रिबन काटकर दुकान का उद्घाटन किया। मानो वो रिबन न हो उन सभी ग्रामीण महिलाओं के जीवन में विद्यमान आर्थिक मजबूरियों की बेड़ियां हो जिससे उन्हें अब मुक्ति मिल गई हो।

शिवांगी ने सभी सदस्यों की मेहनत और उत्साह को देखकर उन्हें ढाई लाख रुपये का ऋण स्वीकृत कर दिया। एक दिन बाजार से गुजरते हुए शिवांगी ने देखा कि मां काली टेलरिंग शॉप में महिलाओं की काफी भीड़ लगी थी। रक्षा और अंजना अपने ग्राहकों को सेवाएं देने में व्यस्त थी। शिवांगी को यह देखकर अच्छा लगा कि उन लोगों के द्वारा ऋण राशि का सही प्रयोग किया जा रहा था। उन महिलाओं को देखकर शिवांगी मां के साथ बिताए उन संघर्ष भरे दिनों को याद करती है जब उसकी मां कभी दिहाड़ी मजदूरी करती थी तो कभी लोगों के घरों में जूठे बर्तन साफ करती और स्वयं वो गांव के बच्चों को ट्यूशन पढ़ाती थी। दोनों की कमाई से घर का खर्च और उसकी पढ़ाई चल पा रही थी। बाबा ने तो खुद को नशे में ही डुबो दिया था। शिवांगी को आज भी वो दिन नहीं भूलते जब वह छोटी

थी और बाबा शराब के नशे में झूमते आते और गाली गलौच के साथ मां के साथ बेवजह मारपीट शुरू कर देते।

पहाड़ों पर अब धीरे-धीरे गर्मियां दस्तक देने लगी थी। दिन को धूप खूब चमकती लेकिन सुबह और शाम अभी भी सर्दी के आगोश से पूरी तरह बाहर नहीं आए थे। रातों में हल्का-हल्का बदलाव देखने को मिल रहा था। एक दिन शिवांगी ऑफिस में व्यस्त थी तभी उसने कार्यालय की मेल पर प्रधान कार्यालय द्वारा भेजी इरेगुलर एकाउंट्स की लिस्ट देखी। उसे बाकी अकाउंट्स को देखकर इतना अचंभा नहीं हुआ जितना मां काली टेलरिंग समूह को देखकर हुआ।

जब सिस्टम पर खाता चेक किया तो पाया कि पिछले तीन महीनों में समूह द्वारा बहुत कम रुपए जमा किए गए थे। यानी मूल राशि पर लगने वाला मासिक ब्याज भी चुकाया नहीं गया था। शिवांगी ने सोचा कि शायद आजकल ग्राहक कम मिल रहे होंगे। एक शाम को बाजार में थोड़ी शॉपिंग करते हुए अचानक शिवांगी ने समूह की प्रधान रक्षा को देखा।

'नमस्ते मैडम!' रक्षा ने सकपकाते हुए दुपट्टा अपने सर पर कुछ ज्यादा ही आगे लगाते हुए कहा।

' नमस्ते रक्षा जी! कैसी हो ? आपका काम कैसा चल रहा है ?' शिवांगी ने पूछा।

' मैडम जी! काम ठीक चल रहा है... बस....' रक्षा ने थोड़ा हिचकिचाते हुए कहा मानो यह शब्द जबरदस्ती उसके मुंह से उगलवाए गए हों।

' ऋण खाते में पैसे जमा नहीं किए आपने पिछले तीन महीनों में...! उसमें पैसे डाल दीजिएगा!' शिवांगी ने कहा।

शिवांगी ने नोटिस किया की रक्षा की दाई आंख के पास एक बड़ा नीला निशान पड़ा हुआ था। दोनों आंखों के नीचे काले घेरे थे। उसे ये सब देखकर बड़ा अचरज हुआ। वह चाहती थी कि थोड़ी और बातचीत करके पूरा माजरा समझ लिया जाए लेकिन रक्षा शायद जल्दी में थी ' ठीक है मैडम... मैं चलती हूं ...' यह कहते हुए रक्षा अपने रस्ते निकल गई।

शिवांगी के मन में परेशानी बनी रही कि आखिर हो न हो कुछ तो दाल में काला है। अगले ही दिन अपने एक सहयोगी के साथ शिवांगी मां काली टेलरिंग शॉप पहुंच गई। वहां अंजना मौजूद थी। अंजना से बात करने पर पता चला की रक्षा आजकल दुकान पर नहीं आ रही थी। कुछ परेशान लग रही है मगर पूछने पर कारण भी नहीं बताती। जिस वजह से ग्राहक भी ज्यादा नहीं आ रहे हैं क्योंकि रक्षा का काम बहुत अच्छा है।

शिवांगी आज अधूरे मन से ऑफिस गई। ऑफिस पहुंचकर भी उसका ध्यान रक्षा की ओर ही लगा रहा। शाम को ऑफिस से लगभग 6:00 बजे छूटने पर वह सीधा रक्षा के घर की तरफ निकल पड़ी। आकाश बादलों से भरा हुआ था। उमड़ कर आई काली-काली घटाओं से मानो जल्दी ही अंधेरा होने को था। शिवांगी तेज कदमों के साथ रक्षा के घर की तरफ बढ़ रही थी। उसके कदमों में मानो अद्भुत ताकत का समावेश हो चुका था। उसका मन

जवां होती शाम का भय त्याग कर रक्षा की स्थिति जानने को उद्विग्न था। शिवांगी काली टिब्बा गांव पहुंच चुकी थी। काली घटाओं के साथ तेज़ हवाओं ने अब मोर्चा संभाल लिया था। गांव के मुहाने पर एक महिला से पूछने पर पता चला कि तीन घर छोड़कर रक्षा का ही घर है।मौसम बिगड़ने से बिजली कभी आती कभी जाती रही थी।

शिवांगी रक्षा के घर के बिल्कुल पास पहुंच चुकी थी। तभी सामने वाले घर से किसी के चींखने चिल्लाने की आवाज़ें सुनाई दी। बर्तनों को फर्श पर पटकने की आवाज़ें,गाली गलौच,अभद्र भाषा का प्रयोग करते हुए अश्लील शब्द सुनाई दिए। शिवांगी की उत्सुकता और बढ़ गई थी। उसके कदम और तेजी से आगे बढ़ने लगे थे। अब चींखें और भी स्पष्ट सुनाई दे रही थी। शिवांगी ने एक अधखुले दरवाजे को जोर से धक्का दिया। अचानक बत्ती चली गई। यकायक आसमान में बहुत तेज बिजली चमकी। खिड़कियों के कांच से ज्यों ही प्रकाश ने कमरे में प्रवेश किया भीतर का सारा मंज़र स्पष्ट हो गया। रक्षा का पति शराब के नशे में धुत्त होकर एक लाठी से उसे पीट रहा था। उसके दूसरे हाथ में देसी शराब की बोतल थी। शिवांगी को अपने बचपन की उन घृणित स्मृतियों का स्मरण हो आया जब उसके बाबा भी इसी तरह नशे में धुत्त होकर उनके साथ मारपीट किया करते थे।

शिवांगी के अचानक और अप्रत्याशित प्रवेश से रक्षा का शराबी पति भौचक्का रह गया। शिवांगी की आंखों से मानो अंगारे बरस रहे हों। वह ज़ोरदार व जोश से भरी एक अस्पष्ट आवाज़ करती हुई उसके ठीक सामने पहुंच चुकी थी। शिवांगी को इस रौद्र रूप में अपने सामने खड़ा देखकर वह मानो पत्थर का बन गया। फर्श पर दर्द से कराहती हुई रक्षा अब खड़ी हो गई थी। शिवांगी ने एक जोरदार झटके से रक्षा के पति के हाथ से लाठी को छीना और बिना वक्त गंवाए उसके दूसरे हाथ में पकड़ी हुई शराब की बोतल पर प्रहार किया। बोतल फर्श पर जा गिरी। शिवांगी ने गुस्से में आकर वह बोतल उठाई और खुली खिड़की से आंगन की तरफ उछाल दी। आंगन में किसी पत्थर से टकराने पर बोतल के चकनाचूर होने की आवाज़ साफ सुना आई दी।

'अगर पीने का इतना ही शौक है तो अपनी कमाई से क्यों नहीं पीते ??? एक महिला की कमाई से शराब उड़ाते हुए तुम्हें शर्म नहीं आती???? बुजदिल इंसान .... क्या इसी में है तुम्हारी मर्दानगी ... '

शिवांगी के इन शब्दों को सुनकर मानो उसका नशा छूमंतर हो गया। शिवांगी ने हाथ में पकड़ी लाठी को एक झटके के साथ कोने की तरफ फेंक दिया और रक्षा को गले से लगा लिया।

' खुद की रक्षा खुद करना सीखो रक्षा ! तुम्हें हर बार बचाने कोई नहीं आएगा !!'

' जी मैडम!' सुबकती हुई रक्षा बोली।

उसका पति शर्म के मारे धीरे-धीरे कमरे से बाहर चला गया। एक जोरदार गर्जना के साथ तेज बारिश शुरू हो चुकी थी।

❐❐❐

अनुवाद के साहित्यिक, सांस्कृतिक और अन्य संदर्भ

–डॉ. हरप्रीत कौर

बीसवीं सदी को अक्सर अनुवाद का युग कहा गया है, क्योंकि इस समय ज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों में पुस्तकों का बड़े पैमाने पर अनुवाद किया गया, जिससे नई-नई विधाओं का निर्माण और पुनर्निर्माण हुआ। अनुवाद की जड़ें, हालांकि, बहुत पुरानी हैं। कुछ विद्वान प्राचीन मिस्र के द्विभाषी शिलालेखों, ग्रीक-रोमन अनुवादों, और बारहवीं सदी में स्पेन में इस्लामी प्रभाव के तहत अरबी से यूरोपीय भाषाओं में अनुवाद का उदाहरण देते हैं। उदाहरण के तौर पर, असीरिया के राजा सरगोन ने अपनी विजय घोषणाओं का अनुवाद विभिन्न भाषाओं में करवाया था, और हम्मूराबी ने भी अपने समय के सरकारी आदेशों का अनुवाद करवाया। यूनानी गौरव-ग्रंथों का अनुवाद पुनर्जागरण काल के दौरान बड़े पैमाने पर हुआ। फ्रांस के एतीने दोले जैसे अनुवादकों ने अनुवाद के क्षेत्र में अद्वितीय योगदान दिया। भारत में, विद्वानों का मानना है कि प्राचीन काल में अनुवाद की परंपरा के साक्ष्य सीमित हैं, क्योंकि यहाँ के विद्वान नई जानकारी को अनुवाद करने के बजाय उसे आत्मसात कर मौलिक पद्धति से प्रस्तुत करने में विश्वास रखते थे। भारत में निघंटु और निरुक्त जैसे ग्रंथों को अनुवाद के उदाहरणों के रूप में देखा जा सकता है।

प्राचीन काल में भाषाओं में परिवर्तन और विकास के कारण अपने ही ग्रंथों के अनुवाद और व्याख्या की आवश्यकता उत्पन्न हुई। इस प्रकार की व्याख्याएँ अनुवाद की दृष्टि से अत्यधिक महत्वपूर्ण मानी जाती हैं, क्योंकि इनमें काव्य की गद्यात्मक व्याख्या और सरलार्थ दोनों समाहित होते हैं। यदि प्राचीन असीरियन और हिब्रू अनुवादों को अनुवाद परंपरा का प्रारंभिक हिस्सा माना जा सकता है, तो भारत में हुई टीकाओं और व्याख्याओं को भी उसी परंपरा का

यह कस्बा अभी शहरीकरण के रंग में इतना नहीं रंगा है। यहां एक सरकारी स्कूल ,एक प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र, एक डाकघर व 25- 30 दुकानें हैं। इस क्षेत्र में एक ही बैंक है।यहां लगभग गांव का सा माहौल है । पिछले प्रबंधक महोदय की बहुत से लोग तारीफ करते हैं। उनके साथ वहां के ग्रामीण बहुत अच्छे से घुल मिल गए थे ।

अभिन्न अंग समझा जाना चाहिए।

भारत में टीका, व्याख्या, और अनुवाद की समृद्ध परंपरा सदैव जीवंत रही है। वेद, उपनिषद, रामायण, महाभारत जैसे ग्रंथों का न केवल भारतीय भाषाओं में, बल्कि अन्य देशों के विद्वानों द्वारा भी अनुवाद किया गया। रामायण जैसे ग्रंथ का भारत की अनेक भाषाओं में अनुवाद इसका उत्कृष्ट उदाहरण है। मुगलकाल के दौरान भी अनुवाद का कार्य निरंतर प्रचलित रहा, जिसमें दाराशिकोह और उनके गुरु राजशेखर का योगदान उल्लेखनीय है। स्वतंत्रता आंदोलन के समय अनुवाद ने एक नई दिशा प्राप्त की, जब इसे सामाजिक और राजनीतिक उद्देश्यों के लिए अपनाया गया। द्वितीय विश्व युद्ध के उपरांत अनुवाद का महत्व राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक क्षेत्रों में और अधिक बढ़ गया। व्यापार, संवाद और संचार के साथ-साथ शैक्षिक और वैज्ञानिक क्षेत्रों में भी इसका व्यापक उपयोग हुआ। वर्तमान समय में, अनुवाद ने ज्ञान के विविध क्षेत्रों को अभिजनों और बहुभाषाविदों के वर्चस्व से बाहर निकालकर आम जन तक पहुंचाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। भारत जैसे बहुभाषिक देश में, एक भाषा से दूसरी भाषा में अनुवाद के लिए प्रायः हिंदी या अंग्रेजी को सेतुभाषा के रूप में अपनाया जाता है। ऐसी परिस्थितियों में, भारतीय संस्कृति और साहित्य को समझने और व्यापक स्तर पर प्रचारित करने के लिए अनुवाद की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाती है|

विश्वग्राम की अवधारणा के तहत, अंतरराष्ट्रीय सांस्कृतिक संबंधों को समझने में अनुवाद की भूमिका महत्वपूर्ण हो जाती है। अनुवादक को एक कथन का अनुवाद करते समय केवल भाषा ही नहीं, बल्कि उस कथन के संदर्भ, संस्कृति, और शैली को भी ध्यान में रखना पड़ता है। इसलिए अनुवाद करते समय उस कथन की सांस्कृतिक, सामाजिक, और ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को भी समझना आवश्यक होता है।द्वितीय विश्व युद्ध और भारतीय स्वतंत्रता के बाद, देशों के बीच आपसी संबंधों में अनुवाद की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण हो गई। वैश्वीकरण, सांस्कृतिक आदान-प्रदान, और आर्थिक सहयोग के बढ़ते दौर में अनुवाद ने भाषाई और सांस्कृतिक बाधाओं को पार करने में एक सेतु का कार्य किया। यह न केवल राजनयिक संबंधों के सुदृढ़ीकरण में सहायक रहा, बल्कि विभिन्न देशों के बीच शिक्षा, विज्ञान, और साहित्य के आदान-प्रदान को भी प्रोत्साहित किया। प्राचीन काल से ही अनुवाद शिक्षा और ज्ञान के प्रसार का एक सशक्त माध्यम रहा है। चाहे वह भारतीय उपमहाद्वीप में बौद्ध साहित्य का चीन और जापान तक प्रसार हो या यूनानी और अरबी ज्ञान का भारत में आगमन, अनुवाद ने सदैव सभ्यताओं को एक-दूसरे से जोड़ने का कार्य किया है। ब्रिटिश शासन के दौरान, अनुवाद ने एक नए संदर्भ और दिशा में कार्य करना शुरू किया।

ब्रिटिश उपनिवेशवाद के युग में, अनुवाद शिक्षा, समाज, और संस्कृति के विकास के लिए एक

अनिवार्य घटक बन गया। ईस्ट इंडिया कंपनी और ब्रिटिश शासन ने भारत की भाषाओं, धर्मों, और परंपराओं को समझने के लिए अनुवाद का सहारा लिया। इस दौरान हमारे गौरव-ग्रंथों जैसे वेद, उपनिषद, रामायण, महाभारत, और अन्य सांस्कृतिक एवं धार्मिक ग्रंथों का अंग्रेजी में अनुवाद किया गया। हालांकि, इन अनुवादों का उद्देश्य केवल ज्ञान-विज्ञान का प्रसार नहीं था; यह भारत की सांस्कृतिक विरासत को समझने और उसे औपनिवेशिक हितों के अनुरूप ढालने का भी एक प्रयास था। ब्रिटिश अनुवादकों ने भारतीय ग्रंथों का अध्ययन करके यह समझने का प्रयास किया कि भारतीय समाज और उसकी संरचना किस प्रकार कार्य करती है। उदाहरण के लिए, चार्ल्स विल्किंस द्वारा भगवद्गीता का अंग्रेजी अनुवाद (1785) और मैक्स मूलर द्वारा वेदों का संपादन और अनुवाद भारतीय धर्म और संस्कृति को समझने और उसे यूरोपीय दृष्टिकोण से व्याख्यायित करने का एक प्रयास था। इन अनुवादों ने यूरोपीय विद्वानों को भारतीय दर्शन और ज्ञान की गहराई से परिचित कराया, लेकिन साथ ही इसे औपनिवेशिक शासन के लिए उपयोगी भी बनाया। ब्रिटिश शासन ने शिक्षा प्रणाली में भी अनुवाद को एक औजार के रूप में उपयोग किया। मैकाले की शिक्षा नीति के तहत भारतीय भाषाओं की उपेक्षा करते हुए अंग्रेजी को शिक्षा का माध्यम बनाया गया। इसके परिणामस्वरूप भारतीय समाज के एक वर्ग को अंग्रेजी भाषा में दक्ष बनाया गया, जो औपनिवेशिक शासन के प्रशासन और उद्देश्यों को सरलता से पूरा कर सके। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद, भारत ने सांस्कृतिक और भाषाई पुनरुत्थान के लिए कई कदम उठाए, जिनमें अनुवाद की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण रही। भारत की बहुभाषिकता और सांस्कृतिक विविधता को एकता में पिरोने के प्रयास में अनुवाद ने भाषाई दीवारों को तोड़ने का कार्य किया। विभिन्न भारतीय भाषाओं में उपलब्ध साहित्य, इतिहास, और परंपराओं का अनुवाद कर उन्हें राष्ट्रीय स्तर पर साझा किया गया, जिससे अलग-अलग भाषाई समुदायों को एक-दूसरे की सांस्कृतिक धरोहर को समझने और सराहने का अवसर मिला। भारतीय साहित्य और सांस्कृतिक धरोहर को वैश्विक स्तर पर प्रस्तुत करने के लिए अनुवाद एक सशक्त माध्यम बना। रवींद्रनाथ ठाकुर की "गीतांजलि" का अंग्रेजी अनुवाद न केवल साहित्यिक सम्मान का कारण बना, बल्कि भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों को वैश्विक मंच पर स्थापित करने में सहायक हुआ। इसी प्रकार, प्रेमचंद, महात्मा गांधी, और अन्य लेखकों के कार्यों का अनुवाद विश्वभर में भारतीय विचारधारा और संस्कृति को पहुँचाने में महत्वपूर्ण रहा। शिक्षा के क्षेत्र में अनुवाद ने व्यापक भूमिका निभाई। स्वतंत्रता के बाद क्षेत्रीय भाषाओं में पाठ्यपुस्तकों और शैक्षिक सामग्री का अनुवाद कर शिक्षा को लोकतांत्रिक रूप दिया गया। इससे क्षेत्रीय भाषा में पढ़ने वाले छात्रों को वैश्विक ज्ञान और प्रौद्योगिकी से जोड़ा जा सका। वैज्ञानिक अनुसंधानों, तकनीकी विकास, और चिकित्सा विज्ञान के क्षेत्र में अनुवाद ने भारत को वैश्विक प्रगति के साथ कदम मिलाने में मदद की। अनुवाद ने राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ करने में भी योगदान दिया।

विभिन्न राज्यों में लिखे गए साहित्य और ऐतिहासिक दस्तावेजों का अनुवाद कर उन्हें पूरे देश में साझा किया गया। इससे विभिन्न भाषाई समूहों के बीच आपसी समझ और सम्मान बढ़ा। यह प्रक्रिया केवल साहित्य तक सीमित नहीं रही, बल्कि राजनीतिक, सामाजिक, और सांस्कृतिक एकता को बढ़ावा देने का आधार बनी।

आज के समय में, अनुवाद ने व्यापार, प्रौद्योगिकी, मनोरंजन, और डिजिटल संवाद के क्षेत्रों में भी अपनी जगह बना ली है। स्वतंत्रता के बाद शुरू हुआ यह प्रयास अब भारत को वैश्विक स्तर पर सशक्त सांस्कृतिक और आर्थिक शक्ति के रूप में स्थापित करने में सहायक हो रहा है। अनुवाद ने न केवल अतीत की सांस्कृतिक धरोहर को संरक्षित किया, बल्कि इसे वर्तमान और भविष्य की आवश्यकताओं के अनुरूप ढालने का कार्य भी किया है।

अनुवाद ने भारतीय समाज में ऐतिहासिक और सांस्कृतिक बदलाव लाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। औपनिवेशिक युग में यह भारतीय ज्ञान और संस्कृति को यूरोपीय संदर्भों में प्रस्तुत करने का माध्यम बना। इस प्रक्रिया के तहत भारतीय धर्म, साहित्य, और परंपराओं को विदेशी विद्वानों ने अपने ढंग से व्याख्यायित किया, जिसका उद्देश्य अक्सर राजनीतिक और सांस्कृतिक प्रभुत्व स्थापित करना था। स्वतंत्रता के बाद, अनुवाद की दिशा और भूमिका बदल गई। यह सांस्कृतिक पुनरुद्धार का साधन बना, जिसने भारतीय भाषाओं के आपसी संवाद को प्रोत्साहित किया और हमारी सांस्कृतिक धरोहर को पुनः स्थापित किया।आज के समय में अनुवाद का महत्व शिक्षा, समाज, और संस्कृति में अपरिमेय है। ज्ञान के लोकतंत्रीकरण में इसकी भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। अनुवाद के माध्यम से हम न केवल अपनी भाषाओं के साहित्य को वैश्विक स्तर पर ले जा पाते हैं, बल्कि रूसी, फ्रेंच, जर्मन और अन्य भाषाओं के महान लेखकों और विचारकों के कार्यों को भी समझ सकते हैं। यह प्रक्रिया सांस्कृतिक समृद्धि को बढ़ावा देती है और विभिन्न समाजों के बीच संवाद का एक मजबूत माध्यम बनती है। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर, अनुवाद ने संस्कृतियों को जोड़ने का कार्य किया है। यह वैश्विक घटनाओं, विचारधाराओं, और आविष्कारों से हमें अवगत कराता है। इसके माध्यम से हम विभिन्न देशों के साहित्य, दर्शन, और विज्ञान से परिचित होते हैं, जो न केवल हमारी सांस्कृतिक समझ को गहरा करता है, बल्कि वैश्विक संदर्भ में हमारी भूमिका को भी सुदृढ़ करता है। इसलिए, अनुवाद को केवल भाषा के आदान-प्रदान तक सीमित नहीं समझना चाहिए। यह एक व्यापक सांस्कृतिक और शैक्षिक प्रक्रिया है, जो समाजों को जोड़ने, ज्ञान को प्रसारित करने, और सांस्कृतिक पहचान को संरक्षित करने का कार्य करती है। अनुवाद ने हमें अंतरराष्ट्रीय सांस्कृतिक संबंध स्थापित करने और विश्व की विविधता को समझने का अवसर प्रदान किया है, जिससे मानवता के एकीकृत विकास का मार्ग प्रशस्त होता है। अनुवाद के अपने सांस्कृतिक संदर्भ भी महत्वपूर्ण

हैं सांस्कृतिक शब्दावली अपने में एक समाज की संस्कृति उसके मूल्यों को समेटे रहती है| किसी समाज को जाने बिना उसकी संस्कृति को जानना असंभव है| रीति रिवाज तीज त्यौहार सगे संबन्धी रिसते नाते सब मिलकर जिस ढांचे का निर्माण कराते हैं मानव संस्कृति उसी ढाँचे के इर्द गिर्द दिखाई देती है|

भारत के संदर्भ में देखा जाये तो भारत एक बहू भाषिक देश है हर भाषा हर राज्य हर क्षेत्र की अपनी सांस्कृतिक विशिष्टता है| अनुवादक को उन तमाम वारीकियों को जानना पहचानना होगा जो किसी समाज विशेष के लिए सांस्कृतिक वातावरण निर्मित करती हैं| एक भाषा से दूसरी भाषा में अनुवाद के दौरान केवल शब्दार्थ ही नहीं बल्कि संस्कृति को भी अनूदित करना होता है| संस्कृत जैसी भाषा से अनुवाद किया जाना एक चुनौतीपूर्ण कार्य है संस्कृत से अनुवाद में सांस्कृतिक कठिनाई को समझने के लिए महाकवि कालिदास के नाटक "अभिज्ञान शाकुंतलम" से एक उदाहरण लिया जा सकता है। इस नाटक में कई ऐसे सांस्कृतिक संदर्भ और प्रतीक हैं जो अनुवाद के दौरान चुनौतियां पेश करते हैं।

उदाहरण के लिए, "अभिज्ञान शाकुंतलम" में एक प्रसंग है जहाँ राजा दुष्यन्त शकुन्तला को अशोक वृक्ष के नीचे "अशोक-स्तम्भ" पर पल्लव लगाने के लिए कहते हैं, ताकि उसके जीवन से शोक दूर हो जाए। यहाँ "अशोक-स्तम्भ" एक सांस्कृतिक प्रतीक है। संस्कृत में "अशोक" का मतलब शोक रहित होता है, और इस वृक्ष का धार्मिक और सांस्कृतिक महत्व भी है। इसका अनुवाद करते समय इस सांस्कृतिक संदर्भ को सही रूप में प्रस्तुत करना चुनौतीपूर्ण हो सकता है, क्योंकि हिंदी में पाठक के लिए इस वृक्ष और उसकी धार्मिक महत्ता की गहरी समझ होना आवश्यक है।

एक अन्य उदाहरण "कण्व ऋषि" के चरित्र से जुड़ा है। कण्व ऋषि का संस्कृत साहित्य में एक विशेष स्थान है, और वे तपस्वी और गुरु के रूप में माने जाते हैं। अनुवाद में, उनकी भूमिका और महत्व को केवल "गुरु" या "ऋषि" के रूप में प्रस्तुत करना उनकी सांस्कृतिक और धार्मिक महत्ता को कम कर सकता है। इस तरह के चरित्रों का अनुवाद करते समय उनके सांस्कृतिक संदर्भ और उनके समय के समाज में उनके स्थान का पूरा ध्यान रखना जरूरी है, ताकि पाठक को सही अर्थ और भावना प्राप्त हो सके।

इन उदाहरणों से यह स्पष्ट होता है कि संस्कृत से अनुवाद में सांस्कृतिक कठिनाइयाँ तब उत्पन्न होती हैं जब सांस्कृतिक प्रतीकों, धार्मिक संदर्भों, और ऐतिहासिक पात्रों की गहरी और सटीक समझ की आवश्यकता होती है, जो केवल शब्दों का अनुवाद नहीं बल्कि उस समय की सांस्कृतिक भावना को भी दर्शा सके।

यूरोपीय नाटकों के अनुवाद में सांस्कृतिक कठिनाइयाँ कई प्रकार की हो सकती हैं। ये कठिनाइयाँ न केवल भाषा की बारीकियों से जुड़ी होती हैं, बल्कि सांस्कृतिक संदर्भ और सामाजिक धारणाओं से भी

संबंधित होती हैं। यहाँ कुछ प्रमुख कठिनाइयाँ हैं|

ठीक यही स्थिति दूसरे भाषाओं और दूसरे देशों के साहित्य के सांस्कृतिक संदर्भों के साथ भी दिखाई देती है| मसलन यूरोपीय नाटकों में बहुत सारे सांस्कृतिक संदर्भ, स्थानीय रीति-रिवाज, ऐतिहासिक घटनाएँ और सामाजिक परंपराएँ होती हैं जो अन्य संस्कृतियों में अलग तरह से समझी जा सकती हैं। उदाहरण के लिए, शेक्सपियर के नाटकों में इंग्लैंड की सामाजिक और राजनीतिक संरचनाओं का विवरण होता है, जो अन्य संस्कृतियों में समझना मुश्किल हो सकता है यूरोपीय भाषाओं में खास तौर पर साहित्यिक भाषाई विशेषताएँ होती हैं, जैसे शब्दोंकी बुनावट , वाक्यांश और मुहावरे, जिनका सटीक अनुवाद करना कठिन हो सकता है। यूरोपीय नाटकों में वर्णित सांस्कृतिक मान्यताएँ और पूर्वाग्रह अन्य संस्कृतियों में असामान्य हो सकते हैं। इन मान्यताओं का सही ढंग से अनुवाद करना और साथ ही सांस्कृतिक संवेदनशीलता बनाए रखना एक चुनौती हो सकती यूरोपीय नाटकों में सामाजिक ढाँचा, परिवारिक संरचना और सामाजिक व्यवहार की विशेषताएँ होती हैं जो अन्य संस्कृतियों में भिन्न हो सकती हैं। उदाहरण के लिए, यूरोपीय नाटकों में पारिवारिक संघर्षों का स्वरूप अन्य सांस्कृतिक संदर्भों में अलग हो सकता है।

शेक्सपियर, इब्सेन, और मोलियर जैसे विश्वप्रसिद्ध नाटककारों के कार्यों का अनुवाद सांस्कृतिक और भाषाई संदर्भों की जटिलता के कारण एक चुनौतीपूर्ण कार्य बन जाता है। इन नाटककारों की कृतियों में उनकी भाषाओं की विशिष्ट विशेषताओं के साथ-साथ उनकी सांस्कृतिक, सामाजिक, और ऐतिहासिक पृष्ठभूमि भी गहराई से समाहित होती है, जो अनुवाद को एक रचनात्मक और व्याख्यात्मक प्रक्रिया बना देती है।

शेक्सपियर के नाटक "हैम्लेट" में प्रयुक्त संवाद और संदर्भ, जैसे "मैन आर्मड," इंग्लैंड की तत्कालीन सामाजिक और राजनीतिक परिस्थितियों को प्रतिबिंबित करते हैं। ये संदर्भ उस युग के पाठकों और दर्शकों के लिए परिचित और अर्थपूर्ण होते थे, लेकिन दूसरी भाषाओं और संस्कृतियों में उनका अनुवाद करते समय, उनकी सटीकता और गहराई को बनाए रखना कठिन हो जाता है। उदाहरण के लिए, "to be or not to be" जैसे संवाद में न केवल भाषा की सादगी, बल्कि उसमें छिपी दार्शनिकता भी निहित है, जो इसे अन्य भाषाओं में उसी प्रभाव और गंभीरता के साथ व्यक्त करने में चुनौतीपूर्ण बनाती है। शेक्सपियर की पुरानी अंग्रेज़ी शब्दावली और काव्यात्मक अलंकरण उन भाषाओं में अनुवाद के समय अलग तरह से व्याख्यायित हो सकते हैं, जिनमें इस प्रकार की अभिव्यक्ति की परंपरा नहीं है।इसी प्रकार, हेनरिक इब्सेन का नाटक "हेड्डा गैब्लर" 19वीं सदी के नॉर्वेजियन समाज की संरचना, विशेष रूप से महिलाओं की भूमिका और उनके अधिकारों पर आधारित है। यह नाटक उस समय के पारिवारिक संघर्षों और

सामाजिक अपेक्षाओं को उजागर करता है। हालांकि, ये संदर्भ पश्चिमी समाज के विशेष ढांचे से जुड़े हैं, जो अन्य संस्कृतियों के पाठकों के लिए अलग अनुभव प्रस्तुत कर सकते हैं। अनुवादक को न केवल पात्रों की मनोस्थिति को समझने की आवश्यकता होती है, बल्कि उस समाज की संरचना और विचारधारा को भी आत्मसात करना पड़ता है, जिससे नाटक की भावना और अर्थ बरकरार रहे। उदाहरण के लिए, हेड्डा का असंतोष और स्वतंत्रता की चाह पश्चिमी समाज में महिलाओं की स्थिति का दर्पण है, जिसे अन्य संस्कृतियों में समझाने के लिए गहन व्याख्या और संवेदनशीलता की आवश्यकता हो सकती है। मोलियर के नाटक "तार्टफ" में फ्रांसीसी समाज के व्यंग्य और उसकी भाषा की जीवंतता एक अलग चुनौती प्रस्तुत करती है। इस नाटक में पात्रों के नाम, स्थानीय लहजे, और सामाजिक संदर्भ फ्रांसीसी समाज की आलोचना करते हैं। व्यंग्य, जो कि किसी भी नाटक की विशिष्टता हो सकता है, का अनुवाद दूसरी भाषा में करने के लिए केवल भाषाई कौशल पर्याप्त नहीं होता, बल्कि अनुवादक को मूल संस्कृति के संदर्भ और व्यंग्य की गहराई को समझने और उसे लक्षित भाषा के पाठकों के लिए प्रासंगिक बनाने की क्षमता विकसित करनी होती है। इन उदाहरणों से स्पष्ट है कि अनुवादक का कार्य केवल भाषा का अनुवाद करना नहीं है, बल्कि सांस्कृतिक, सामाजिक, और ऐतिहासिक संदर्भों को भी उस अनुवाद का हिस्सा बनाना है। शेक्सपियर, इब्सेन, और मोलियर के नाटकों के संदर्भ में यह कार्य और भी महत्वपूर्ण हो जाता है, क्योंकि उनके नाटक अपने समय और समाज का गहन चित्रण करते हैं। अनुवादक को इन नाटकों की भावनात्मक और वैचारिक गहराई को आत्मसात कर उसे लक्षित भाषा और संस्कृति में पुनर्निर्मित करना होता है। यही कारण है कि इन नाटकों का अनुवाद साहित्यिक और सांस्कृतिक अनुवाद का उत्कृष्ट उदाहरण बनता है।

संदर्भ सूची :

1. नगेन्द्र (सम्पादक). अनुवाद विज्ञान: सिद्धान्त एवं अनुप्रयोग. हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली।
2. फोर्ड, जे. सी. . अनुवाद का भाषिक सिद्धान्त (रवीशंकर दीक्षित, अनुवादक). मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल।
3. तिवारी, भोलानाथ. अनुवाद विज्ञान. किताबघर प्रकाशन, दिल्ली।
4. गोपीनाथ, जी. अनुवाद: सिद्धान्त एवं प्रयोग. लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद।
5. टंडन, पूरन चन्द. अनुवाद साधना. अभिव्यक्ति प्रकाशन, नई दिल्ली।
6. हरिमोहन. अनुवाद विज्ञान और सम्प्रेषण. तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली।
7. सिन्हा, डॉ. रमण. अनुवाद और रचना का उत्तर जीवन. वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली।
8. कुमार, सुरेश. अनुवाद सिद्धान्त की रूपरेखा. वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली।

❐❐❐

1. सहायक प्राध्यापक, अनुवाद अध्ययन विभाग, म.गाँ.अं.हिं.वि,वर्धा, क्षेत्रीय केंद्र प्रयागराज, dr.harpreetkaurr@gmail.com, mobile number: 9158197303

उपासना

–राकेश कुशवाहा

गाँव में कोई ब्राह्मण घर नहीं है फिर भी जातिवाद चरम पर है। जहां कुर्मी खुद को यादवों और काछियों से श्रेष्ठ समझते हैं तो वहीं कोइरी खुद को सम्राट अशोक का वंशज बताकर सबसे श्रेष्ठ मानता है। यादव तो कृष्ण के वंशज होने से अपने को और ऊपर रखते हैं।ये तीनों जातियाँ गाँव के चमरोड़ा में रहने वाले जाटवों को अछूत मानती हैं

क्योंरी कुतिया तूने हमारा घर छोत का कर दिया।तू अभी तक नही सुधरी। आगे बढ़कर चेहरा लाल पीला किए संतोष ने अपने दाहिने हाथ से उपासना के गाल पर ज़ोर का थप्पड़ मारा। थप्पड़ लगते ही उपासना लड़खड़ा कर चार पाई से नीचे जमीन पर गिर गई। वह चेहरे के बल उल्टे मुह गिरि थी। गिरने की वजह से उसके दाँत होठो में गढ़ गए। थूक के साथ उसने खून को मुंह से बाहर निकाला। यह खून देखकर सुशीला घबरा गई। वह थर-थर काँप रही थी। सुशीला ने उपासना के घर जाने से मना किया था क्योंकि वह वर्ण व्यवस्था में जातियों के निचले पायदान बशोर जाती से थी। मगर उपासना पढ़ी लिखी और आधुनिक ख़यालो की थी। सुशीला को देखकर संतोष ने कहा चल हट नीच बशोर कहीं की। तेरी ए औकात कब से हो गई कि हम कुरमियों की बराबरी करने लगी। सुशीला डर के मारे काँप रही थी। वह बिना कुछ कहे चुप-चाप अपने घर निकल गई। वह अपना अपमान बरदास्त न कर सकी। उसके आँसू लगातार बह रहे थे। उसका ऐसा अपमान पहले कभी नही हुआ था।

कहते हैं दोस्ती और दुश्मनी बराबरी वालों से होती है। जाते समय वह सोच रही थी कि मेरे कारण उपासना के साथ संतोष क्या करेगा बेचारी को कितना मारा और कितना मारेगा। उसके मुह से खून निकल रहा थे बड़ा दुष्ट है उसका पति।

उपासना जाति से कुर्मी पटेल है जो कि मध्य प्रदेश के भिंड जिले के दबोह कस्बे से उसकी शादी पहुज नदी के उस पार उत्तर प्रदेश के उरई कस्बे के नजदीकी मटौली गाँव में पिछले चार वर्ष पहले हुई थी। वह स्नातक है जबकि संतोष बरहवीं फैल है। दरअसल उपासना की शादी संतोष से न होकर संतोष के हिस्से में आई सत्तर बीघे चौरासी की जमीन जिस पर आधुनिक खेती की

जाती है। संतोष के पिता ग्राम प्रधान हैं। ग्राम प्रधान का रुतवा किसी बड़े नेता से कम न था। उपासना के पोस्टमास्टर पिता ने दहेज में पंद्रह लाख रुपये दिये थे। इस इलाके में दहेज बहुत अधिक लिया-दिया जाता है। मायके से ससुराल की दूरी मात्र पचास किलोमीटर थी मगर वह उपासना के लिए किसी समुद्र पार से कम न थी। उपासना घर में बड़ी थी। उपसाना की जिंदगी किसी कैदी से कम न थी। वह हमेशा चारदीवारी के अंदर कैदी जैसी रहती थी। कहने को कहा जाता था कि बड़े घरों कि औरते घर से बाहर नहीं निकला करती ए उनका अपमान है। कुर्मी जाती वैसे तो संविधान में पिछड़ा वर्ग में शामिल है तो वहीं जिस व्यवस्था को मानती है उस में शूद्र वर्ण में शामिल है। लेकिन वे खुद को क्षत्रिये के रूप में प्रचारित करते हैं। यहाँ तक की उपासना का ससुर सियाराम अखिल भारतिए कुर्मी क्षत्रिय नामक संगठन का पदाधिकारी है।

गाँव में कोई ब्राह्मण घर नहीं है फिर भी जातिवाद चरम पर है। जहां कुर्मी खुद को यादवों और काछियों से श्रेष्ठ समझते हैं तो वहीं कोइरी खुद को सम्राट अशोक का वंशज बताकर सबसे श्रेष्ठ मानता है। यादव तो कृष्ण के वंशज होने से अपने को और ऊपर रखते हैं।ये तीनों जातियाँ गाँव के चमरोड़ा में रहने वाले जाटवों को अछूत मानती हैं तो जाटव लोग अहिरवारों को खुद से छोटा मानते हैं। अहिरवार भी खुद को बशोरों से ऊंचा समझके इतराते हैं। बसोरभी कम न थे उन्होने सबसे नीचे भंगी जाति खोज ली और खुद गर्वित रहते हैं कि हम तो भंगियों से ऊंचे हैं। हम भंगियों का छुआ नहीं खाते। भंगी जिसे महतर कहा जाता है इस केंसर से बचने के लिए धर्म परिवर्तन किया तो हेलिल मुसलमान बन गए वहाँ भी असराफ़ और सवर्ण मुसलमानों सैयद शेख पठान सिद्धकी , खान साहब के द्वारा कुत्तों से बुरा बर्ताव किया जाता है। गाँव बहुत छोटा है लेकिन पूरा सड़ा हुआ समाज है।

इतना सब कुछ होते हुए सारा द्वोष ए पिछड़े दलित ब्रह्मणों के ऊपर मढ़ देते हैं जबकि इस गाँव में कोई ब्राह्मण रहता ही नहीं।

पूरे गाँव में सबसे कट्टर जातिवादी उपसाना का परिवार है जहां जाति के अलावा सत्तर बीघा उपजाऊ जमीन और गाँव की प्रधानी।

इनके किसी कार्यक्रम के निमंत्रण में अन्य दलित और पिछड़ों की स्त्रियाँ नहीं जाना चाहती। लेकिन उपासना का परिवार रशूखदार है उसे पता चलेगा तो बुरा भला कहेगा इस डर से लोग निमंत्रण में चले जाते हैं।

निमंत्रण गई अन्य समाजों की स्त्रियाँ खाना खाने के बाद अपनी जूठी पत्तल उठाकर एक तरफ बैठे भंगी परिवार की डलिया के पास रख देती हैं। यहाँ आज भी ओमप्रकाश बाल्मीकि जी की जूठन

के हिसाब से व्यवस्था चल रही है।

उपासन की शादी हुए चार वर्ष हो गए लेकिन अभी तक कोई बच्चा नहीं जना। वह तीन बार गर्भवती हुई तीनों बार गर्भ परीक्षण हुआ। गर्भ में अभागी वेटियाँ तीनों बार आईं और गिरा दी गईं।

लड़कियों की संख्या इस क्षेत्र में कम है उसका कारण दहेज जैसी व्यवस्था और लोगों की पिछड़ी सोच।

आए दिन ससुराल वालों द्वारा वेटा न दे पाने के कारण उपासना को ताने मिलना खून के आँसू पीने जैसा था ।

बहू को वेटा ही हो इसके लिए एक भागवत महापुरान यज्ञ करवाया , अखंड रामायण तो हर वर्ष होती है।

उपासन कभी कभार अपनी सास के साथ पकी फसल काटने जाती है तो भोर जल्दी और शाम को देर से आती है क्योंकि उस समय दूसरे लोग इन्हें देख न सके। उसको उनकी परंपरा के हिसाब से लहंगा पहनकर और चुन्नी ओढ़कर जाना पड़ता है। उन्हें मुग़ल जनानियों की तरह समझाया जाता है कि कैसे अदव से रहना है।

सुशील जो कि उपासना के मायके से थी और एक साथ स्कूल में पढ़ी थी। वे आपस में दोस्त भी थी लेकिन केवल आँगन के वाहर की दोस्त मगर अब उपासन बहुत आगे निकल गई थी वह जाति प्रथा जैसी कुव्यवस्था को नहीं मानती थी।

सुशीला रोते हुए घर के तरफ जा रही थी। वह डरी सहमी और आंसुओं का सागर लिए अपने घर में प्रवेश कर ही रही थी लेकिन अपने पति मदन की नजरों से न बच सकी। मदन ने रोकते हुये पूछा -तो सुशीला घावरा गई और अपना अपमान पति को बताने से बची। वह किसी भी प्रकार का कलह नहीं चाहती थी। मदन की जिद के आगे उसकी एक न चली।

सुशीला ने सारी घटना ज्यों के त्यों बता दी। सुनकर नीला गमछा डाले मदन उठा। बोला चलिये थाने। उसने एक महिला का अपमान किया दलित समझकर जातिगत गलियाँ दी रिपोर्ट दर्ज करने चलना है।

सुशीला और अधिक डर गई कि बात क्यूँ बढ़े। लेकिन मदन नहीं माना। मदन की कई पीढ़ियाँ यही अपमान सहते हुए गुजर गई। अब नया खून अंबेडकर साहब की ताकत उस के अंदर प्रतिशोध लिए उवाल मार रही थी।

जबसे वह भीम आर्मी का ग्राम समन्वयक बना तब से संगठित हुए लोगों ने हौसला और दोगुना कर दिया।

वे दौनों थाने पहुँच गए। उन्होने रिपोर्ट दर्ज करने के लिए निवेदन किया जिस पर पहले तो पुलिस वाले ने बंदर घुड़की दी लेकिन भीम आर्मी और दलित संगठनों के डर से रिपोर्ट दर्ज कर ली। पुलिस ने किसी गवाह या प्रतक्षदर्शी का नाम पूछा तो सुशीला ने उपासना का नाम ले दिया।

सुनते ही मदन ने सुशीला को देखा और अपना माथा पकड़ लिया। जिसके खिलाफ रिपोर्ट लिखवाई जा रही है भला उसकी पत्नि अपने ससुराल और अपने पति के खिलाफ गवाही कैसे देगी। केस हारना तय है। लेकिन सुशीला सच छिपा न सकी।

पुलिस ने अपना कार्य आगे बढ़ाते हुए संतोष को गिफ़्तार कर लिया। और उसे जेल भेज दिया।

लेकिन रसूखदार प्रधान ने अपने वेटे की हाथो हाथ जमानत करवाकर मदन और पूरे गाँव को अपनी ताकत दिखा दी।

एक महीने बाद कोर्ट में केस की सुनवाई हुई। कोर्ट के नोटिस के हिसाब से मदन सुशीला , संतोष , उपासना और संतोष का बाप ग्राम प्रधान भी गया।

अर्दली ने आवाज लगाई कि सुशीला बसोरअपना बयान दर्ज कराए। सुशीला उठी और जैसा हुआ वैसे ही पूरा बोल दिया इसमें उसने उपासना को लगी चोट का भी जिक्र किया।

संतोष मुस्करा रहा था क्योंकि उसकी जीत पक्की जो थी।

फिर संतोष का बियान दर्ज किया जिसमें उसने सुशीला को कुछ भी कहने से मना कर दिया वह मुकर गया।

अब बारी गवाह की थी।अर्दली ने गवाह का नाम पुकारा उपासन पटेल पत्नि संतोष पटेल। यह सुनकर कोर्ट में बैठे लोग उपासना की तरफ देखने लगे।

अरे ए कैसा केस ? जिसमें विक्ट्म ने आरोपी की पत्नि को ही गवाह बना दिया हो।

संतोष ने उपासना को कहा जाइए जल्दी और अच्छा सा बोलना।

उपासना ने अपने बयान में कुछ नहीं कहा उसने केवल एक बार सुशीला का मुर्झाया चेहरा देखा लेकिन उसका पति उसके साथ खड़ा था उसे हिम्मत दे रहा था उपासना को अंदर तक झकझोर दिया।

उपासना के पास अब दो रास्ते थे सत्तर बीघा जमीन की मालकिन और संतोष को बाइज्जत

वरी कराना। दूसरी तरफ सच और ईमान की डोर पकड़ कर क्रूर परिवार और अपने क्रूर पति को सजा दिलाना। अपने गर्भ में मरी तीन वेटियों का बदला लेना।

न जाने क्या क्या ख्याल उसके जेहन में आ रहे थे। वह सोच रही थी की अगर मैंने बयान पलटा तो सुशीला की नजरों में गिर जाऊँगी अपनी नजरों में गिर जाऊँगी मगर पति को बचाना भी तो था। पति से बड़ा दोस्त वो भी निचली जाति की।

वह खामोश आगे बढ़ी। धीरे-धीरे उस स्थान पर पहुँच गई जहा से बयान दर्ज होना था।

हा तो उपासना उस दिन क्या हुआ था जज ने पूछा।

उपासना ने गहरी सांस ली अपनी पलकों को उठाया और कहा मेरे साथ कोई घटना या मार पीट नहीं हुई । इतना सुनते ही सुशीला ने अपने दौनों हाथो से अपने चेहरे को पकड़ लिया और उम्मीद छोड़ दी।

वह कोर्ट से बाहर निकलने लगी। फिर आवाज आई कि सुशील के साथ जो हुआ उसको सुशीला का सच माना जाए।

जज ने कहा तुम क्या कह रही हो ? इसमें तुम्हारे पति को एस सी एस टी प्रोटेक्सन एक्ट में जेल जाना पड़ सकता है फिर से बयान को होश में दीजिये।

उपासन ने फिर कहा - सुशीला के साथ जो हुआ सुशीला दर्ज करा चुकी है उसका बोला हुआ सच लिखा जाये।

कोर्ट में सब हक्के वक्के थे। आज न्याय और सच्चाई आदमी के ईमान के आगे सब ताकत और अन्याय हार गया।

संतोष को तुरंत गिरफ्तार कर लिया गया और संवैधानिक प्रावधान के मुतविक सजा सुनाई।

एक बार फिर मुंशी प्रेमचंद की पंचपरमेश्वर जीवंत हुई।

❐❐❐

अलामपुर भिंड मप्र

बाप की लताड़

–श्यामल बिहारी महतो

उसने जो कहा,कर ही डाला ' मंच,मंच पर हमने नेताओं का रूप बदलते, पार्टी बदलते और नीति बदलते भी देखा है। लेकिन यह आदमी तो जरा भी नहीं बदला। लोग क्या कहेंगे,लोग क्या सोचेंगे - एक पल भी नहीं सोचा । अपने भाव, अपनी विचारों को खुला रूप देते, सार्वजनिक करते हुए उन्हें ज़रा भी संकोच नहीं हुआ। ज़रा भी सोचा -विचारा नहीं उसने। डंके की चोट पर, एक दम से खुला-खुला ! आओ बुढ़वा खेलें होली। अपने रंग हजार। जीवन एक बार ही मिलता है -बार-बार नहीं। जितना हो सके, हंसी -खुशी से जी लो । यह दुनिया एक मुसाफिरखाना है । एक सराय है । रैन बसेरा । जीने के लिए जो सांसें मिली है, उसे पूरा पूरा जी लो । यह जीवन भी एक सराय ही है । यहां कोई अपना कोई पराया नहीं । पैसा हैं तो प्यार है, पावर है तो सब हैं, पास-पास ! क्योंकि पैसा है तो प्रेम है । पैसा नहीं तो सब तरफ विरानी, उजाड़ ! मलाल ! ऐसे जीवन से अच्छा है, प्रेम के साथ दो पल जी लो - जी उठोगे "

यह किसी महान संत का विचार या किसी दार्शनिक की कही बातें नहीं थी । बल्कि अपने ही गांव के शंभू काका का कथन था।

वह एक बुजुर्ग सम्मेलन था। खुला मंच था । हर किसी को अपनी बात रखने की खुली छूट दी गई थी। और कहने वाले भी कहने में कोई कसर बाकी नहीं छोड़ रहे थे। किसी ने जीवन की तरक्की में आई रूकावटों का रोना रोया, कोई पेंशन लागू न होने पर रूदन विलाप किया तो कोई मंहगाई पर भस्म कर देने वाली विचारों से सरकार को श्रद्धांजलि देकर उत्तर गया। लेकिन शंभूवा काका एक दम निराले निकले। उसकी एक एक बात निराली थी। बातों से लगता जैसे कोई युवा किसी वार्षिक सम्मेलन में अपने जीवन के सपनों को सार्वजनिक कर रहा हो " सोचता हूं फिर सांघा बिहा (दूबारा शादी)

चालीस साल पहले बिना तिलक दहेज की मेरी शादी हुई थी। तब मेरी उम्र यही कोई बारह साल की होगी, और हाई स्कूल तेलो में वर्ग आठ में पढ़ता था। मूंछ दाढ़ी अभी निकली नहीं थी और हाथ में मोबाइल नहीं कॉपी किताबें होती थी। आज तो पैदा होते ही बच्चों के हाथ में मोबाइल आ जाता है और कितने तो मोबाइल के साथ ही पेट से निकल आते हैं

कर लूं " कह लोगों को चौंकाया था। उसने कहना जारी रखा " काफी दिन हो गए शादी किए। जब हमारी शादी हुई थी, बाराती पैदल और दुल्हा गरूगाडी (बैलगाड़ी) पर होता। तब तिलक-दहेज नहीं होता था, दुल्हन ही दहेज है,कहा जाता था। पहले वरमाला भी नहीं होता, दुल्हे का द्वार लगी होती थी। शादी के पहले लड़का लड़की को देख नहीं पाता था। अब वरमाला के साथ ही लड़के को लड़की सौंप दी जाती है " देखा- देखी कर लो, संग संग नाच लो, फोटो सोटो खिंचवा लो " यह देख मेरा भी जिया ललचा उठा है। और इसी के साथ फिर सांघा करने को, मेरा मन मचलने लगा है। पहले बेरोजगार था, एक साइकिल और एक गाय तिलक दहेज के रूप में लड़की के साथ भेज दिया गया था। अब रोज़गार में हूं। नौकरी है, अच्छी खासी सेलरी है, घर है, गाड़ी है, बैंक बैलेंस है, यार दोस्तों के बीच अच्छी पकड़ है, किसी चीज की कोई कमी नहीं है। बस रात को उल्लू की तरह जागता रहता हूं। पहली वाली तो बेवफा निकली,लोक छोड़ परलोक में जा बसी। उसकी याद में आंसू बहाता रहता हूं। मुझे रोता देख एक दिन उसने आकर कहा " मेरी याद में कब तक आंसू बहाते रहोगे, दूसरी कर लो , तुम्हें तकलीफ़ होती होगी। मैं मान गया। अब मन फिर बाप बनने को उकसा रहा है। तिलक दहेज नहीं चाहिए, सिर्फ एक जोड़ी कपड़े में लड़की विदा कर दो..!" वह एक पल को रूका था। सभा स्थल में खुसर फुसर होने लगी थी " किस सनकी पागल को माइक थमा दिया गया है,जो मन में आ रहा है, बके जा रहा है..!"

" कल और आज का फर्क बता रहा है..!" कोई बोल उठा।

" हमें तो लग रहा है,यह सभा को संबोधित नहीं, अपनी दूसरी शादी का प्लान बता रहा है..!"

" पर बोल तो अच्छा रहा है..!" उस पर लोग बोलने शुरू कर दिए थे।

पर शंभूवा काका का रेडियो बंद नहीं हुआ था। विविध भारती की तरह उसने खुद को चालू रखा " बुजुर्गों ने भी फ़रमाया है कि यह दुनिया एक सराय है। एक मुसाफिर खाना है। जब तक जीवन है जिते ही जाना है। यही नहीं, लोगों को बीच बीच में शादी-बिहा करते रहना चाहिए, जैसे पहले के बुढ़- बुजुर्ग किया करते थे और जैसे आज के नेता लोग बीच बीच में पार्टी बदलते रहते हैं और लड़कियां दोस्त ! फिर हम पीछे क्यों रहें? आखिर उम्र ही क्या हुई है मेरी ! पचपन का हूं पर दिल तो बचपन का है, अच्छी खासी सेलरी है और क्या चाहिए.आज की लड़कियों को ? पैसे वाला हो तो आज की लड़कियां बुढ़ा-सुढा, काला- गोरा और ठिगना भी नहीं देखती और सीधे हां कर झपट लेती है - जैसे बाज़ कबूतरों पर झपटता हैं..!"

" कर लो ! कर लो ! " कुछ ने उकसाने वाली आवाज लगाई।

" तशेड़ी, नशेड़ी,गंजेड़ी, चार पांच लाख तिलक पा रहा है..!" शंभूवा काका कहते रहे " माना कि वे कुंवारे हैं, अरे,तो हमें भी कुंवारे समझ लो न,घंटा भी फर्क नहीं पड़ेगा। बोलो, कोई मेरा दूबारा बिहा करवा

सकते हैं, कोई दूर द्राष्टा ! कोई महानुभाव है ! बिहा सिर्फ मेरे साथ होगा, हमारे घर परिवार के साथ नहीं। जीवन भर का साथ मैं दूंगा। हमारे घर परिवार से उसका कोई लेना देना नहीं रहेगा। परिवार का किसी तरह का भार उस पर पड़ने नहीं दूंगा। खाना भी उसे बनाना नहीं पड़ेगा। बर्तन भी मांजने नहीं पड़ेंगे। लेकिन लड़की किसी जाति की नहीं होनी चाहिए - बस सिर्फ लड़की होनी चाहिए। वह फेसबुक,वाटशप, ट्विटर और इंस्टाग्राम वगैरह में सिर्फ चेटिंग करने का काम करेगी, हमेशा ऑनलाइन रहेगी और ऑनलाइन खाना मंगवा कर मुझे खिलाएगी और खुद भी खाएगी। सप्ताह में एक दिन हम किसी पार्क में घूमने जायेंगे, फोटो शूट करेंगे और फिर किसी दिन किसी नदी में नहाते, किसी झरने के नीचे अपनी कोमल देह को सहलाते-नहलाते वो फोटो शूट करेंगी..! फिर उसे फेसबुक पर अपलोड़ करेंगी। इंस्टाग्राम में चेपेंगीं और हर साल हम शादी सालगिरह मनायेंगे,जो अभी तक हमने पहली के साथ नहीं मनाए थे..! क्या कहा आपने? पहली शादी के बारे बताऊं, और बेटा-बेटी के बारे भी बताऊं, ठीक है तो सुनिए..

चालीस साल पहले बिना तिलक दहेज की मेरी शादी हुई थी। तब मेरी उम्र यही कोई बारह साल की होगी, और हाई स्कूल तेलो में वर्ग आठ में पढ़ता था। मूंछ दाढ़ी अभी निकली नहीं थी और हाथ में मोबाइल नहीं कॉपी किताबें होती थी। आज तो पैदा होते ही बच्चों के हाथ में मोबाइल आ जाता है और कितने तो मोबाइल के साथ ही पेट से निकल आते हैं जैसे महाभारत का कर्ण कवच कुंडल पहने पैदा हुआ था। हमारे भी तीन बेटे पैदा हुए। जैसे किसी युग में तीन भगवान पैदा हुए थे, ब्रह्मा, बिष्णु और महेश ! तब से कइयों युग गुजर गये। लेकिन अब धरती पर भगवानों ने पैदा होना बंद कर दिया। अब वे सिर्फ स्वर्ग और नरक का काम देखते हैं। हालांकि हमारे तीनों बेटे बड़ी सरलता से पैदा हुए। किसी ने हस्पताल का मुंह नहीं देखा और न आज के बच्चों की तरह किसी हस्पताल का नाम उनके नामों के साथ जुड़ा ! पर सभी के साथ कुसराइन (गांव में बच्चा पैदा कराने वाली चमारिन) नाम जरूर जुड़ा हुआ था। अपने लालन पालन में भी उन तीनों ने कोई मुश्किल पैदा होने नहीं दी और तीनों जर्मन सेफर्ड की तरह पले -बढ़े ! बड़े हुए तो, एक एक कर हमने तीनों की शादी कर दी, तब भी वो नहीं बदले,तब भी वो तीनों जर्मन सेफर्ड की तरह आज्ञाकारी बने रहे। लेकिन मेरे नहीं - अपनी-अपनी पत्नियों के ! तभी से उनकी सोच बदली थीं - हमारे प्रति। अपने बाप के प्रति। बाप के जीवन और ज़िन्दगी के प्रति। साल भर पहले की बात है। छः माह पहले पत्नी मर चुकी थी। बाहर कड़ाके की ठंड पड़ रही थी। मैं अपने कमरे में कंबल ओढ़े गठरी बने बैठा हुआ था। तभी सुबह आंगन में आग के अलाव को घेरे तीनों जर्मन सेफर्ड बेटों के बीच गुफ्तगू हो रही थी। शुरुआत बड़े ने की। कह रहा था " रिटायर होने के पहले अगर बाप किसी कारण वश मर जाता है, तो बाजार चौक की वो दस डिसमिल वाली जमीन मैं लूंगा। उस पर मैं एक शानदार " शंभू मार्केट " प्लेस बनाऊंगा और सभी किराए पर लगा दूंगा। यही मेरा रोजी रोजगार होगा ..।"

" नहीं, नहीं, ऐसा नहीं होगा..।" मांझिल ने एतराज जताया " उसमें मेरा भी हिस्सा होगा। बाप के मरने के बाद मिलने वाले सारे पैसे हम दोनों बांट लेंगे ..।"

" आप दोनों तो बड़े मतलबी निकले। जमीन में दोनों का हिस्सा, रूपए भी दोनों बांट लेंगे और मैं क्या बाबा का घंटा बजाऊंगा। मैं क्या पेड़ की खोंढर से पैदा हुआ हूं !" छोटका छटाक भर उछल पड़ा था।

" अरे छोटे, नाराज़ काहे होते हो। तुम्हारे लिए नौकरी तो हम दोनों छोड़ ही रहे हैं। तुम मज़े से नौकरी करना..। "

" नहीं, नहीं,भले पैसे मत देना, लेकिन मार्केट में दो कमरा मुझे भी चाहिए..!"

" ठीक है, मंजूर..।" बड़ा बोला।

" ठीक है ..। " ,मंझिला भी सहमत।

" तो फिर ठीक है,तब मुझे एतराज नहीं। "

तीनों ने मेरा उसी दिन तेरहवीं पार कर दिया।

" आज के श्रवण !" भीड़ से किसी ने कहा।

" तभी मैंने निश्चय कर लिया, जर्मन सेफर्ड बेटों की सोंच और उनके हसीन सपने पर सुतली बम लगाने का...! " शंभूवा काका कहते चले गए " काम पर मैंने अपना और बेटों के प्लान के बारे अपने कुछ खाश दोस्तों को बताए। कुछ ने मजाक में लिया और कुछ ने बेहद गंभीरता से।

" गजब की कुंठित चाहत, बाप अभी मरा नहीं और घर में जलाने के समान आ गये ..!" एक साथी ने कहा

" आज कोई अपना नहीं,सबका सपना मनी -मनी !" दूसरा बोला।

" शंभू दा, जिंदगी तो वही है, जो अपनी मर्ज़ी से जिया जाए, कौन क्या कहता है, क्या सोचता है,कान देने की जरूरत नहीं..!" तीसरे ने जीवन की लोजिक बताया।

उस दिन के बाद से ही मैंने रातों को सोना कम कर दिया और जागना शुरू कर दिया। कहीं ऐसा न हो जिस छत के नीचे की कड़ी से बेटों के लिए कभी झूले लगा दिए करते थे, क्या पता किसी दिन उसी कड़ी से बेटे बकरे की भांति मुझे टांग दें ..!" शंभूवा काका की बातों ने एक समा सा हो बांध दिया था। कहिए तो कुछ कुछ सहमा सा दिया था। जो लोग शुरू में उनकी बातों से उकता कर जाने को उठे थे, पुनः अपनी जगह पर दिल थाम कर बैठ गए थे। शाम होनी अभी बाकी थी। उनका भी और उस सभा की भी।

जीवन की ढलान पर शंभूवा काका के अंदर एक तुफान सा उठा था। समाज की गोष्ठी - बैठकों में

जाते रहता था। उसने कहना जारी रखा "बहुत दिनों से मन में एक विचार बार बार आ रहा था। तीनों बेटा पुतोहू को एक बड़ा सा दीपावली बम्फर गिफ्ट दूं। लेकिन वैसा गिफ्ट अभी तक कहीं मिला नहीं था। उस दिन समाज की मीटिंग से शाम को रामगढ़ से घर लौट रहा था। गोला चौक में दो स्त्री - पुरुष के बग़ल में एक लड़की गाड़ी के इंतजार में खड़ी थी। पता चला पेट्रोलियम पदार्थों के मूल्य वृद्धि के विरोध में सवारी गाड़ियां दिन भर रोड़ पर नहीं चली। और शाम हो चली थी। पर गाड़ियों का अब भी पता नहीं था। तीनों परेशान दिखे। मैंने गाड़ी रोक दी और बाहर निकल आया। पूछा - " क्या बात है..?"

" हमें बहादुरपुर जाना है और कोई गाड़ी मिल नहीं रही है..।" लड़की ने बताया।

" मैं उधर ही जा रहा हूं, फुसरो, चाहो तो मेरे साथ आप लोग चल सकते हैं।"

" डेढ़ दो घंटे से खड़े हैं, एक भी गाड़ी नहीं आई..!" स्त्री ने आदमी की ओर देखा।

" और रूकना ठीक नहीं है..!" आदमी का मुंह धीरे से खुला।

" मां,आओ, इन्हीं के साथ चलते हैं..!" लड़की बोली और गाड़ी के बग़ल में आकर खड़ी हो गई। मैंने गेट खोल दिए। वह आगे मेरे बगल की सीट पर आकर बैठ गई। मां बाप दोनों पीछे की सीट पर समा गये। मैंने गाड़ी आगे बढ़ा दी। पहली बार मैंने लड़की का अवलोकन किया। गौर से देखा। अंदर से महसूस किया। मासूम लगी। वह आगे देख रही थी। सूनी मांग ! पर आंखों में सपनों की उड़ान बाकी !

लड़की विधवा थी और पेट से भी थी। कुदरत की करिश्मा कहिए या जीवन का संयोग। घंटा भर पहले मीटिंग में विधवा विवाह पर मेरे जोरदार भाषण को लोगों ने तालियों की गड़गड़ाहट से स्वागत किए थे। मैं कह रहा था " हर विधवा स्त्री को, एक और ज़िन्दगी जीने का अवसर मिलना चाहिए। एक ही जिन्दगी में उसका सब कुछ खत्म नहीं हो जाता..!" अपनी ही कही बातें याद आ रही थीं मुझे।

" आप क्या करते हैं..?" अचानक से वह पूछ बैठी।

" नौकरी..!"

" घर कहां हुआ..?"

" मुंगो गांव..!"

" पत्नी क्या करती है?"

" वह चल बसी, इस दुनिया में नहीं है..!"

वह चुप हो गई। एक बार उसने मुझे देखा और कुछ पल मूडी गड़ाए बैठी रही। शायद कुछ सोचने लगी थी। मेरे बारे, अपने बारे या फिर समय की विडंबना पर।

बहादुरपुर आ गया था। सामने विशाल शिव मंदिर खड़ी थी। बुढ़ा बाबा का एक और घर ! मैंने गाड़ी रोक दी और बाहर निकल आया। पूर्णिमा का चांद आसमान पर उग आया था। इक्का दुक्का लोग आ जा रहे थे। जैसे शाम को लोग टहल को निकले हों।सबकी अपनी धून अपनी चाल !

" बाहर.आ जाओ.!" मैंने लड़की से कहा। वह बेधड़क गाड़ी से नीचे उतर आई। आगे बढ़ कर मैंने उसका हाथ थाम लिया। वह सहजता के साथ मेरे सामने खड़ी हो गई। निरखने सा भाव-मुंद्रा ! ऊपर-नीचे ताकने लगी।

उसकी कोमल हथेलियों को सहलाते हुए मैंने कहा " मेरे साथ, हमारे घर चलोगी? मैं भी जीवन में अकेला हूं,अब तुम भी अकेली हो गई हो। शायद इसी लिए जीवन के मोड़ पर किस्मत ने हम दोनों को मिलाया है। उम्र में भले बड़े हूं पर बूढ़ा नहीं हूं। आखिरी सांस तक साथ दूंगा। कभी किसी चीज की कमी होने नहीं दूंगा..!"

" मैं,.. मेरे पेट में बच्चा पल रहा है...!" वह हकलाई थी।

" सब कुछ देख, समझ कर ही मैंने यह प्रस्ताव रखा है " बच्चा, तुम्हारे नयनों का तारा होगा और मैं तुम दोनों का माली.- शंभू माली.. शंभू नाम है मेरा !"

" मैं फूलमती, फूलमती महतो.!" उसने मेरी आंखों में झांका। जहां उसे एक पूरा जीवन मंडल विराजमान नजर आया। तब उसने मां बाप की ओर देखा, हमें गाड़ी से उतरे देख वे दोनों भी उतर गए थे और अचंभित भाव पूर्ण नजरों से हम दोनों को देख रहे थे.. "

" फिर क्या हुआ...?" भीड़ ने पूछा।

" क्या आप लड़की को साथ लेते आए..?"

" लड़की के माता पिता ने क्या कहा..?"

" तभी उसकी मां आगे बढ़ी थी ..!" सवालों के जवाब समेटते हुए शंभूवा काका ने कहा -" पहले तो उसने बेटी के सर पे हाथ रखा और मंदिर के अंदर चली गई। लौटी तो उसके हाथ में कागज से लिपटी सिंन्दुर की पुड़िया थी। पुड़िया उसने मेरे हाथ पर रख दी और बेटी से कहा -" यह सिंन्दुर मांग में भर लो बेटी ! बुढ़ा बाबा घर का है, सदा जगमगाती रहेंगी..!"

" शादी के छः माह बाद ही तुम्हारी किस्मत में छेद हो गई। अब उसी किस्मत ने तुम्हें एक मौका फिर दिया है, जाओ बेटी, इस फ़रिश्ते के साथ सदा खुश रहना !" बाप ने फूलमती के सर पर हाथ रख दिया था..!

" घर में स्वागत हुआ या आफ़त आई...!" किसी ने बीच में फिर पूछ बैठा।

" धमाका हुआ ! जर्मन सेफर्ड बेटों के सपनों पर सुतली बम फट गया ..!" शंभूवा काका ने जैसे जीत की डफ़ली बजाते कहा था " बहादुरपुर से छूटे तो हम सीधे बोकारो मॉल में जा घुसे। फूलमती की वेश भूषा भी तो बदलनी थी। नये परिधानों में वह सचमुच की फूलकुमारी लग रही थी। खुद का नया रूप देख खुद से शर्मा गई और देर तक मुझसे लिपटी रही। रास्ते में हमने एक होटल में खाना खाये। घर पहुंचे तो रात काफी हो चुकी थी और सभी अपने अपने कमरे में गहरी नींद सो रहे थे। हमने किसी को जगाया नहीं और हमेशा की तरह किसी ने उठ कर हमसे पूछा नहीं कि " खा कर आ रहे हो, या खाना भी है..!" हमेशा की तरह हमने अपने पास की चाबी का इस्तेमाल किया। पहले गाड़ी अंदर की फिर फूलमती को बाहों में लिए अंदर अपने कमरे में समा गए। लगा बहुत बड़ी जंग जीतकर लौटा हूं। सोए तो दोनों यही दुआ कर रहे थे कि इस रात की फिर सुबह न हो। लेकिन फिर सूरज उगा, फिर सुबह हुई, और ऐसी सुबह हुई, कि बहुतों के सालों साल की नींद उड़ा दी। कौवे छत की मुंडेर से उड़ गए और मैनों ने डाल बदलने से मना कर दिया।

सुबह सबसे पहले फूलमती ही उठी। शौचालय से निवृत्त होकर मुझे उठाया। आंगन में जर्मन सेफर्ड पुत्रों को अपनी पत्नियों के संग खड़े पाया। बड़ा पुत्र दहकते अंगारों सा आंख किए आगे बढ़ आया " पापा,यह आपने क्या कहर बरपाया ? बुढ़ापे में दूसरी शादी कर लाया..!"

बड़े का शह पाकर मांझिल भी बढ़ आया -

" लोग क्या कहेंगे ज़रा भी न सोचा , खुद को जवान समझा, क्या है यह लोचा..?"

तभी छोटा था फुसफुसाया " खाने को बप्पा को कोई नहीं पूछता था। आज बप्पा ने हम सबके खाने में जहर मिलाया..!"

" कल तक बप्पा को कोई पूछ नहीं रहा था। आज बप्पा का किसी का साथ पाना बहुत अखर रहा है। जाओ तीनों मिल बना लो शंभू मार्केट। लगा दो किराए पर, हम चले अपनी राह..!" कह साबुन तौलिया लिए मैं बॉथरूम में जा घुसा और फूलमती मुर्झाए सूरजमुखी पौधों को पानी देने लगी..! " .. " शाबाश काका..!" भीड़ से कोई बोल उठा।

" शंभूवा काका की जय हो "

शंभूवा काका के जीवन का रंग देखकर भीड़ में सभी " हो,हो,हो,..!" कर सब हंसने लगे।

❐❐❐

बोकारो, झारखंड, फ़ोन नं 6204131994

ललक

–अरूणा सब्बरवाल

कयी सप्ताह के पश्चात् अरसे के बाद आज फिर बस में मैंने अंकल जी को चढ़ते देखा , वही अपना भानु मति का पिटारा लिये बस में चढ़ने का प्रयास कर रहे थे। सोचा उसकी सहायता कर दूँ ,किंतु हिम्मत नहीं पड़ी। आज उन्होंने रैन कोट भी डाला था ।,मेरे साथ एक सहेली भी थी, किंतु मेरा ध्यान तो अंकलजी में ही अटका था।

आज फिर मैंने उन्हें देखा,जिन्हें मैं पिछले तीन वर्षों से देखती आई हूँ ,किंतु बात करने का अवसर नहीं मिला,या यूँ कहो साहस ही नहीं जुटा पाई।वैसे तो उसी मॉल में बेंच पर बैठे अनेक बार देखा है उन्हें ।यह तो सभी को पता है कि एक महिला को पुरुष से बात की पहल करने से पहले बहुत कुछ सोचना पड़ता है।उसके मन में कयी तरह के प्रशन उठते हैं । ऊपर से समाज के बारे में भी सोचना पड़ता है ।क्यूँकि जब भी हैरो जाती हूँ तो उसी मॉल के ऊपर फ़ूड कोर्ट में वह और कांति बैठ कर चाय पानी पीते हैं।और वहीं वह सज्जन सुबह से ले कर मॉल के बंद होने तक अपनी बड़ी सी ट्रोली के साथ नीचे दोस्तों के साथ बैठे होते हैं ।अनेकों बार उसे जिज्ञासा हुई कि उनसे बात करूँ ,किंतु मन को बरबस रोकना पड़ा क्यूँकि वह सज्जन सदा लोगों से घिरे रहते है ।उनका वहाँ होना मेरे लिए बहुत बड़ा जिज्ञासा का बड़ा विषय बन गया है ,विशेष रूप से उनका भानु मती का पिटारा ,उनकी ट्रोली।ऐसा लगता है वह सारा घर ही अपने साथ ले कर चलते है ।नाम तो मैं उनका नहीं जानती,चलो उन्हें अंकल जी ही बुलाते हैं। अंकल जी एक चकोर सी बड़ी ट्रोली के साथ दोस्तों से घिरे बेंच पर बैठे होते हैं

तीन वर्षों में कयी बार मैंने अंकल जी को अपनी बड़ी सी ट्रोली के साथ H14 बस में चढ़ते देखा है ।उन्हें ट्रोली के साथ देखते ही ड्राईवर उनके लिए रैम्प नीचे कर देता है,और वह अपनी ट्रोली के साथ जैसे- तैसे चढ़ ही जाते है।उम्र शायद सत्तर की होगी।उनके शरीर पर बक़ायदा मैला सा गर्म नेहरु कॉलर का अचकन,गले में मैला सा गरम मफ़लर, और गले में लंदन ट्रांसपोर्ट का फ़्रीडम पास लटका रहता है ।हाँ हाँ दस्ताने और सर पर फटी गर्म टोपी तो भूल ही गयी ।परतों मैल चढ़ी चौरस ट्रोली, ट्रोली लगता है जिसे कभी धोने का

सौभाग्य कभी नहीं मिला ,ऊपर तक ट्रोली भरी होने के साथ-साथ उसके चारों पिल्लर पर प्लास्टिक की थैलियों में कुछ न कुछ सामान टंगा होता हैं,हाँ एक वाद्य यंत्र भी टँगा होता है , जो गिटार या ज़ाइलफ़ोन कि भाँति लगता है ।हाँ हाँ ट्रोली में पोर्टेबल कुर्सी भी टँगी रहती है , अगर थक जाएँ तो कहीं भी बैठ सकते हैं ।वह ट्रोली ही नहीं,लगता है मानो पूरा घर साथ ले कर चल रहे हों ।यह ट्रोली भी उन्हें गवर्मेंट से ही मिली है ।ट्रोली मेरे लिए एक बहुत बड़ा रहस्य बनी हुई है ।सच कहूँ केवल ट्रोली नहीं वो सज्जन भी मेरे लिए रहस्यमयी बनते जा रहे थे ।मन में यही जिज्ञासा रहती है कि उनकी इतनी बड़ी चौकोर ट्रोली में होता क्या है?।

लगता था आज मेरी क़िस्मत खुल ही गयी ।अंकल जी को देखते ही बस ड्राइवर ने बस का दरवाज़ा खोल कर रैम्प नीचा किया , बस में चढ़ने के लिये उन्हें थोड़ी जद्दो -जहद तो करनी पड़ी ,बस में कोई सीट ख़ाली न होने के कारण उन्हें मेरे पास ही बैठना पड़ा।हिम्मत जुटा कर मैंने उनसे पूछ ही लिया.....

" अंकलजी आप इतनी भारी ट्रोली क्यूँ उठाते हैं "।

"इस ट्रोली में मैं पूरे दिन का खाना पीना ले कर चलता हूँ जैसे ...मसाले वाली चाय,पानी ,नमकीन कभी थेपला कभी खिचड़ी, कभी पराँठे, और ढोकला इत्यादि ।अंग्रेज़ों की फीकी फीकी डबलरोटी अच्छी नहीं लगती।महंगी भी बहुत होती है ।मेरी बेटी पूरे सप्ताह का खाना बना कर फ़्रिजर में रख देती है।जब सब काम पर चले जाते हैं।मैं पीछे से अपनी ट्रोली और ख़ुद तैय्यार हो कर निकल आता हूँ।अब यह ट्रोली मेरा जीवन साथी बन चुकी है ।उनके जाने के बाद मैं अपना काम ख़ुद ही करता हूँताकी उनके काम में दखलं अंदाजी न हो"।

" एक ही बेटी है?"।

" नहीं दो हैं एक बेटी लंदन से बाहर रहती हैं ।वो कभी कभी आती है मिलने।मैं बड़ी बेटी के साथ रहता हूँ। मेरे पास अपना घर था , मैंने बेच कर उन दोनो को पैसे दे दिए हैं। अपना टैक्स बचाने के लिए ,तुम्हें तो पता है, आधे पैसे गवर्मेंट ले लेती है ।पाच्च्स वर्ष नौकरी की है, भारी टैक्स दिया है,क्यूँ न फ़ायदा उठाया जाए। दोनो बेटियाँ बहुत ध्यान रखतीं हैं मेरा।

असल में लड़कियाँ नहीं चाहतीं कि मैं घर में अकेला रहूँ ।इसीलिए मैं सुबह अपनी ट्रोली तैय्यार कर के निकल जाता हूँ। धन्यवाद गवर्मेंट का जिसने बस और मेट्रो का फ़्री ट्रेवल का फ़्रीडम पास दिया है।(लंदन में अवकाश के बाद गवर्मेंट की और से मेट्रो और बस का फ़्री फ़्रीडम पास मिल जाता है)अगर बस छूट जाए तो रिंग एंड राइड को फ़ोन करके घर पर बुला लेता हूँ ।पैसे भी नहीं लगते।मुझे यहाँ आना बहुत अच्छा लगता है ,उसके कयी फ़ायदे हैं पहला घर को गरम रखने के पैसे बचते हैं ,दूसरा मैं अच्छे-अच्छे लोगों से मिलता हूँ।बेटियों को चिंता नहीं होतीं, वो जानती हैं कि अगर अचानक मुझे कुछ हो भी जाये तो

मॉल में ऐम्ब्युलन्स बुलाने के लिए बहुत लोग होंगे, मेरे दोस्त भी मिल जाते हैं "।

इतने में हमारा स्टाप आ गया, दोनो अपने अपने रास्ते चले दिए।मैंने उनकी मदद के लिए हाथ आगे बढ़ाया ,उन्होंने मदद लेने से इंकार कर दिया।मुझे उनका तर्क अच्छा लगा ।अपनी शोप्पिंग के पश्चात् मैं और मेरी मित्र कांति फ़ूड कोर्ट में चाय पीने बैठ गये।ऊपर से देखा तो अंकल जी अपने दोस्तों के साथ बहुत मग्न ख़ुशियाँ बिखेरने में लगे थे । उनके चारों ओर दोस्तों के जमघटे को देख कर ख़ुशी हुई ।रास्ते भर सोचती रही कि उनमें ऐसा क्या चुंबकीय आकर्षण है जो सदा लोगों से घिरे रहते हैं।घर पहुँचते ही व्यस्तता के कारण बात आई गयी हो गयी ।

कयी सप्ताह के पश्चात् अरसे के बाद आज फिर बस में मैंने अंकल जी को चढ़ते देखा , वही अपना भानु मति का पिटारा लिये बस में चढ़ने का प्रयास कर रहे थे । सोचा उसकी सहायता कर दूँ ,किंतु हिम्मत नहीं पड़ी। आज उन्होंने रैन कोट भी डाला था ।,मेरे साथ एक सहेली भी थी, किंतु मेरा ध्यान तो अंकलजी में ही अटका था । भरी बस होने के कारण ,उतरते वक़्त एक नौजवान ने उनकी मदद के लिए हाथ बढ़ाया उन्होंने मना कर दिया।जब भी कोई उनकी सहायता के लिय हाथ बढ़ाता है तो उनका स्वाभिमान सामने खड़ा हो आ जाता है।क्या ग़ज़ब का स्वाभिमान है उसमें।

आज सुबह से ही बारिश हो रही थी।मंद-मंद हवा राहत दे रही थी । अंधेरे ने आस पास की दुनियाँ को अपने आग़ोश में ले लिया था।जब मैं अपने एक दो काम समाप्त करके आयी अंकल जी अकेले ही मॉल के बेंच पर बैठे थे ,मेरे लिए अच्छा अवसर था उनसे बात करने का हमारी थोड़ी सी पहचान तो हो चुकी थी।उन्हें अकेले देखते मैं उनके पास बेंच पर जा कर बैठ गयी।

" नमस्ते अंकल जी , कैसे हो "

"सारू छः, अंकल जी बड़ी धीमें से बोले "अंकल जी नहीं,धीरू भाई कहो "

"उनके ढीले से उतर से मुझे चिंता होने लगी "।

"धीरू भाई जी आज आपकी उदासी का कारण क्या है ?" समझ तो मैं गयी थी कि आज परेशान हैं बारिश के कारण उनके दोस्त घर से नहीं निकलेंगे ।

ऐसा लग रहा था मानो आज उन्हें दिन के अंधेरे और उनके भीतर की उदासी ने घेर लिया था।

मैंने पूछ ही लिया "धीरू भाई जी आज बड़े उदास लग रहे हो क्या कारण क्या है ?"।

"बात तो कोई ख़ास नहीं, लगता है आज अकेले ही दिन बीतना पड़ेगा ।बारिश में लोग बाहर आने से हिचकिचाते हैं , कि कहीं अगर फिसल गए तो घरवालों के लिये समस्या खड़ी हो जाएगी "।

"बस इतनी सी बात है ,अभी मिस्टर गूगल से पूछ कर बताती हूँ ।मैं जल्दी से मिस्टर गूगल जी से

पूछ कर उनकी चिंता का निवारण करते बोली .....

" चिंता न करें जल्दी ही बारिश रुक जाएगी ,और सूरज भी निकल आएगा। तब तक आप मुझे ही अपना दोस्त समझिए "।

कुछ पल संवादहीन गुज़रे , मैं उनकी चुप्पी में भी अर्थ ढूँढने लगी , ऐसा महसूस हो रहा था मानो उनके बाहरी अक्कड़-फक्कड़ व्यक्तित्व के भीतर भावनाओं का शीतल झरना बह रहा हो।वह गहरी साँस लेते बोले .....

" मैं ख़ुशक़िस्मत हूँ, लोगों के जीवन में तो बहुत कम अच्छे दिन आते हैं।ऊपर वाले की कृपा से मेरे तो सारी उम्र अच्छी गुज़री है"।

इतना कह कर वो अपने संगीत वाद्य की टूनिंग करने में लग गए।टूनिंग करते -करते उसके मस्तिष्क में पत्नी की धुँधली -धुँधली स्मृतियाँ चहल कदमी करने लगीं।वह ख़ुद ही बड़बड़ाने लगे .....

" किसी की शादी में मैंने देखा था तेजस को बस ....वहीं मर मिटा था उस पर ,वो इतनी सुंदर थी कि मैंने जुगाड़ कर कर के उसके बारे में पता लगा ही लिया।वह आर्ट सेंटर में संगीत सिखाती थी। तेजस संगीत की महारथी थी, उसे कोई भी संगीत वाद्य दे दो , दो मिनट के बाद वह कुशलता से बजा लेती थी।मुझे याद है उसके जन्मदिवस में एक मित्र ने उसे बैंजो उपहार में दिया , बस एक दो मिनट अंगुलियों को इधर-उधर चलाने के बाद तेजस उस बैंजो पर सभी धुन बजाने लगी। सरस्वती जिनकी उस पर बहुत मेहरबानी थी ।जब गाती थी तो ऐसा लगता था जैसे सरस्वती जी उसके गले में बास करती हों।हेतल के संगीत ने मुझे मोह लिया था।यूँ कहो फ़िदा हो गया।उसे मिलने के बहाने मैंने उसकी संगीत की क्लास में दाख़िला ले लिया।फिर हमारा प्यार उड़ान भरने लगा।हमारी विवाह में कोई समस्या नहीं आयी , हम दोनो गुजरात से थे और उम्र गोत्र भी मेल खा गया।बात करते -करते उनका गला भर्राने लगा आँखे नम हो गयीं ,गला साथ नहीं दे रहा था।कंपकापते शब्दों से बताया कि पच्चास वर्षों के पश्चात् पत्नी मेरा साथ छोड़ कर चली गयी ।ऐसा लगा मानो मेरा जीवन वहीं समाप्त हो गया है ,पर हेतल मेरे संगीत में सदा मेरे साथ रहती है ,उसकी ख़ुशबू मेरे हर सुर में बसी है। मैं हेतल से अभी भी बातें करता हूँ , भावुकता में कह देता हूँ 'तुम ही न रहे , अब किसे कहूँ कि याद आ रहे हो तुम 'उसी की हिम्मत से मैं ख़ुद को खडा कर पाया। हेतल अक्सर कहती थी कि ,तुम्हारे साथ मैं ख़ुद को बुलंद को सकती हूँ ,तुम मेरे प्राण-वायु हो।तुम मेरी ऊर्जा ढ़ाल और हम साया बन गए हो। जब कभी उसकी याद आती है तो उसके ख़त पढ़ लेता हूँ मन ही मन सोचता हूँ ,यह कैसा पागलपन है।हेतल सदा कहती थी धीरू ,ज़िंदगी तो हमेशा समय से आगे निकल जाने वाली चीज़ है , न कि ठहरी हुई जन्मपत्री जिसके सारे शब्द संकेतों से भरे होते हैं।शेष आपके सामने है।अब मैं यहाँ समय का सदुपयोग और अपना अकेलापन दूर करने आ आता हूँ।मन भी लगा रहता है , किसी का भला

भी हो जाता है " धीरे धीरे उनके मित्र भी आनें लगे ।मैंने संतावना से उनकी पीठ थपथपायी और अपने घर की ओर चल पड़ी।मुझे ख़ुशी इस बात की थी कि धीरू भाई ने अपना मन हल्का कर लिया ।

रास्ते भर मैं धीरू भाई के बारे में ही सोचती रही , किन्तु जब मैं अपने आस -पास देखती हूँ तो लगता है ,इस संसार में पचास प्रतिशत से अधिक लोगों को अकेलेपन का घुन खा रहा है ।मेरी एक मित्र है ,वह अकेलेपन से जूझने के लिए तैयार हो कर लम्बे से लम्बे रूट की बस में बैठ जाती है , चार पाँच घंटे बसों में घुमती रहती है ,शाम को जब बेटा अपने दोस्तों के साथ घर से बाहर चला जाता है तब वह घर जाती है , जब बेटा घर में होता है तो उसे घर से बाहर रहना पड़ता है यह उसकी विवशता है,मुझे कहती है तुम भी कोशिश करो अकेलापन भर जाएगा ।बस में लोग चढ़ते-उतरते हैं रौनक़ लगी रहती है ।

एक ओर महिला को जानती हूँ जिसने अकेलेपन से जूझने का अपना प्रबंध किया हुआ है ।वह दूर-दूर की चैरिटी की दुकान में जा कर सस्ती चीज़ें ख़रीद कर दूसरी चैरिटी की दुकान में जा कर वही चीज़ें दान दे देती है।जब पूछा तो बोली इंसानो से संवाद तो होता है ,शाम को तो टेलिविज़न के सामने ही बैठना है ।गवर्मेंट की तरफ़ से फ़्री ट्रैवेल का फ़्रीडम पास तो मिला हुआ है।

एक नहीं ऐसी कयी कहानीयाँ है।सभी की यही विडंबना है ।

अक्सर लोग अवकाश के पश्चात् स्वयं को बेकार ,यूस्लस समझने लगते हैं।सोचते हैं अब उनका इस संसार में क्या काम है ।संयुक्त परिवार का लंदन में चलन नहीं है ,बच्चें भी अपनी ज़िम्मेवरियाँ निभाने में लगे हैं ।क्या आप सोच सकते हैं कि वृद्धों के लिए अगर मुफ़्त का फ़्रीडम पास न हो तो उनके लिये घर से शायद निकलना भी दूभर हो जाए ।

पर हाँ नीता बहन ने अपनी समस्या का बढ़िया समाधान निकाल लिया है , मस्त रहती है ।उम्र शायद सत्तर से ऊपर है ,ट्रैम्प सी लगती है किंतु वह सदा अपने अंग्रेज़ साथी के साथ दिखती हैं , नीता बहन को अंग्रेज़ी नहीं आती और अंग्रेज़ को गुज़राती नहीं ,किंतु सदा एक दूसरे के साथ ही दिखते हैं ।एक से दूसरे रेस्टोरेंट में बैठ कर पूरा दिन में बिता देते हैं ,शाम को अपने -अपने घर चले जाते हैं ।

लंदन में बहुत सी समाज सेवा संस्थाएँ हैं जहाँ तुम अपना समय दान दे सकते हैं।किंतु कभी-कभी आत्मविश्वास की या फिर पढ़ाई की कमी कहो या खुल कर अंग्रेज़ी न बोल सकने के कारण उन्हें उन संस्थाओं का बोध नहीं होता ,जो उनके लिए उन संस्थाओं में भाग लेने में एक रुकावट बन जाता है ।

अक्टूबर का महीना चल रहा था ,पतझड़ अपने यौवन पर था सर्दियों का एहसास होने लगा था ।

उस दिन शिखा ने जैसे ही घर का काम समाप्त किया , उसने बाहर झाँक कर देखा , अचानक पतझड़ की धुँध न जाने कहाँ ग़ायब हो गयी थी । पतझड की मरियल सी धूप के कुछ टुकड़े पैटीओ के शीशों से

भीतर झाँक रहे थे ।वह बाहर निकली उसने प्रकृति का अद्भुत दृश्य देखा ,लगभग सभी वृक्ष वस्त्रहीन खड़े शर्मा रहे थे। धरती माँ पर पड़े ख़ूबसूरत लाल , संतरी , पीले रंग बिरंगे पतों का बिछा क़ालीन पतझड़ की शोभा को और बढ़ा रहे थे। वह वहीं खड़ी प्रकृति के नज़ारों को निहारने लगी , दो दिन से बारिश नहीं हुई ,शिखा ने सोचा बहुत अच्छा अवसर है गार्डन साफ़ करने का। उसने गार्डन रेक से घास पर पड़े पत्तों को समेटना आरम्भ कर दिया ।उसने सूखे पत्ते एकत्र कर के खाद बनाने वाले ड्रम में डाल दीये। सोचने लगी क्यूँ न पतझड की आख़री घास काट ली जाए ।कल गार्डन के घास उठाने वाले ले भी जाएँगे ।मौसम भी साफ़ होने लगा था ।कयी सप्ताह बीत गये ।व्यस्तता के कारण बाहर भी नहीं जा पायी।क्यूँकि लंदन में तो मौसम का कोई भरोसा नहीं ,तुम एक ही दिन में चारों मौसम का आनंद ले लेते हो ।चल पड़ी अपने मिशन पर ,हैरो पहुँचते ही उसकी आँखें धीरू भाई को ही ढूँढती रहीं ,न बस में न मॉल के बेंच पर, कहीं भी नहीं थे , यहाँ तो की बेंच भी वहाँ से नदारत थे ,पूछे तो किससे पूछे,पूछने की बात भी नहीं थी ।कुछ सप्ताह वह दिखाई नहीं दिए।

आज छः सप्ताह बाद धीरू भाई को बस में चड़ते देख कर , मेरी ख़ुशी का ठिकाना न रहा ।आज उन्होंने गर्म कोट डाला था , भीनी -भीनी सर्दी भी शुरू हो गयी थी। घने बादल छाए थे ।दोनों ने एक दूसरे को नहीं देखा। लोगों की भीड़ के बावजूद मेरी नज़रें धीरू भाई पर थी ।वह रिज़र्व सीट पर बैठ गये और मैं पीछे ।हैरो स्टेशन आते ही जब मैंने उन्हें वहाँ उतरते नहीं देखा ।मैं भी बैठी रही जासूसी करने के लिए ।लग गयी उनका पीछा करने।बाहर बारिश होनी आरम्भ हो चुकी थी।अचानक वह हैरो की एक मेथोडिस्ट चर्च में घुसे और मैं पीछे -पीछे ,मैं अपना छाता बंद कर के उनके पास जा कर बैठ गयी।भीतर से मैं ख़ुश थी कि अब उन्हें मुझे भगाने की जल्दी नहीं होगी ।मुझे देख कर हैरानी से बोले

" तुम यहाँ कैसे?"

मैंने सकपकाते कहा " मैं यहाँ मंगल को एक सामाजिक चर्चा के लिए आती हूँ "।

" आप यहाँ कैसे ?"

" पुछो मत ,अंग्रेज़ों ने मिल कर काउन्सिल को शिकायत की कि यह लोग जमघटा बना कर लोगों की शांति भंग करते हैं ।काउन्सिल ने सुधार का बहाना बना कर वहाँ से बेंच उठता दिए ।मेरा उद्देश्य तो समाज सेवा का था। धन्यवाद काउन्सिल का उन्होंने हमें सड़क पर नहीं छोड़ा।सप्ताह में दो दिन चार -चार घंटे हमारे लिए इस चर्च में निर्धारित किए हैं ।यहाँ चाय का प्रबंध भी है ,सर्दियों में आराम रहेगा। एक डब्बा रखा है चाय का , चाय बना लो और कुछ पेन्स डब्बे में डाल दो। यहाँ मैं ख़ुशी से दोस्तों के साथ संगीत साधना कर सकता हूँ ।यहाँ पीयानो भी है ।तुम सच नहीं मानोगी यहाँ हम खुल कर गा सकते हैं , बजा सकते हैं ।हमारे ग्रुप में से कितने छुपे रूस्तम निकले हैं। जो जवानी में मंच पर गाया, बजाया करते थे ।कोई

माउथऑर्गन बजाता था ,कोई हारमोनियम और कोई तबला ।सबकी योग्यता निखर कर बाहर आ रही है और बहुत ख़ुश है। घर में बच्चों की उनमें कोई दिलचस्पी नहीं ,कोई जानना भी नहीं चाहता ।संगीत मेरी नस-नस में बसा है ,जिस दिन मैंने संगीत छोड़ दिया मैं मर जाऊँगा ।वह बार-बार अपनी घड़ी देख रहे थे , शायद मुझे जाने का संकेत दे रहे थे "।

" शेष चार दिन का क्या प्रबंध है "मैंने पूछा ?

" वो जो लाइब्रेरी है न हैरो की ,दो दिन वहाँ कुछ घंटों के लिए कमरा मिला है। वहाँ हिंदी ,गुज़रती ,बंगला का अख़बार भी होता है ।हमारे समूह में कयी मेम्बर प्रफ़ेशनल हैं जैसे वक़ील ,सोशल वर्कर ,प्रोफ़ेसर , डॉक्टर इत्यादि जो अपनी सेवाएँ मुफ़्त में दान देते हैं ।जैसे किसी को पत्र लिखवाना हो , कोई काउन्सिल की समस्या हो ,लैंड्लॉर्ड की समस्या हो ,समय पर पेन्शन न पहुँची हो इत्यादि ।सबकी समस्याओं के समाधान का प्रयास किया जाता है ।डॉक्टर समझाते हैं अपना और अपने शरीर का ध्यान रखें, वही अंत तक साथ देगा।

" धीरू भाई शेष दो दिन का क्या प्रबंध है "?।

बारिश तेज़ होती जा रही है धीरू भाई का ध्यान घड़ी पर ही था।,

" धीरू भाई घड़ी देखते बोलें ।लगता है आज कोई नहीं आएगा ,और मैं ख़ुश थी ,कि अब मैं आराम से

उनसे बात कर सकती हूँ ।सोचने लगी यह अच्छा ही है कि मौसम के पन्ने इंसान के हाथों से बाहर हैं।

" धीरू भाई शेष दो दिन का क्या प्रबंध है "?।

" दो आधे दिन हमारे लिए कम्यूनिटी सेंटर में निर्धारित हैं जहाँ हम अपनी निजी समस्याएँ ,अपने विचार अपने अनुभव बाँट सकते हैं, बच्चों के साथ रहने में विचारों और सोच में विरोधाभास का द्वन्द तो चलता रहता है ,इसी आशा से यहाँ आते हैं कि वहाँ हमारी बात को कोई तो सुनता है ,समझता है। इसके अतिरिक्त अगर कोई कविता लिखता है ,सबको सुनाना चाहता है ।उसे सब प्रोत्साहित किया जाता है ।छोटा सा जन्मदिवस भी मना लेते हैं "।

"जैसे आज "आपके कोट पर चिपका स्टिकर 'ए बर्थ डे बॉय 'जो मैंने देख लिया था। वो मेरी बात सुन्नी -अनसुन्नी कर बोलते गये ।अंग्रेज़ ,रोमेनीयन ,अफ़्रीकन कोई भी आ सकता है ।जितने हम अकेले हैं , यह लोग हम से भी अधिक अकेले हैं ।भाषा की तो कोई समस्या नहीं होती , अंग्रेज़ी तो सभी बोल लेते हैं ।हमारा यह समूह बढ़ता जा रहा है ।मनुष्य के लिए सामाजिक मेल -जोल , आदान -प्रदान अत्यंत

ज़रूरी है ।यही हमारा ध्येय है ।आज कम्पयुटर का दौर है, जहाँ सम्वेदनाओं के लिये समय ही नहीं बचा । किसी भी काम को सही ढंग से करने के लिये उसके साथ रागात्मक सम्बंध का स्थापित होना ज़रूरी है ।घर से यहाँ आ जाने पर मुझे अच्छा लगता है मैं सबके लिए बहुत ख़ुश हूँ "।.....

" धीरू भाई जी इतनी समाज सेवा करके तो आप स्वर्ग में जाएँगे "।" मेरे विचार से तो आप समाज सेवा के साथ- साथ उनका माग दर्शन कर रहे हैं "।

" माग दर्शन ....? इस उम्र में मार्ग दर्शन ....? मार्ग दर्शन सिद्धांतों से लिया जाता है , मनुष्यों से नहीं । मनुष्य तो मर जाता है सिद्धांत नहीं " ।

" मैं कौन होता हूँ सेवा करने वाला और मार्ग दर्शाने वाला , है न हमारा ऊपर वाला ।मैं तो बस अवकाश के बाद यह अनमोल जीवन जीने की कोशिश कर रहा हूँ ।ऊर्जा और ख़ुशियाँ बाँटता हूँ,मेरे साथ जात-पात धर्म का कोई भेद -भाव नहीं कोई बंधन नहीं है ।यहाँ कोई भी आ सकता है ।जो समाज ने मुझे दिया है , समाज को लौटा रहा हूँ ।मेरे जीवन में तो हर दिन उत्सव है ।कैसी शक्तिशाली प्रवृति होती है मानव में समझोतों की , वह हर स्थिति पर विजय पा ही लेता है ।आधुनिकता में वैयक्तिकता इतनी बढ़ गयी है की सब अपने -अपने लिये ज़िम्मेवार हैं । मैं ख़ुशनसीब हूँ मेरा स्वस्थ शरीर है ,मेरे पास संगीत है और सुनने वाले मेरे दोस्त ।माँ बाप ने पढ़ा दिया था ।ये धरती और इसके लोग ही मेरा परिवार है।

मेरे लिए सारा संसार "वासुधैव कुटुम्बकम है "।

" धीरू भाई जी,तो हो जाए आज आपका हैपी बर्थ डे "इक्कीस के तो हो गये होंगे ।आपके कोट पर लिखा है "।

" कयी बार इक्कीस का हो चुका हूँ ,मैं आज छियानवे वर्ष का नौजवान यानी कि (नाइंटी सिक्स यीयर यंग मैन)।

" कोई इच्छा कोई ललक रह गयी है क्या ?"।

" बस एक ललक " किंग प्रिन्स चार्ल्स की टेलीग्राम का इंतज़ार में हूँ "।(लंदन में जब आप सौ वर्ष के होते हैं ,तो क्वीन या किंग से बर्थ डे की टेलीग्राम आती है)

धीरू भाई के सपनों का आसमान बहुत बड़ा है।

❐❐❐

1. Flat 2, Russettings, Westfield Park, Hatch End HA5 4JF, Pinner U.K
संपर्क : 07557944220 (mobile) 0203 539 0160(land line)
ई-मेल : Arun.sabharwal45@gmail.com

भक्तिकाल की सूफी परंपरा- काव्यधारा या आंदोलन

–शोधार्थी - इन्द्रजीत यादव,
शोध निर्देशक
–डॉ. प्रदीप कुमार

सूफियों को किसी धर्म, जाति, सम्प्रदाय में विभाजित नहीं किया जा सकता। भले ही उनका शरीर किसी भी लिंग, जाति, सम्प्रदाय आदि से ताल्लुक रखता हो परन्तु स्वयं उनकी जाति नहीं होती। सन्त बुल्लेशाह कहते हैं-''कि जाणा मैं कोई रे बाणां, कि जाणा में कोई। जो कोई अन्दर बोले चाले, जात असाडी सोई। जिसदे नाल मैं नेह लगाया, ओहो जिहा मैं होई।' अर्थात् मुझे क्या पता कि मैं कौन हूँ। में खुद नहीं जानता में कौन हूँ।

भक्तिकालीन सूफी काव्य भारतीय साहित्य का एक महत्वपूर्ण अंग है, जो मुख्य रूप से 14वीं से 16वीं सदी के बीच के समय को दर्शाता है। इस काल में सूफी संतों ने काव्य के माध्यम से भक्ति और प्रेम की गहरी भावनाओं को व्यक्त किया। सूफी काव्य का यह प्रेम आध्यात्मिक और दैवीय प्रेम की अवधारणा पर आधारित था, जो मानव और ईश्वर के बीच के संबंध को एक नई दृष्टि से प्रस्तुत करता है। सूफी प्रेम का मूल तत्व है 'ईश्वरीय प्रेम' या 'इश्के हकीकी'। सूफी संतों के लिए प्रेम केवल मानव प्रेम या भौतिक प्रेम तक सीमित नहीं था, बल्कि यह एक आध्यात्मिक यात्रा थी जो आत्मा की शुद्धता और ईश्वर के साथ एकता की ओर ले जाती थी।

भक्ति आन्दोलन धर्म के आवरण में आया, मूलतः एक व्यापक सामाजिक-सांस्कृतिक आन्दोलन था, जिसने सामन्त-विरोधी होने के साथ-साथ जनतांत्रिक शक्तियों को मजबूती भी प्रदान की। भक्तिकाल के इस आन्दोलन ने न केवल विभिन्न धर्मों वाले जन समुदायों को एक सूत्र में बांधाकर भारतीय संस्कृति के विकास में मदद की बल्कि सामन्ती दमन और उत्पीड़न के विरुद्ध संघर्ष करने का मार्ग भी प्रशस्त किया।

इस आन्दोलन की व्यापकता को इसी आधार पर आँका जा सकता है कि इसकी अभिव्यक्ति केवल धर्म तक सीमित न रहकर समाज, दर्शन, कला, राजनीति, साहित्य, भाषा और संस्कृति आदि विभिन्न क्षेत्रों में दिखाई पड़ती है। धार्मिक आवरण में भी इस आन्दोलन ने राष्ट्रीय नवजागरण का रुप धारण किया।

इस काल में भक्ति व्यक्ति तक सीमित न रहकर जन-जन तक पहुँची। फलस्वरुप इसने आन्दोलन का रुप धारण कर लिया।

भौगोलिक और भाषाई व्यापकता के अतिरिक्त इसका प्रभाव कला और संस्कृति के लगभग सभी रुपों पर पड़ा। वास्तुकला, चित्रकला, नृत्यकला, संगीत, साहित्य आदि कलाओं का कोई भी रुप इससे अछूता नहीं था। मैनेजर पाण्डेय कहते हैं-''भक्ति आन्दोलन के साथ भारतीय समाज, संस्कृति और साहित्य के विकास की नयी अवस्था का आरम्भ होता है। भक्ति आन्दोलन व्यापक सांस्कृतिक आन्दोलन है जिसकी अभिव्यक्ति दर्शन, धर्म कला, साहित्य, भाषा और संस्कृति के दूसरे रुपों में दिखाई देती है।''

भक्ति आन्दोलन के साथ ही आधुनिक भारतीय भाषाओं का आधार तैयार होता है और देशी भाषाओं के गठन की प्रक्रिया शुरु होती है। देशी भाषाओं में साहित्य रचना के साथ साहित्य सामन्ती जकड़ से बाहर निकलता दिखाई देता है। भक्ति आन्दोलन और उसके साहित्य का सम्बन्ध उस युग के समाज एवं संस्कृति से है जिसमें सामाजिक जीवन की तरह-तरह की विसंगतियों की पहचान के साथ-साथ सामन्ती विचारधारा के विरुद्ध विद्रोह भी है। प्रो० मैनेजर पाण्डेय के अनुसार-''सामाजिक चेतना, सामन्ती समाज- व्यवस्था के विरुद्ध विद्रोह की भावना और जन संस्कृति की सृजनशीलता की जैसी अभिव्यक्ति भक्ति काव्य में हुई है वैसी भक्तिकाल के पहले की भारतीय कविता में कम ही मिलती है।''

भक्तिकाल की कविता सामन्ती व्यवस्था के प्रति विद्रोह और जन-संस्कृति की सृजनशीलता की कविता है। इस नयी चेतना के कारण ही इस समय की कविता संस्कृत-काव्य और काव्य शास्त्र से बहुत कुछ स्वतंत्र है। भक्ति काव्य की अन्तर्वस्तु जन-संस्कृति और जन अनुभवों से निर्मित है। इस कविता के अधिकांश छन्द हिन्दी के जातीय छन्द हैं जो संस्कृत छन्दों से भिन्न हैं। सबसे अधिक महत्वपूर्ण यह है कि भक्तिकाल में पहली बार सामान्य जीवन-व्यवहार की भाषा और कविता की भाषा के बीच एकता कायम हुई और भाषिक कृत्रिमता समाप्त हुई। हिन्दी क्षेत्र में भक्ति साहित्य का विकास कई शाखाओं में हुआ, जिसमें सभी शाखाओं का लक्ष्य तो एक था, लेकिन मार्ग सबके अलग-अलग थे। सगुणियों ने जहाँ विष्णु के अवतार राम और कृष्ण को आधार मानकर अपने भावों की अभिव्यक्ति दी वहीं निर्गुणियों में कबीर, नानक, दादू, रैदास आदि संतो ने ईश्वर के निर्गुण, निराकार रुप को केन्द्र में रखकर सामाजिक असमानता का जोरदार खण्डन किया।

इन्हीं निर्गुणी सन्तों की एक शाखा सूफी सन्तों की है जिनके विचारों का मूल आधार ही यही था कि केवल मानवीय प्रेम के द्वारा ही ईश्वर को प्राप्त किया जा सकता है। जहाँ मानव-मात्र से प्रेम का भाव आ जायेगा, वहाँ सारे भेदभाव स्वतः ही समाप्त हो जायेंगे। इन कवियों ने हिन्दू घरों की कथाओं को उन्हीं की भाषा में कहकर अपने उदार हृदय का परिचय दिया और यह बता दिया कि प्रत्येक मनुष्य के हृदय में ऐसा गुप्त तार होता है जिसके छूते ही प्रत्येक मनुष्य बाहरी भेदभाव भुलाकर एकत्व

की अनुभूति करने लगता है। इन प्रेममार्गी कवियों में कुतुबन (मृगावती), मलिक मुहम्मद जायसी (पद्मावत), मंझन (मधुमालनी), उसमान (चित्रावली) और नूर-मुहम्मद (अनुराग बाँसुरी) आदि प्रमुख हैं। इनके प्रेमाख्यान अपने सन्देश ऐसे काव्यशास्त्र द्वारा प्रकट करते हैं जो किसी विशेष परम्परा से न बँधकर अनेक परम्पराओं के संगम हैं। यह लक्षण प्रकट करता है कि ये कवि अपने धर्म के अन्तर्गत रहकर भी स्थानीय परिवेश के अनुरुप सोच-समझकर अनुकूलता लाने में सक्रिय थे।

सूफियों को किसी धर्म, जाति, सम्प्रदाय में विभाजित नहीं किया जा सकता। भले ही उनका शरीर किसी भी लिंग, जाति, सम्प्रदाय आदि से ताल्लुक रखता हो परन्तु स्वयं उनकी जाति नहीं होती। सन्त बुल्लेशाह कहते हैं-''कि जाणा मैं कोई रे बाणां, कि जाणा में कोई। जो कोई अन्दर बोले चाले, जात असाडी सोई। जिसदे नाल मैं नेह लगाया, ओहो जिहा मैं होई।' अर्थात् मुझे क्या पता कि मैं कौन हूँ। में खुद नहीं जानता में कौन हूँ। मैं तो बस इतना जानता हूँ जो मेरे अन्दर बैठा है, मेरा भगवान, बस में उसी से बात करता हूँ। उसी के साथ मस्त रहता हूँ। वही मेरा यार है, वही मेरी जाति है। उसी के साथ मेरा नेह जुड़ा हुआ है और मैं बस उसी का ही हूँ।''

भारत में सूफी मत के प्रवेश का कोई निश्चित समय नहीं बताया जा सकता लेकिन इतना अवश्य है कि इस्लाम के आगमन के साथ ही सूफियों का भारत में आगमन प्रारम्भ हो गया। सर्वप्रथम सिन्ध, पंजाब तथा पश्चिमोत्तर प्रदेशों में इन साधकों का पता चलता है। सूफी धर्म का आविर्भाव, मूलतः इस्लाम से ही हुआ जो कि तत्कालीन कुरीतियों, भेदभावों, आडम्बरों के विरुद्ध एक तीव्र स्वर था। रामपूजन तिवारी के अनुसार-''यद्यपि सूफी शब्द का व्यवहार इस्लाम धर्म के रहस्यवादियों के लिए किया जाता है फिर भी यह समझना गलत होगा कि अलग ही उनका कोई एक विशेष संगठित सम्प्रदाय था अथवा उनका एक अलग ही विशेष सैद्धान्तिक मतवाद था। वे मुस्लिम समाज के अन्तर्गत थे और इस्लाम के मूलभूत सिद्धान्तों से अलग जाने की कल्पना भी नहीं कर सकते थे। वैसे उनके विश्वास, उनकी धारणाएँ सनातनपंथी इस्लाम से सब समय मेल नहीं खाते। सनातनपंथी इस्लाम की कट्टरता तथा कठोर नियम कानूनों की पाबन्दी के साथ सूफी मत का सामंजस्य स्थापित करना प्रत्येक समय सहज नहीं हो पाता। इस्लाम धर्म बाह्याचारों पर अत्यधिक जोर देता है। सनातनपंथी इस्लाम की नाई सूफी भी अपने सिद्धान्तों और क्रियाओं की परीक्षा कुरान और हदीस को ही दृष्टि में रखकर करते हैं। लेकिन सूफी मत वाले इस्लाम के सिद्धान्तों और कुरान के वचनों का अर्थ वैसा नहीं करते जैसा कि सनातनपंथी इस्लाम को मान्य है।''

सूफी मत का बीजारोपण इस्लाम से ही हुआ जो बाह्य-प्रभावों के कारण विधि-विधानों एवं बाह्य-आडम्बरों के विरुद्ध एक प्रचण्ड आवाज थी। मुहम्मद साहब की मृत्यु के बाद परिस्थितियाँ कुछ

ऐसी बनी कि लोग इस तरफ उन्मुख हुए। इन परिस्थितियों के मूल कारण शासक वर्ग के गृह-युद्ध, निरंकुशता एवं उलेमा वर्ग की कटु-जातीयता आदि में खोजे जा सकते हैं। इन सब ने ऐसी स्थिति उत्पन्न कर दी कि मानव को विवश होकर ईश्वरोन्मुख होना ही पड़ा। सुनीता पुरी के अनुसार-''जिस प्रकार धार्मिक विचारकों ने कुरान तथा इजमा के आधार पर अपने सिद्धान्तों की व्याख्या दी उसी प्रकार सूफियों ने भी अपना रास्ता कुरान तथा सुन्नत के भीतर से ही निकाला है परन्तु उनके मार्ग व दिशा हमेशा शरीयत से मेल नहीं खाते।''

परमात्मा अज्ञेय, अलौकिक तथा सृष्टि से अतीत और परे है। इस्लाम का एकेश्वरवाद परमात्मा के सिवाय किसी देव सत्ता को स्वीकार नहीं कर सकता। इस्लाम में बहुदेववाद पाप माना गया है। इसके अनुसार ईश्वर एक है और वही सर्वशक्तिमान है। इस्लाम (शरीयत) परमात्मा और मनुष्य के बीच अन्तर पर अधिक जोर देता है। रामपूजन तिवारी के अनुसार-''इस सिद्धान्त के अनुसार परमात्मा एक है और उसके सिवा दूसरा कोई नहीं है। वह सर्वशक्तिमान है। उसकी तुलना नहीं की जा सकती है। अपने जैसा वह आप है। उसकी सर्वशक्तिमत्ता क्षुण्ण नहीं की जा सकती है और न उसकी बराबरी का कोई और है। उसके नियम-कानूनों में कोई दखल नहीं दे सकता।..... उसका न्याय उसी का न्याय है उसमें कोई व्यवधान नहीं डाल सकता वह अवतार नहीं लेता..... परमात्मा और मनुष्य के बीच अन्तर पर कुरान अत्यधिक जोर देता है फिर भी यह मानता है कि मानव अन्य प्राणियों से भिन्न है और ईश्वर विधान को समझने में समर्थ हो सकता है।''

सूफी यह मानते हैं कि परमात्मा के साथ मिलन सम्भव है। अन्य धर्मों के रहस्यवादियों की तरह सूफियों का चरम लक्ष्य भी परमात्मा के साथ मिलन है, उसके साथ एकत्व प्राप्त करना है। सम्पूर्ण रुप से बिना किसी फल की आशा किये अपने आपको समर्पण कर देना सूफियों का धर्म है। सूफी मानते हैं कि सांसारिक प्रलोभनों से दूर रहकर साधक अपने अन्तःकरण को शुद्ध करता है तथा प्रेम के द्वारा उसके साथ एकत्व को प्राप्त करता है। वे परमात्मा को प्रियतम कहकर सम्बोधित करते हैं। परमात्मा और मनुष्य के बीच इसी सम्बन्ध की कल्पना सनातनपंथी इस्लाम नहीं कर सकता।

वास्तव में सूफी अपने लक्ष्य के प्रति ज्यादा सजग थे। उनके ध्यान में यह हमेशा बना रहा कि वे किसी नये धर्म को स्थापित करने नहीं जा रहे हैं अपितु वे इस्लाम के नियमों पर ही सही-सही चल रहे हैं, जिसके अन्तर्गत वे कुरान की व्याख्या अपने अनुसार किया करते थे। उन्होंने यह सिद्ध करने का पूर्ण प्रयास किया कि वास्तव में सूफी धर्म के बीज कुरान में ही हैं। इसके लिए उन्होंने मुहम्मद साहब का भी सहारा लिया। सूफी कुरान के बाचनों का अर्थ अपने ढंग से करते थे, जो कुरान के प्रचलित अर्थों से भिन्न हुआ करता था। सूफियों का जोर आध्यात्मिक और रहस्यवादी व्याख्या पर अधिक

हुआ करता था। सूफियों का कहना था कि वे ईश्वर के विशेष कृपापात्र हैं, उन्हें अन्तर्दृष्टि प्राप्त है जिससे परम सत्य का ज्ञान उन्हें होता है इसीलिए वे हजरत मुहम्मद के वचनों और कुरान शरीफ का गूढ़ार्थ समझ पाते हैं। यदि अपनी किसी बात का समर्थन सूफी कुरान में नहीं पाते तो वे हदीसों का हवाला देते। हदीस मुहम्मद साहब के इस प्रकार के वचन हैं जिनके सम्बन्ध में मुसलमानों का विश्वास है कि कुरान के अतिरिक्त भी बहुत कुछ उन्हें दिव्य- दृष्टि से ज्ञात हो जाता था और उसके सहारे वे बहुत से धार्मिक, नैतिक अथवा सैद्धान्तिक मामलों में अधिकारपूर्वक आदेश देते थे।

प्रायः सभी सूफी इस्लाम को मानने वाले थे साथ ही अपने सिद्धान्तों का विवेचन करते समय वे कुरान को विशेष रुप से ध्यान में रखते थे। अपने इन्हीं विचारों के कारण उन्हें अनेक प्रकार के विरोधों का सामना करना होता था। यही कारण है कि सूफी और भी अधिक आध्यात्मिक और रहस्यवादी होते चले गये। सनातनपंथी इस्लाम की कट्टरता और कानून की पाबन्दी से समझौता करना प्रायः आसान नहीं होता था क्योंकि सूफी नित्य स्वरुप पर उतना जोर नहीं देते थे। फिर भी सूफी अपने मत पर अडिग रहे। रोमिला थापर के अनुसार-''सूफी लोगों ने परमात्मा के प्रेम द्वारा परमात्मा से मिलन होने की अपनी रहस्यवादी दार्शनिक स्थापना के साथ फारस में दसवीं शताब्दी में महत्ता प्राप्त की थी। कट्टर इस्लाम ने ऐसी नीतियों का विरोध किया और सूफी विधर्मी समझे जाने लगे। इनकी भाषा अत्यधिक प्रतीकात्मक तथा गोपनीय हो गयी। कभी-कभी वे किसी पीर या शेख जो हिन्दुओं के गुरु के सदृश होता था, के अधीन संघ बना लेते थे, जिसके सदस्य फकीर या दरवेश कहलाते थे। कुछ संघों ने विशेष धार्मिक क्रियाएँ अपना लीं जो सम्मोहक होती थीं, जैसे तब तक नृत्य करते रहना जब तक भाव समाधि न आ जाए।''

विभिन्न देशों में फलता-फूलता सूफी भारत में प्रवेश करता है जिससे पहले उसका स्वरुप लगभग निर्धारित हो चुका था। इसके मौलिक तथा नैतिक सिद्धान्त लगभग निश्चित हो चुके थे अनेक सूफी सिद्धान्तों को विभिन्न रहस्यवादी विचारधाराओं के द्वारा पुष्ट भी किया गया जिसका विकास अनेक युगों की साधना से किया गया। यद्यपि भारत में सूफियों का विस्तार उसके पूर्ण रुप से विकसित हो जाने से पहले-पहले हो चुका था लेकिन फिर भी यह भारत में कट्टर इस्लाम से भी ज्यादा प्रभावी हुआ। तेरहवीं-चैदहवीं शताब्दी के आस-पास भारत में जगह-जगह सूफी खानकाहों का विस्तार होने लगा।

❐❐❐

1. (शोधार्थी) हिन्दी साहित्य, लॉड्र्स विश्वविद्यालय, अलवर, राज.

और... ब्लॉसम सूख गये...

–ज़किया ज़ुबैरी

पार्क में बहार का मौसम बेहद सुन्दर होता है। चारों तरफ़ हरी हरी घास... उस घास की ओर देखने से आँखों में ठंडक महसूस होती है... चिड़ियां चीं-चीं कर सारे वातावरण को जीवंत बना देती हैं। ज़रा गर्मी बढ़ती तो ब्लॉसम्स अपने अपने पेड़ों को गुलाबी कपड़ों से संवार कर दुल्हन बना देते हैं। जिस सड़क पर जीना रहती है वो निजी रोड कहलाती है। सड़क के दोनों ओर हर घर के सामने एक एक ब्लॉसम का पेड़ लगा हुआ है।

"हेलो मिस्टर ब्राउन..."

"आप सामने वाले घर में रहती हैं ना?" मिस्टर ब्राउन ने जैसे पहले से तय कर रखा था कि जब भी मौक़ा मिलेगा पहला सवाल यही करेंगे...

जीना ने मुस्कराते हुए कहा "जी हाँ..."

"आपके डैडी से मुलाक़ात होती रहती है जब वे आफ़िस जाने को निकलते हैं। दो चार मिनट बात तो हो ही जती है।"

"जी... वो... वो... मेरे डै...डैड... डैडी नहीं हैं... दरअसल... मेरे पति हैं वे!"

"ओह! आई ऐम सॉरी... मुझ से ग़लती हो गयी...!"

उनका चेहरा शर्मिंदगी से लाल हो गया। गोरे रंग का एक ये नुक़्सान है कि थोड़ी सी बात गड़ बड़ हुई और गोरा आदमी तरबूज का गूदा बन जाता है... जीना ने कहा, "मिस्टर ब्राउन, आप इतने शर्मिंदा ना हों... मेरे साथ ऐसा होता रहता है... अब तो मैं आदी हो गयी हूं।" मिस्टर ब्राऊन चुप ना रह सके, मन की बात कह ही दी.... "मगर वो तो आपसे काफ़ी बड़े दिखते हैं।... एक बात बताइये... माता पिता की पसंद थी या आपने ख़ुद ही चुना उनको?"

"मिस्टर ब्राउन, जब मेरी शादी हुई थी, उन दिनों अपनी पसंद बताना गुनाह माना जाता था। अगर हिम्मत करके किसी लडकी ने मुंह खोल दिया तो बस समझिये कि मुसीबत आ गई... सवालों की बाढ़ आ जाती थी।"

"कैसे सवाल?" मिस्टर ब्राउन ने चौंकते हुए पूछा।

"कहाँ मिलीं... कैसे मिलीँ... कितनी बार मिलीँ... लड़का

बदमाश लगता है, शरीफ़ घरों की लड़कियों को फंसाता है... उसका नाम पता दो उसके घर वालों से उसकी शिकायत की जाएगी..."

" मेरी समझ में नहीं आ रहा है कि आपके समाज में ऐसा क्यों होता है... रहना तो आप दोनों को साथ था... क्या माता पिता पहले ख़ुद साथ रहकर ठोंक बजाकर देखते थे की लड़का किसी काम का है या नहीं...!''

यह कहकर मिस्टर ब्राउन शरीर सी मुस्कराहट के साथ जीना को देखने लगे... जीना को कुछ बुरा तो लगा मगर कहीं कुछ अच्छा भी लगा... उसको माँ बाप से शिकायत थी की क्यों उसकी शादी इतनी जल्दबाज़ी में करके उसे अपने मुल्क से देश निकाला दे दिया... और उस पर सितम यह कि पति साहब को उसके देश से चिढ़ थी... नफ़रत करते थे उसके प्यारे से देश से...

"अरे आप चुप क्यों हो गईं... क्या मैंने कुछ ग़लत कह दिया?"

जीना चुप रही... केवल मुस्कुरा भर दी।

"आपकी मुस्कुराहट बहुत प्यारी है..."

"जी थैंक्स..." कहकर वो आगे बढ़ने लगी तो मिस्टर ब्राउन ने उससे नाम मालूम करना चाहा... उसने 'जीना' कहकर फिर एक क़दम बढ़ाया तो वे फिर बोले कि ये नाम किस भाषा का है... उसने कहा हिन्दुस्तानी भाषा और इस बार बस भाग जाना चाहती थी कि वे फिर बोल उठे...

"ये नाम तो हमारी अंग्रेज़ी भाषा में भी होता है।" मिस्टर ब्राउन ने जल्दी से एक और वाक्य उछाला... जैसे डर हो कि जीना ग़ायब ना हो जाए...

"आपकी भाषा में इस नाम का मतलब क्या होता है?" जीना ने पूछ लिया।

"कोई ख़ास मतलब नहीं... नाम के मतलब से क्या मतलब ये तो बस एक नाम है..."

"हमारी भाषा में अधिकतर नामों के मतलब होते हैं... जैसे मेरे नाम का मतलब है... 'जीवन'..'ज़िन्दा'।"

"क्या आपके यहाँ 'मुर्दा' नाम भी होता है?"

"हाँ होता है, जब कोई मर जाता है तो उसका नाम मुर्दा हो जाता है!"

मिस्टर ब्राउन ज़ोर से हंस पड़े... "वेल सेड!" कहकर ख़ामोश हो गए और जीना तक़रीबन दौड़ती हुई आगे बढ़ गई... वह पार्क की ओर जा रही थी... सैर करने... पति को रुख़्सत करके वो सैर करने निकल जाती है क्योंकि यही पल तो उसके अपने होते हैं... जब वह अपने आपको आज़ाद पंछी महसूस करती,

तरह तरह के हरे रंगों के दरख़्त और उनके मोटे और मज़बूत जवान तनों और पत्तों से भारी लचकीली शाखों की तरफ़ से आती हवा की सरसराहट उसके दिल की धड़कन को तेज़ कर देती...वो और तेज़ चलने लगती जितना तेज़ चलती हवा भी उतनी ही तेज़ी से उसे स्पर्श करती उसके काले रेशमी बालों को छेड़ती कभी आगे और कभी पीछे से चुपके से आकर बालों को उड़ाती....और फूलों की खुशबु में बसा प्यार पेश कर के खो जाती... उसके शरीर में एक झुरझुरी सी आ जाती एक बार फिर से जवान होने का एहसास उसके गिर्द चिमट जाता... पार्क में भी वो सीधी जाकर अपनी उस लकड़ी की बेंच पर टेक लगाकर बैठ जाती सर भी पीछे टिका कर आँखें आधी बंद और आधी खुली... लम्बी लम्बी पलकों पर जमी हुई उसकी थकन नज़र आती दर्द झाँक रहा होता मगर चिड़यों की चहचहाहट उसकी थकान को अपने सुरों के साथ उड़ा ले जातीं... और फिर हवा में गोता लगाती हुई वापस आतीं और नीचे को उतर आतीं। ऐसे चक्कर बार बार लगाकर जैसे जीना को जीना सिखातीं... और मजबूर कर देतीं उसको अपने सपनों से बाहर निकल आने को... वह बारिश में नहाई गुलाब की पंखड़ियों की तरह पवित्र और भगवान के चरणों में जाने को बेताब महसूस करती और तेज़ी से खड़ी हो जाती अपनी सैर शुरू करने के लिए... अभी तो वापस जाकर घर के सारे काम भी निपटाने हैं... मन ही मन मुस्कुराती, मिस्टर ब्राउन के जुमले पर...

सोचती भी है... आख़िर वह इतना डर क्यों जाती है जब कोई उसके पति को उसका बाप समझता है। वो देखने में लगते तो बाप ही हैं!! और वो मुझसे बड़े भी तो हैं इतने कि बाप लग सकें... जितनी तेज़ उसकी चाल थी उससे कहीं अधिक तेज़ थी उसकी सोच की रफ़्तार...

पार्क में वॉकिंग ट्रैक्स बने हुए हैं... जीना उसके सात चक्कर लगाती है तो दो मील हो जाते हैं। फिर घर से पैदल ही जाती और वापस भी आती है।

कुछ लोग कुत्ते भी ले आते हैं। जीना को कुत्तों से डर लगता है... ऐसे में एक तरफ बेंच पर बैठ कर अनुलोम विलोम करने लगती है। कुत्तों के हटते ही फिर तेज़ कदम चलकर सातों चक्कर पूरे कर लेती है। अधिकतर उस पार्क में पति-पत्नी साथ आते हैं या फिर पति बच्चे और कुत्ते साथ लेकर वॉक कराने आते हैं। कुछ वर्षों पहले उसके पति भी साथ आया करते थे। दोनों सवेरे सवेरे निकल जाया करते थे।

यही बातें सोचते सोचते घर पहुँच गई। अब सारा दिन घर के काम और शाम होते ही सबको बारी बारी स्टेशन से लाना... और अलग अलग स्कूलों से लाना... अपने लिए समय ही कहां होता है उसके पास... इसी लिए वो पार्क की सैर को इतनी अहमियत देती है।

आज वो मिस्टर ब्राउन के बारे में ही सोचती रही कि मैं भी कितनी उल्लू हूँ जो मुद्दतों मिस्टर ब्राउन को घर और बाहर काम करने वाला हेल्पर समझती रही। काला बदरंगा सा ढीला ढाला पतलून ऊपर एक

चौखाने की आधी खुंसी और आधी बाहर को लटकती हुई कमीज़ सर्दियों में उसी के ऊपर एक स्लेटी कम्बल जैसी जैकिट पहन लेना। जीना उन्हें तकरीबन रोज़ ही शाम सवेरे देखती थी पर कभी परिचय नहीं हुआ था आज पति ने जाते जाते उसको भी बुलाकर परिचय करवा दिया था।

अचानक पति महोदय ने कह दिया कि मैं बहुत थक जाता हूँ वॉक पर जाने से दफ़्तर में नींद आने लगती है। जीना अच्छा कहकर चुप रही... ऐसा लगता जैसे जीना के शरीर में कोई बिजली का बटन फ़िट हो बस उसको खोलना बंद करना होता हो... अगर ऐसा न होता तो भारत से आकर यहाँ जीवन बिताना असंभव हो जाता। वह सोचती अगर कोई विकल्प न हो तो चुप रहकर हालात से समझौता कर लेने में ही अक्लमन्दी है।

पार्क में बहार का मौसम बेहद सुन्दर होता है। चारों तरफ़ हरी हरी घास... उस घास की ओर देखने से आँखों में ठंडक महसूस होती है... चिड़ियां चीं-चीं कर सारे वातावरण को जीवंत बना देती हैं। ज़रा गर्मी बढ़ती तो ब्लॉसम्स अपने अपने पेड़ों को गुलाबी कपड़ों से संवार कर दुल्हन बना देते हैं। जिस सड़क पर जीना रहती है वो निजी रोड कहलाती है। सड़क के दोनों ओर हर घर के सामने एक एक ब्लॉसम का पेड़ लगा हुआ है। एक बार वह सैर से वापस आई तो मिस्टर ब्राउन अपने सामने वाले बगीचे में घास काट रहे थे। गर्मियों में घास बहुत तेज़ी से बढ़ जाती है हर सप्ताह काटनी पड़ती है। सर्दियों में दो दो महीने तक काटने की आवश्यकता नहीं होती। मिस्टर ब्राउन, जीना को देखते ही लॉन काटने की मशीन रोक करके खड़े हो गए... जीना भी 'हेलो मिस्टर ब्राउन' कह कर उनके घर के सामने वाले फ़ुट पाथ पर खड़ी हो गई।

"वॉक कैसी रही जीना? कुत्तों ने परेशान तो नहीं किया?" जीना एक सेकण्ड को रुकी... सोचने लगी... कितने जीवंत इंसान हैं मिस्टर ब्राउन... बातों को याद रखते हैं। और सब से वही बात करते हैं जो उनकी मन-पसंद होती है। जीना अक्सर अपने घर की खिड़की से देखती है कि हर आने जाने वाला मिस्टर ब्राउन से हंस हंस कर बात करता है। यहाँ तक कि उसके अपने पति भी - जिनको हर समय, वक़्त की कमी महसूस होती है... वो बोलते कम... काम ज़्यादा करते। उस से भी कहीं अधिक अख़बार पढ़ते हैं। घर में चार अख़बार आते हैं - एक उर्दू एक हिंदी का और दो अंग्रेज़ी के अखबार आते हैं। जो दिनभर में थोड़ा सा समय बचता तो वे उसका सबसे अच्छा उपयोग अखबार का उदहारण दे दे कर वार्तालाप करना समझते थे... यही उनकी हॉबी है। वो सवेरे दस बजे घर से जाते हैं और रात ग्यारह बजे लौटना होता है। छुट्टी के दिन भी दफ़्तर पीछा नहीं छोड़ता। क्या पता.... या वो दफ़्तर का पीछा नहीं छोड़ते मगर मिस्टर ब्राउन के मीठे स्वभाव ने उनको भी अपनी ओर आकर्षित कर लिया है। जीना सोचती है कि मिस्टर ब्राउन खुद भी क्यों कहीं घूमने या किसी के घर मिलने नहीं जाते हैं... मगर इतनी दोस्ती नहीं हुई थी कि ऐसे निजी सवाल पूछने लगती।

एक दिन जब जीना ने बच्चों को लाने के लिए कार निकाली तो उसकी कार के पास तेज़ तेज़ चलकर आए और कहा आज बाईं ओर से जाना... दाहिनी ओर से रास्ता बंद है। वो तो ये कहकर चले गए पर जीना को फिर सोचने पर मजबूर कर गए कि कैसा फ़रिश्ता इन्सान हैं ये मिस्टर ब्राउन... जब बच्चों को लेकर वापस आई तो भी इंतज़ार में खड़े थे मालूम करने के लिए कि उन्होंने ठीक किया रास्ता बदलवाकर या कहीं कोई मुश्किल तो नहीं हुई। जीना ने बहुत धन्यवाद् किया और अपने बच्चों से भी थैंक्स कहलवाया। हालाँकि यहाँ के बच्चों को विस्तार से समझाए बिना एक इंच भी इधर से उधर खिसकाना संभव नहीं होता है पर आज उन बच्चों को भी शायद मिस्टर ब्राउन का कोमल स्वभाव पसंद आ गया था।

जीना बच्चों को लेने जाने से पहले ही तीनों के घर में पहनने के कपड़े निकाल कर रख देती है... सैंडविच और दूध मेज़ पर परोस देती है... बच्चे बस सीधे जाकर टीवी के सामने बैठना चाहते हैं....जीना इस मामले में बहुत सख़्त है।

बच्चों को फ़ौरन ऊपर जाकर हाथ मुंह धोकर कपड़े बदल कर आने को कहती है। पर बेटा फिर भी कोशिश करता कि कोई चक्कर चला कर जल्दी से टीवी पर अपना प्रोग्राम देखने के लिए बैठ जाए, बाकी के काम बाद में भी हो सकते हैं। पर जीना नहीं मानती इस बात को। तो फिर भागता ऊपर, टी वी कि आवाज़ तेज़ करके, जीना मुसकुरती रहती है। उसका मानना है कि उस हद तक सख्ती की जानी चाहिए जितनी बर्दाश्त की जा सके। हद से आगे बढ़ने से अपना अहम् बीच में आ जाता है और बच्चे विद्रोही हो जाते हैं।

बच्चों को घर लाने के बाद से जीना रसोई ही में काम करती रहती है। मगर बच्चे अपने काम समय के अनुसार करते हैं। जब पढने बैठते तो जीना ऊपर जाकर देखती कि होमवर्क कर रहे हैं कि नहीं... बच्चों को खिला पिलाकर सुलाने के बाद पति की प्रतीक्षा करना सब से कठिन काम होता है... ग्यारह बजे रात को बच्चों को अकेला सोता छोड़कर स्टेशन से पति को लेने जाती है तो उस समय मिस्टर ब्राउन के कमरे की बत्ती जल रही होती है। वह सोचती इतने बूढ़े होने के बावुजूद अभी तक जाग रहे हैं और सुबह दस बजे से बाग़ में काम शुरू कर देते हैं।

खिड़की से देखती कि मिस्टर ब्राउन जैसे फूलों से बातें किया करते हैं। उनके सामने वाले बाग में एक बड़ा गहरे गुलाबी रंग का फूल है वो उसको अक्सर खड़े होकर देखते मुस्कुराते और हलके से छू कर आगे बढ़ जाते जैसे उसको शाबाशी दे रहे हों उनके बाग़ की रौनक़ बनने की। कभी खुदाई करने लगते तो कभी पानी डालने लगते। उसने सोचा वो भी एक दिन उस फूल को क़रीब से देखेगी... दूर से बहुत सुन्दर

बड़ा सा गुलाब जैसा लगता था...

वह ये भी सोचती क्या मिस्टर ब्राउन अकेले रहते हैं... क्या खाना भी ख़ुद ही पकाते हैं...!

उसने सोचा वह ये सवाल अवश्य पूछेगी, अगर वो अकेले रहते हैं तो उनको कभी कभी खाना पकाकर दे दिया करेगी... इससे भगवानजी अवश्य प्रसन्न होंगे.

उसने ये नहीं सोचा कि मिस्टर ब्राउन प्रसन्न होंगे... उसके लिये हर जगह पहला नम्बर भगवानजी का ही होता है।

एक दिन पति को स्टेशन छोड़ने जाना था तो साथ ही निकली और पति के साथ ही मिस्टर ब्राउन को हेलो कहने चली गई... और तभी अपना प्रश्न भी पूछ लिया कि क्या वे अकेले रहते हैं या खाना पकाने वाला कोई है। उन्होंने कहा मेरी वाइफ़ खाना पकाती है। अगला सवाल पति ही ने पूछ लिया कि कभी उनको बाहर नहीं देखा क्या बात है वो बाहर क्यों नहीं निकलतीं? मिस्टर ब्राउन ने काफ़ी दुखी आवाज़ में कहा, "उसे एक अजीब किस्म का स्किन कैंसर है... काफ़ी एडवांस स्टेज पर है... बाहर निकलना मना है... हम लोग शाम को कभी कभी कार से बाहर बेटी के घर चले जाते हैं... उसको अकेले छोड़ नहीं सकता इसी लिए मैं भी कहीं नहीं जाता... आगे और पीछे के गार्डन में टाइम पास करता हूँ... मैं थक जाता हूँ पर समय गुज़रता ही नहीं है... अपने इस एरिया में रहने वाले सभी बहुत अच्छे लोग हैं... उन्ही से बात करके समय बिता लेता हूँ।

अचानक वातावरण में एक दर्द का अहसास फैल गया। आज मिसेज़ ब्राऊन के बारे में पता भी चला तो दिल में कचोट सी होने लगी। वैसे यह समय भी क्या चीज़ है जीना के लिये कम पड़ जाता है और बेचारे मिस्टर ब्राउन से काटे नहीं कटता... काश मैं इनसे समय उधार ले पाती...! मगर उधार तो उनके दुःख लेने चाहियें। अपने भीतर के दर्द को कभी अपनी आँखों तक नहीं आने देते मिस्टर ब्राऊन।

"जीना, क्या सोचने लग गईं?''

"कुछ नहीं मिस्टर ब्राउन''

"ये मिस्टर ब्राउन कौन है?"

"आप...मिस्टर ब्राउन।"

"मैं तो रॉबिन हूँ, मगर तुम रॉब कह सकती हो।"

"आप तो इतने बड़े हैं मुझसे'' जीना ने धीरे से कहा कि कहीं मिस्टर ब्राउन बुरा ना मान जाएं.''

"तुमसे किसने कहा कि मैं तुमसे बड़ा हूँ.''

अब जीना फँस गई थी वो घबरा गई उसका चेहरा लाल होने लगा. जल्दी जल्दी सॉरी सॉरी कहने लगी... मिस्टर ब्राउन ने जीना के सर पर हाथ रखते हुए कहा, "जीना सुनो, और याद रक्खो जो लोग तुमसे बड़े हैं उनका नाम लेने से उनकी कोई बेईज्ज़ती नहीं होती है... एक बराबरी और अपनेपन का अहसास होता है। इज्ज़त बड़ों और छोटों दोनों को एक दूसरे की करनी चाहिए।"

"हाँ तो बताओ तुम मुझे क्या कहकर बुलओगी?''

जीना ने घबराते हुए कहा, "ब्राउन..."

असल में पति के सामने वो घबरा रही थी क्योंकि वो जीना से अपने को पतिजी कहकर संबोधित करने को कहते थे। मिस्टर ब्राउन के ये विचार सुनकर जल्दी से बोले, "चलो जीना वरना मेरी ट्रेन छुट जाएगी।" वो जल्दी से कार की ओर भागी और पीछे का दरवाज़ा पति के लिए खोल दिया और अपनी ड्राइवर की सीट पर जाकर बैठ गई और स्टेशन की ओर चल दी। दस मिनट बाद वापस आई तो मिस्टर ब्राउन बाहर ही खड़े थे। जीना जैसे ही कार से बाहर निकली तो उन्होंने जीना को आवाज़ दी। वह अपने घर के अंदर जाने के बजाए फिर से मिस्टर ब्राउन के पास चली गई.

"मेरा नाम क्या है?'' शरारत से मुस्कराते हुए पुछा.

"रॉब'' जीना ने जल्दी से जवाब दिया। रॉब हंसने लगे और जीना की पीठ ठोंकी

शाबाश शाबाश कहा। जीना बच्चों कि तरह खुश हो गई, और हंसने लगी. ''तुम्हारी हंसी बहुत ख़ूबसूरत है... ख़ूब हंसा करो.''

"रॉब अब मैं घर जा सकती हूँ?"

"जीना तुम्हें पूछने की ज़रूरत नहीं है, एक्सक्यूज़ मी कहो और चली जाओ।" जीना को ये सारा व्यवहार बहुत नया पर बहुत अपना सा... अच्छा लग रहा था।

कितना सरल हो जाता है जीवन बिताना... हम लोग तो हर वक़्त रिश्ते निभाने के चक्कर में ही आधा जीवन गँवा देते हैं... हर वक़्त एक तनाव में रहते हैं... वह सोचने लगी रॉब के साथ इतना कम समय गुज़ारा है और कितना कुछ सीख लिया... और और उम्र का कोई दबाव भी नहीं... कितनी आसानी से हर बात कह देते हैं... कितनी सादगी और कितना प्यार होता है। जीना सोचने लगी अगर मेरे पिता जीवित होते तो शायद ऐसे ही होते।

खट से एक्स्कयूज़ मी कह कर फट से घर के अंदर जाने के लिए दरवाज़ा खोल ही रही थी कि रॉब ने आवाज़ दी.....

"अरे जीना एक मिनट के लिए वापस आओ। "

जीना ताले में चाभी लगी छोड़कर वापस दौड़ती हुई रॉब के पास पहुँच गई। जीना की आदत सी बन गई थी दौड़कर हर काम करने की। असल में जब पति आवाज़ देते और जीना आराम से चलती हुई पहुँचती तो वो हमेशा कहते, "ऐसी दुल्हन की चाल चलकर आ रही हो, जैसे पैरों में मेंहदी लगी हो!"

बार बार ये वाक्य सुनते सुनते, धीरे धीरे, तेज़ चलने की... फिर दौड़कर पहुँचने की आदत सी पड़ गई थी।

"जीना तुमने देखा कि तुम्हारे घर के सामने का ब्लॉसम्स का दरख़्त कितना बड़ा और कितना फूलों से लदा हुआ है...!"

जीना ने उस फूलों से लदे दरख़्त को देर तक निहारा और मुस्कुराते हुए उत्तेजना भरी आवाज़ में बोली, "सचमुच रॉब मैंने कभी ग़ौर से देखा ही नहीं था... " जीना के चेहरे की मुस्कुराहट और गहरी हो गयी।

"जीना ये कोई ख़ुशी की बात तो नहीं है।"

"तो फिर कोई दुःख की बात भी तो नहीं है मिस्टर ब्राउन!" जीना ने शरारत से मुस्कराते हुए 'मिस्टर ब्राउन' पर ज़ोर देते हुए कहा।

"फिर मिस्टर ब्राउन कहा!"

"आप जब जब डांटियेगा, मैं मिस्टर ब्राउन ही कहूँगी।"

"अच्छा तो तुम नटखट भी हो...!"

"जी...इ...ई...!" जीना ने थोड़ा खींचते हुए 'जी' कहा। वह स्तब्धचकित थी कि ये मिस्टर ब्राउन हर समय मुझे कुछ ना कुछ समझाते रहते हैं... आख़िर क्यों..!

उसने तेज़ी से कहा, "मैं सीधी सादी महिला हूँ।"

"तुम कोई महिला नहीं हो... तुम एक बच्ची हो, जिसे फलों की तरह 'पाल' डाल कर समय से पहले पका दिया गया है जैसे फलों के व्यापारी जल्दी और अधिक पैसा कमाने की लालच में अधपके फल तोडकर टाट या काग़ज़ में लपेट कर गर्म जगह में रख देते हैं तो फल जल्दी से पक जाते हैं तुम्हारे साथ यही किया गया है.... और याद रखो जीना ये अधूरापन तमाम जीवन बेचैन रखता है।"

जीना कुछ क्षणों के लिए चुप रही फिर बात बदलतते हुए बोली, "रॉब, आप ब्लॉसम्स की बात कर रहे थे। मुझे ब्लॉसम्स बेहद सुंदर लगते हैं। मैं पूरे साल वसंत ऋतु की प्रतीक्षा बड़ी बेचैनी से करती हूँ।

जब इन पेड़ों में हल्के हरे रंग की नन्ही मुन्नी कोंपलें फूटना शुरू हो जाती हैं और धीरे धीरे कत्थई रंग की शाखाएं चोला बदलने लगती हैं और हरी हरी हो जाती हैं फिर उनमें गुलाबी रंग शामिल हो जाता है... और अचानक एक सुबह हरी हरी पत्तियों की गोद में हल्के और गहरे गुलाबी फूल लिपट कर बैठ जाते हैं... और जैसे ही धूप निकलती है पूरी सड़क पर जोबन सा आ जाता है... दोनों ओर के पेड़ एक दूसरे से ऐसे चुपके चुपके मिलने और झूमने लगते हैं जैसे बरसों से बिछड़े प्रेमी... पूरी सड़क फूलों के गहने पहने दुल्हन सी बन जाती है।"

जीना एक सांस में बोले जा रही थी और रॉब उसको प्यार भरी नज़रों से देखते और सुनते जा रहे थे...

"जीना तुम कवयित्री हो क्या?"

"मैंने ऐसा क्या कह दिया रॉब जो अब आपने ये सवाल उठा दिया?''

"जीना तुम्हारे अंदर एक चिंगारी महसूस कर रहा हूं... अपने लिए समय निकालो कुछ लिखा पढ़ा करो... कभी कॉफ़ी का मग लेकर अपने बाग़ में चुप बैठ जाया करो एक कॉपी पेन्सिल लेकर... मैं तुमसे मिला तो अब हूँ तुमको बरसों से आते जाते देखा करता हूँ. मैं और मेरी वाइफ जब हम खिड़की के पास बैठकर कॉफ़ी पीते थे तुमको हमेशा भागते हुए देखा करते थे। मेरी वाईफ ही ने मुझसे कहा देखो ये बच्ची कैसे सारा दिन दौड़ती रहती है।"

"चार चार बच्चे हैं तो फिर उनके लिए कौन दौड़ेगा।"

"चार बच्चे हैं, हमने तो तीन ही देखे हैं।"

"एक आप लोगों के उठने से पहले ही बेबी-सिटर के पास छोड़ आती हूँ।"

"बेचारा बच्चा और तुम पर तो तरस आता है।"

जीना को बेचारी शब्द से चिढ़ है... और कोई उस पर तरस खाए, इसके लिये वह तैयार नहीं है। वह हमेशा से एक मज़बूत औरत बनकर जीना चाहती है... सहानभूति जैसे इमोशन की उसके जीवन में कोई जगह नहीं है... सहानभूति इन्सान को कायर बना देती है... उसके अरमानों में ज़ंग लगा देती है एक महत्वाकांक्षी इन्सान कमज़ोर पड़ जाता है।

उसने कहा... "रॉब में बेचारी नहीं हूँ... मैं कोई मजबूर इन्सान नहीं, बल्कि एक मज़बूत औरत हूँ... और हर क़दम को सोच समझकर उठाती हूँ... क्योंकि मैं हर चुनौती का सामना करना चाहती हूँ।"

रॉब का चेहरा ख़ुशी से खिल उठा उसने हाथ फैला दिया जैसे कह रहा हो 'दे ताली.!!'

जीना ने उसके हाथ पे जोर से हाथ मारा और हंसने लगी... "मगर रॉब आपको याद है न हम

ब्लॉसम्स की बात कर रहे थे? मैं आपसे ये मालूम करना चाहती हूँ कि ये क्या बात हुई कि हमारे घर के सामने वाला पेड़ इतना कमज़ोर और छोटा सा क्यों है?"

"तुम्हारे ही जैसा तो है..." यह कहकर रॉब हंसने लगे...

"तो आपका क्यों इतना लम्बा चौड़ा गबरू जवान जैसा है...! आप जैसा क्यों नहीं है?''

"ओ माई गॉड... जीना तुम तो कमाल की लड़की हो... मैं तुमको ग़लत समझ रहा था..."

"नहीं ऐसा नहीं है रॉब आपने मेरी जो ग़लतियाँ सुधारी हैं वो बाक़ायदा मुझमें थीं... मगर कभी किसी ने नहीं बताई थीं...!"

"अच्छा मैं वादा करता हूँ पता लगा कर ही रहूंगा कि तुम्हारा वाला पेड़ क्यों बीमार बीमार सा लगता है.!"

उस दिन जीना को बाहर देखकर रॉब भी निकल आए... अब वो कभी कभी ही बाहर नज़र आते हैं... जीना को भी अब हर समय दौड़ना नहीं पड़ता है... बच्चे यूनिवर्सिटी और कॉलेज जाने लगे हैं... आज अच्छी धूप निकली तो और लोग भी बाहर निकले हुए हैं...

"जीना अब तो तुम्हारी नौकरी ख़त्म हो गई अब क्या करती रहती हो?"

"नौकरी तो अब शुरू हुई है. उसी का तो खाती हूँ।" पहली बार रॉब को जीना की बात समझ में नहीं आई। वे इस बात को टाल गए। ये लोग बात को कुरेदते नहीं हैं... हालांकि जीना स्वयं चाहती थी कि रॉब को बताकर दिल हल्का करले... पर उन्होंने पूछा ही नहीं।

रॉब ने कहा, "जीना अपनी ये सड़क देखो किस क़दर सुन्दर लग रही है... जैसे कोई युवती नहाकर श्रृंगार कर के निकली हो... ये फूल भी कितनी रौनक़ और सुन्दरता पैदा कर देते हैं।"

"मगर इनका जीवन बहुत छोटा होता है... तीन चार दिन में ये झड़ना शुरू कर देते हैं।"

"हाँ जीना, हमारे जीवन ही की तरह होता है... कुछ पता नहीं कब उठे और चले गए।"

"आज आप बहुत उदासी भरी बातें कर रहे हैं।"

"मेरी वाइफ़ की तबीयत बिगड़ती जा रही है। यह सोच कर ही डर लगता है कि अगर वो चली गई तो मैं अकेले कैसे जीवन बिताऊंगा।"

जीना को रॉब का ये कहना बहुत अजीब सा लगा क्योंकि उसको ये अहसास ही नहीं था कि पति-पत्नी में से एक के चले जाने से अकेलापन कैसे हो सकता है...! हाँ यह संभव है कि जीवन थोड़ा आसान और अपनी ख़ुशी से जीने लायक हो जाए... वो चुप खड़ी इन तानेबानों में उलझी हुई थी कि रॉब जाने

के लिए मुड़ गए... एकदम से जीना ने आवाज़ दी....

"रॉब ज़रा रुकिये... मुझे ये बताते जाइये कि आजकल जो ये सुन रहे हैं कि कोई करोना नाम का वायरस निकला हुआ है इससे कैसे निपटा जाये?"

जीना ने आज पहली बार रॉब से ख़ुद पूछा, क्योंकि इस तरह की तमाम जानकारी रॉब जीना को बग़ैर पूछे ही दिया करते थे। रॉब ने तो जीना को जीने के अर्थ समझा दिए थे... पर आज वे सच में उदास थे अपनी पत्नी अपनी जीवन साथी अपनी दोस्त की बीमारी को लेकर चिन्तित!"

"जीना परेशान होने की ज़रूरत नहीं है... असल में सरकार को दो सप्ताह पहले 'लॉकडाउन' का ऑर्डर निकाल देना चाहिए था पर सरकार अभी भी विचार कर रही है। मगर तुम जीना अब से घर ही में रहना शुरू कर दो। बाहर बिलकुल मत निकलना। और हाँ... तुम्हारे तो पति रोज़ काम पर जाते हैं और सबके सम्पर्क में आते हैं इस लिए तुम उनसे भी दूरी बना कर रखो।"

यह कहकर रॉब के होंठों पर वही शरारत खेलने लगी जैसे वो जीना को छेड़ कर मुस्कराया करते थे... उनकी आँखों में भी शरारत उतर आती थी... जीना का जी चाहा कि वो एक बार रॉब को लिपटकर बाप के प्यार को महसूस कर ले... पर वो फिर जाने के लिए पलट गए थे... जीना ने इस बार रोका नहीं वो भी पलटकर घर की ओर चल दी।

जैसा रॉब ने कहा था कि सरकार लापरवाही बरत रही है वो बिलकुल ठीक था... क्योंकि उसने समाचार में भी सुना कि विपक्ष वाली पार्टी भी चीख़ चीख़ कर इल्ज़ाम लगा रही है और लोगों को घरों में बंद हो जाने को कह रही है... देखते देखते ही कैसा सन्नाटा छा गया। सड़क पर कोई चलता फिरता नज़र ही नहीं आता। जीना का दिल बैठ सा गया ये सोचकर कि क्या अब वो रॉब से भी नहीं मिल पाएगी... कैसे गुज़ारेगी ये समय? अजीब सा माहौल हो गया था... दूर सड़क पर हर वक़्त एंबुलेंस की पीं पां पीं पां से जी घबराता रहता था। पुलिस कारें भी अपना खतरनाक सा हॉर्न बजाती हुई दौड़ती फिर रही थीं... आसमान पर हर समय बोलने वाली चिड़ियाँ भी ख़ामोश सिर्फ़ उड़ती रहती थीं बिलकुल बेमक़सद सी। मक़सद से तो केवल एक काम हो रहा था वो जो एम्बुलेंस कर रही थी... वो सवारी ले तो जाती थी पर वापस नहीं लाती थी।

जीना कोशिश करती थी कि रॉब की दी हुई सीख को अहमियत दे और उसपर अमल करे... क्योंकि रॉब ने कह दिया था कि जीना तुम बस अब अपने को घर में बंद कर लो तो बस उसने बंद ही कर लिया था ये सोचकर खुश रहती थी कि जब इस महामारी से छुटकारा मिलेगा और वो रॉब से मिलेगी और उसे बताएगी कि उसने रॉब की दी हर हिदायत पर न सिर्फ खुद अमल किया है बल्कि अपने बच्चों को भी

फ़ोन कर के बताया और हर ओर फैलाया भी... पर आज कई दिनों बाद उसने सोचा चलो खिड़की से बाहर देखूं रॉब साहेब मुझे सिखाकर आप बाग़ को सँवारने में तो नहीं लगे हुए हैं... अगर ऐसा हुआ तो यहीं से आवाज़ देकर अंदर जाने का आज मैं हुक्म दूंगी... यह सोचकर मुस्कराने लगी और रॉब का कोई शैतानी से परिपूर्ण से जवाब सुनने के लिए तैयार...

अचानक याद आया कि उस दिन रॉब कितने उदास से थे... और उस दिन से बाहर भी नहीं निकले.... ना मालूम उनकी वाईफ कैसी होंगी.... इसी उधेड़बुन में उसने वह उठकर खिडकी से बाहर झाँका तो उसकी आँखें भीग गयीं... वो लहलहाते झूमते भीनी भीनी ख़ुशबू बिखेरते बलॉसम्स अपने पेड़ों से बिछड़ चुके थे... वो शाख़ से जुदा हुए फूल अपना अस्तित्व हार चुके थे... बिखर गये थे... उनकी पंखुड़ियां सड़क के किनारे पड़ी हुई अब भी सड़क पर आते जाते लोगों की ओर ताक रही थीं... कारें आते जाते सड़क पर पड़ी पंखुड़ियों को बेदर्दी से कुचल रही थीं... उनकी आह उनका कराहना कारों के अपने शोर में दब जाता था... वही हवा जो जवानी में उड़ उड़ कर उन फूलों की खुशबू चुरा चुरा कर हर ओर इतराती उड़ती फिरती थी आज वही हवा बेदर्दी से तेज़ रफ़्तार से चल चलकर रहे सहे बलॉसम्स को भी ज़ख़्मी कर-कर के बिखेर रही थी...

नज़र पड़ी कि रॉब के घर के बाहर एक एम्बुलेंस खड़ी थी... चन्द बलॉसम्स एम्बुलेंस की छत पर कुछ इस तरह फैल गये थे जैसे कोई डोली जा रही हो... जीना का दिल धड़का... ओह गॉड!... मिसेज़ ब्राऊन ठीक-ठाक हों... जीना का सोचना वहीं नहीं रुका... रॉब अब अकेले कैसे रहेंगे बेचारे! एम्बुलेंस के ड्राइवर और दो और लोग युनिफ़ॉर्म पहने हुये उतरे और घर में घुस गए। एम्बुलेंस बहुत ऊंची थी इस लिए रॉब के घर का दरवाज़ा नजर नहीं आ रहा था... थोड़ी देर में स्ट्रेचर पर किसी को लिए हुये आये और एम्बुलेंस में रख दिया...

जीना सोच रही थी कि वह तो मिसेज़ ब्राउन से कभी मिली भी नहीं... बिना एक बार भी मिले वे दुनियां छोड़ कर जा रही हैं... घर वाले लोग एम्बुलेंस की ओट में दूसरी ओर खड़े हुये थे....एम्बुलेंस चली तो दृश्य कुछ साफ़ दिखाई दिया... जीना ने देखा बेटी ने अपनी माँ, मिसेज़ ब्राऊन, को कस के पकड़ा हुआ था और दोनों सिसक-सिसक कर रो रही थीं...

❐❐❐

ब्रिटेन, संपर्क: zakiiaz@gmail.com, दूरभाषः 00-44-7957353390

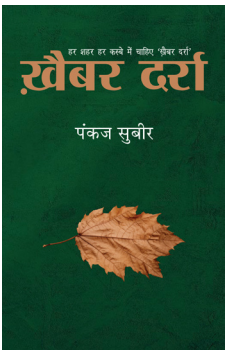

ख़ैबर दर्रा (कहानी संग्रह)
समीक्षक- अनीता सक्सेना
लेखक- पंकज सुबीर
प्रकाशक- राजपाल एंड सन्ज़, नयी दिल्ली
मूल्य- 325 रुपये / पृष्ठ- 176
प्रकाशन वर्ष- 2025

ख़ैबर दर्रा- संग्रह की कहानियाँ बहुत देर तक साथ बनी रहती हैं

पंकज सुबीर की कहानियाँ जाति-धर्म के अंतर को महत्त्व न देकर मानवीय रिश्तों को अहम् स्थान देती हैं। इस संग्रह की अधिकतर कहानियाँ इंसान की उस कमज़ोरी को लेकर लिखी गई हैं जो ईश्वरीय देन होती हैं, अर्थात् इसमें उस बच्चे की या उन माँ-बाप की ग़लती नहीं होती जिन्होंने उसे जन्म दिया है। ये कमज़ोरी क़ुदरतन होती है। इंसान की यह शारीरिक कमज़ोरी जिसको लेकर मन में कई गाँठें पल जाती हैं और ज़िन्दगी भर पीछा नहीं छोड़तीं, ऐसी कई कमज़ोरियों पर संग्रह की कुछ कहानियाँ हैं, जैसे- निर्लिंग, देह धरे का दंड और हरे टीन की छत। बच्चे जो जन्म से या फिर परिस्थितिवश कुछ शारीरिक समस्याओं से पीड़ित हो जाते हैं, उनका मर्म पंकज सुबीर ने कहानी के माध्यम से पाठकों तक पहुँचाया है। पहले समाज में ऐसी बातों को छुपाया जाता था, जिसके कारण बच्चे भी और परिवार के लोग भी बहुत तकलीफ़ झेलते थे लेकिन आज इन पर खुलकर बातें की जाने लगी हैं। थर्ड जेंडर को भी समाज में एक उचित स्थान मिलने लगा है। वे शर्मिंदगी को परे त्यागकर पढ़-लिखकर आगे आ रहे हैं और अच्छी नौकरी भी पा रहे हैं। 'देह धरे का दंड' और 'निर्लिंग' इसी प्रकार की समस्या तो बताती हैं लेकिन उसमें इन लोगों के ऊपर किये जा रहे शोषण का वीभत्स चेहरा भी सामने लाती हैं।

पंकज सुबीर की कहानियों में चाहे प्रकृति का वर्णन हो या घर का, होटल का या जंगल का, बहुत विस्तार लिये होता है। 'देह धरे का दंड' में अस्पताल का वर्णन, या 'बीर बहूटियाँ चली गयीं' में जंगलों का, स्कूलों का कॉलेज का, हर जगह लेखक की दृष्टि बहुत पैनी नज़र आई है। यहाँ तक कि स्टेशन पर वेटिंग रूम में बैठे दो लोगों और स्टेशन का दृश्य भी आँखों के सामने एक खाका-सा खींच देता है।

एक और विशेष बात मुझे नज़र आई, वह भी पुस्तक की शीर्षक कहानी 'ख़ैबर दर्रा' में कि यहाँ

कहानी में नया प्रयोग है, यहाँ पात्रों के नाम नहीं हैं, उन्हें पहला युवक या दूसरा युवक, युवती या उस आदमी के नाम से ही पुकारा है और कहानी आगे बढ़ती चली गई है। इस कहानी की शुरुआत तो एक मानसिक कुटिलता लिए गंदे विचार से हुई है, लेकिन अंत मानवीय चेतना के जाग्रत होने के साथ हुआ है, जो पढ़ने में अच्छा लगता है।

'बीर बहूटियाँ चली गयीं' में भी लड़का और लड़की ही केंद्र में हैं, इसको पढ़कर लगता है कि कहानी में इंसान का नाम होना उतना महत्त्वपूर्ण नहीं है जितना कथानक और दो लोगों के बीच की बातचीत। दो बच्चों की मासूमियत का भी चित्रण है इस कहानी में, उनके मन में उठ रहे सवालों का भी और पहाड़ों की कठिन ज़िन्दगी का भी। पंकज सुबीर फ़िल्मी गीतों का प्रयोग भी अपनी कहानियों में बख़ूबी करते हैं और कविताओं का भी। 'हरे टीन की छत' कहानी में भी चुने हुए साहित्यकारों की कविताएँ लेकर उन्हें कहानी में पिरोया गया है।

पहली कहानी का नाम भले ही 'एक थे मटरू एक थी रज्जो' हो पर यह कहानी जैसा कि लेखक ने कहानी में कहा 'दास्तान-ए-मटरू मियाँ' ही है। एक ऐसी दास्तान जिसमें जो होना चाहिए वो हो तो रहा है पर होकर भी नहीं है।

पंकज सुबीर अपने एक अलग तरह के लेखन के लिए जाने जाते हैं। इस संग्रह में भी पहली कहानी की शुरुआत कुछ अलग होती है लेकिन अंत तक आते-आते पाठक कहानी के अनेक शेड से गुज़रते हुए एक मार्मिक दृश्य पर ठहर जाता है। कहानी का नाम है 'एक थे मटरू मियाँ, एक थी रज्जो'। कभी हँसाती, कभी कुछ सोचने पर मजबूर करती कहानी कहीं-कहीं पर भरपूर व्यंग्य भी करती है।

दो सदियों के मेल को आपने बड़े बढ़िया तरीक़े से जोड़ा है 'जब आये थे, बीसवीं सदी थी जो वसंत और बहार की सदी थी अब इक्कीसवीं है जो पतझड़ लेकर आई है' इस एक वाक्य में आपने मटरू मियाँ से लेकर पार्टी और पार्टी कार्यालय तीनों का एक साथ हाल बता दिया है।

आपने इसे आगे नाम दिया है 'दास्तान-ए-मटरू मियाँ'। क़िस्सा गोई की शैली में मटरू मियाँ की जीवनी से यह कहानी शुरू होती है जो पढ़ते हुए, या कहें कि सुनते हुए चेहरे पर कई बार मुस्कान ले आती है। मसलन उनका नामकरण कैसे हुआ ? उनके चारों भाइयों की शक्लों का वर्णन रोचक है 'अब्बा जितने मोहर्रम-मोहर्रम थे, अम्मी उतनी ही ईदम-ईद थीं।' यह पढ़कर लगा एक नया मुहावरा बन गया। उसके आगे भी हास्य कई जगह व्यंग्य का साथ लिए मिलता है 'ऐसा लगता था मानो इंसान के नाम पर अब्बा नाम की फोटोकॉपी की ब्लैक एंड व्हाइट मशीन से किसी ने चार कॉपी निकाल दी हों'।

मटरू मियाँ की दादी का प्यार अपने बेटे और पोते के लिए इसी व्यंग्यतम और हास्य का पुट लिए शैली से उमड़ता है 'उनका बेटा यानि मटरू मियाँ के अब्बा उनके लिए चाँद का टुकड़ा थे। शायद वो उस ग्रह से आईं थीं जहाँ चाँद काले होते होंगे'। इसी तरह मटरू मियाँ जो निहायत गोरे-चिट्टे थे उनके लिए 'उनकी अम्मी मटरू मियाँ का शाही स्नान महीने में एक-दो बार ही कर पाती थीं, इसलिए मटरू मियाँ महीने में एक-दो बार ही अंग्रेज़ के बच्चे लगते थे' कहानी का हर वाक्य इसी तरह की उपमाओं और हँसी से भरा हुआ है। मटरू मियाँ का यह गोरापन उन्हें मोहल्ले की तमाम झाँकियों में कभी राम तो कभी कृष्ण बनाया करता था यहाँ तक कि वो सीता और द्रौपदी भी बन जाते थे। उनकी माँग हर कहीं थी। आयोजक उन्हें सुबह ही आकर बता जाते थे कि आज अच्छे से नहा लेना तुम्हें सीता या द्रौपदी बनना है।

मटरू मियाँ के थोड़े बड़े होने के बाद कहानी अपना रूप बदलती है। यहाँ किरदार आता है डी.डी. टी. का यानि दुर्गा दास त्रिपाठी, ढोलक वादक दामोदर और रज्जो का। ये चार किरदार ही इस कहानी के मुख्य पात्र हैं जो आपस में जब मिलते हैं तो एक नई कहानी को जन्म देते हैं। कहानी मटरू मियाँ से हटती तो नहीं लेकिन राजनीति के दंगल में उतर जाती है। पत्रकारिता, राजनीति और कूटनीति तीनों मिलकर शतरंज का खेल खेलते हैं। इस खेल में शतरंज के मोहरों की तरह इंसान को मोहरे बनाकर शतरंज खेली जाती है। खिलाने वाला बेदाग़ बचकर तीनों को उलझा देता है और अंत में मटरू मियाँ को उनका परिवार छोड़ देता है, डी.डी.टी. संसार छोड़ देते हैं बाक़ी दामोदर और रज्जो दोनों अपने-अपने परिवारों में लौट जाते हैं। एक बार फिर से कार्यालय और मटरू मियाँ एक जैसी खंडहर वाली स्थिति में आ जाते हैं। यहाँ पर दास्तान- ए-मटरू मियाँ का दर्दनाक अंत होता है और उस अंत की रिपोर्ट देने वाली पत्रकार पाठक के मन में देर तक हलचल मचाती रहती है यही इस कहानी की सफलता है।

एक बहुत बढ़िया कहानी लगी 'आसमां कैसे-कैसे'। यह पुस्तक की एकदम अलग मिज़ाज की कहानी है जो हमें उस काल में ले जाती है जब लोग अपने वचन के पक्के हुआ करते थे। लोग अमीर होते थे लेकिन जितने पैसों से, उससे ज़्यादा अपने दिलों से। इस कहानी में माँ साब, माया, राठी जी और सेठ राघवदास जी के निर्णय देर तलक याद रह जाने वाले हैं। बहुत बढ़िया कहानी है यह।

इस संग्रह की कहानियाँ बहुत देर तक साथ बनी रहती हैं। संग्रह की कहानियों में लगभग हर विषय पर बात की गयी है। अलग-अलग विषय की कहानियों को समाहित किये हुए यह संग्रह कई सारे सवाल छोड़ जाता है। वे सवाल जिनका उत्तर जानना बहुत आवश्यक है। एक अच्छे संग्रह के लिए लेखक को बधाई।

❐❐❐

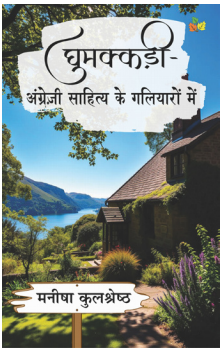

समीक्षक- स्मृति आदित्य

घुमक्कड़ी - (अंग्रेज़ी साहित्य के गलियारों में)

यात्रा संस्मरण

लेखक - मनीषा कुलश्रेष्ठ

प्रकाशक- शिवना प्रकाशन, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, बस स्टैंड के सामने, सीहोर मप्र 466001

मोबाइल- 9806162184, ईमेल- shivna.prakashan@gmail.com

मूल्य- 350 रुपये प्रकाशन वर्ष- 2025

'घुमक्कड़ी'- सुध-बुध खोकर आप लेखिका के साथ-साथ चलते हैं

'घुमक्कड़ी' एक किताब नहीं नशा है और नशा भी ठीक वैसा ही जैसा घुमक्कड़ी में होता है। मनीषा कुलश्रेष्ठ का यात्रा संस्मरण 'घुमक्कड़ी- अंग्रेज़ी साहित्य के गलियारों में' जब उठाया तो पिछले पाठकीय अनुभवों के आधार पर मानस को तैयार कर ही लिया था कि इसमें है कुछ ख़ास और यक़ीनन मनीषा जी की लेखनी ने मानस को वही असीम तृप्ति दी जिसकी आशा बँधी थी। यह किताब सिर्फ यात्रा संस्मरण नहीं है यह एक संवेदनशील मन के साथ शेक्सपियर, वर्ड्सवर्थ, कीट्स, कॉलरिज, जेन आस्टेन जैसे कई कलमकारों को मन की गहराइयों से अभिस्पर्श करने का सुअवसर और सौभाग्य देती है।

जिस तन्मयता से इस किताब को लिखा गया है मेरे पाठक-मन ने उसी तल्लीनता से उसे पढ़ा और कहने से बच नहीं सकूँगी कि नशा अब भी तारी है... और मैं उसे दुबारा पढ़ रही हूँ उसी मनोयोग के साथ।

मनीषा कुलश्रेष्ठ की पूर्व प्रकाशित किताब 'होना अतिथि कैलाश का' पढ़कर मुझे कई दिनों तक कैलाश मानसरोवर के सपने आए और इस किताब के बाद मैं यक़ीन से कह सकती हूँ कि अब अंग्रेज़ी साहित्य के गलियारों में मेरा मन अटकता-भटकता रहेगा।

किताब की सबसे आकर्षक बात है मनीषा कुलश्रेष्ठ के कहन की सम्मोहित कर देने वाली जीवंत शैली। यूँ लगता है जैसे जो वे अनुभूत कर रही हैं वह सब हमारे भीतर पर्त दर पर्त उतर रहा है। और हर वह मशहूर किरदार आपको उसी तरह रोमांचित करता है जैसे रचनाकार ने महसूस करते हुए और फिर

शब्दों में बाँधकर हम तक पहुँचाते हुए किया होगा।

अगर आपने अंग्रेज़ी साहित्य को पढ़ा है तो निश्चित रूप से कल्पना में आपने उन रचनाकारों की जीवनशैली को उकेरा होगा, यह किताब उसी कल्पना को सुंदरता और सहजता से साकार करती है और सार्थक रंग भी देती है।

सुध-बुध खोकर आप लेखिका के साथ-साथ चलते हैं, थकते हैं, रुकते हैं, दौड़ते हैं, मुस्कुराते हैं, भीगते हैं। यही तो यात्रा संस्मरण की सफलता है कि आप आप नहीं रहते हैं आप जादू भरी अनोखी दुनिया में किताब के माध्यम से प्रवेश कर जाते हैं। जब आप कीट्स के घर में होते हैं तो आपको उनकी पंक्तियाँ धुँधली सी याद आती हैं और चमत्कार तो तब होता है कि वही पंक्तियाँ अगले पेज (पेज 52) पर आपको छपी हुई मिलती है।

मनीषा कुलश्रेष्ठ इसमें लिखती हैं- मैं उत्साह से भरी हुई थी और मिलने विषाद से आई थी। कीट्स हाउस आकर यह तो तय था लौटना उदास होगा। एक युवा कवि जो अपना बेहतरीन लिखकर अपने वतन से दूर इटली में एक शांत सीले घर में, उस ज़माने की घातक बीमारी ट्यूबरक्यूलोसिस से जूझता हुआ महज 25 साल की उम्र में उस चहल पहल को छोड़कर चला गया जो उसके होने से थी।

मनीषा सिर्फ उन विशिष्ट जगहों पर जाकर हमें वहाँ की ख़ुशबू से सराबोर ही नहीं करती बल्कि वे संबंधित सवाल भी उठाती हैं और जवाब भी खोजती हैं। वे कोरी भावुकता से बचकर अपने स्तर पर विमर्श भी करती हैं, सोच को उद्वेलित करती हैं तो कभी अपनी पलकों की कोर से छलकी बूँद से हमारी मन धरा को सींच जाती हैं...

डिकेंस और कैथरीन के रिश्तों का गणित उन्हें बेचैन कर देता है-

"डिकेंस ने दावा किया कि कैथरीन बाद में एक अक्षम माँ और गृहणी बन गई थी और 10 बच्चे भी उनकी ज़िद का नतीजा थे...

वे अपनी डिकेंस के प्रति सम्मान की भावना को क़ायम रखते हुए भी सवाल कर उठती है.. इतने बरसों घर सहेजने वाली कैथरीन अचानक अक्षम गृहणी कैसे हो गई? क्या बच्चे एकतरफ़ा ज़िद से होते हैं? एक महान लेखक के कितने मूर्खतापूर्ण आरोप थे!"

इस किताब की महीन कारीगरी आपको उलझाती नहीं बल्कि रेशों-रेशों की कोमलता से अवगत कराती है। चाहे आर्थर कौनन डायल के गढ़े किरदार शरलॉक होम्स हों या टाइटैनिक का मार्मिक यथार्थ.. मनीषा की कलम उन्हें इस ख़ूबी से पाठक के सामने लाती है कि उनके अपने विचारों के नन्हे अंकुरण भी लहलहाते रहें और आँखों देखे जो स्निध फूल उन्होंने सँजोये हैं उनकी दृश्यावली भी घूमती रहे।

इस किताब के माध्यम से लेखिका ने यात्राओं के ज़रिए अपने प्रिय विदेशी लेखकों-शख्सियतों को क़रीब से देखने-जानने और महसूस करने का जो अनुभव सहेजा है उसे कई गुना ख़ूबसूरती से अभिव्यक्त भी किया है। अनुभूतियाँ अक्सर अभिव्यक्ति की पगडंडियों में अर्थ बदल देती हैं लेकिन यह किताब इस मायने में श्रेष्ठ कही जाएगी कि यहाँ अभिव्यक्ति ने व्यक्ति, विचार और वस्तुओं के अर्थों को पूरी प्रामाणिकता, भावप्रवणता और प्रभावोत्पादकता से प्रस्तुत किया है।

किताब की कई अच्छी बातों में एक यह भी कि चित्रों को अंतिम पृष्ठों पर स्थान दिया है ताकि पढ़ने की तंद्रा न टूटे और कल्पना के शिखर अंतिम पायदान पर दमकते हुए साकार हों। चाहे फिर वह फ्रायड का म्यूज़ियम हो, बैठे हुए ऑस्कर वाइल्ड हो, शेक्सपियर का स्मारक हो या फिर स्टोन हैंज में खोया जामुनी मफ़लर ही क्यों न हो। शिवना प्रकाशन से आई इस कृति का पढ़ कर पाठक कुछ समय के लिए किसी दूसरी दुनिया में खो जाता है। या एक बिलकुल नया तरीक़ा है यात्रा संस्मरण लिखने का, जिसमें यात्रा संस्मरण के बहाने स्त्री-विमर्श जैसे सरोकार पर पूरी मज़बूती से मनीषा कुलश्रेष्ठ न केवल अपना पक्ष रखती हैं बल्कि उसके सूत्र भी उन स्थानों पर तलाशते हुए चलती हैं। इस कारण यह केवल यात्रा वृत्तांत न रह कर स्त्री विमर्श का एक दस्तावेज़ बन जाता है। शिवना प्रकाशन ने इस किताब को बहुत ख़ूबसूरती के साथ प्रकाशित किया है। एक आवश्यक किताब है यह।

❐❐❐

ईमेल- smritiadityaa@gmail.com, मोबाइल - 9424849649

टेंशन न लो, हो जाएगा

–अशोक गौतम

अरे भाई साहब! सबकी तरह मैंने भी फर्जी काम करते अपने स्टेट्स में भगवान का फोटो लगा दिया तो आपने तो भूकंप ही ला दिया। जिनके आप भगवान लगे स्टेट्स देख हगिया रहे हो न! उनके जरा करीब जाकर देखो तो पता चले कि समाज में एक से एक बुरा काम करने वाले परमादरिणयों ने एक से एक जीवंत भगवान के फोटो अपने स्टेट्स में लगाए हैं। चलो, कोई बात नहीं। आपको बुरा लगा तो अपने स्टेट्स से भगवान का फोटो हटाए देता हूं। ये तो रही स्टेट्स की बात! अब समाज कल्याण की बात हो जाए।

असल में मैं फर्जी प्रमाण पत्र दिलवाने का बिजनेस करता हूं। करता हूं तो किसीसे छिपाता भी नहीं। डंके की चोट पर कहता हूं कि जनाब! मैं फर्जी प्रमाणपत्रों का बिजनेस करता हूं। मैं उनकी तरह नहीं जो समाज को दिखाने के लिए बाहर से पहन रखते हैं हर रोज धुला सफेद कुरता पजामा और भीतर से देखो तो भैंस से भी काले। अपन तो जो अंदर से हैं वही बाहर से हैं जी।

मित्रो! मेरे द्वारा जिस जिसने आज तक फर्जी प्रमाणपत्र प्राप्त किए हैं, वे सब पूरी ईमानदारी से असली प्रमाण पत्रों व्यापार कर रहे हैं, बीमार समाज का बेधड़क उपचार कर रहे हैं। जिस जिस ने मेरे द्वारा जाली पासपोर्ट, आधारकार्ड, उपाधियां लीं, उनाके लेकर अपनी तारीफ तो नहीं कर रहा, पर डंके की चोट पर कहता हूं कि उनके फर्जी प्रमाणपत्रों को यहां पर तो यहां पर ,ऊपर भी किसीने चैलेंज नहीं किया आजतक। भगवान तक को मेरे द्वारा दिलवाए फर्जी प्रमाणपत्रों पर इतना विश्वास है कि इतना तो उन्हें असली के प्रमाणपत्रों पर भी नहीं।

वह ऐसे कि..... मेरे जैसे दलालों की ऑफिसों में कोई कमी नहीं। एक ढूंढो, दस मिलेंगे। वैसे भी अब एक से महानों ने देश की रखवाली करने के बदले दलाली का बिजनेस शुरू कर रखा है। अपने समाज में नागरिक कम तो दलाल अधिक हैं। पैसे देखकर यहां कौन नहीं बिक जाता?'

कल मेरे एक मित्र का फोन आया। फोन उठाते ही बोले,‘ यार! उनको एक प्रमाणपत्र चाहिए था। हो जाएगा न?’

‘ एक क्या, सौ लो हजार लो। हम आए ही किसलिए हैं इस जीव जगत् में? फर्जी प्रमाणपत्र दिलवाने को ही तो आए हैं। कौन सा प्ररमाणपत्र चाहिए जनाब को? किस बोर्ड का चाहिए? किस विश्वविद्यालय का चाहिए? किस ऑफिस का चाहिए। बस, थोड़ा सा वक्त दे देना। माना, तुम्हारा दोस्त हूं। पर फर्जी काम के लिए थोड़ा तो काम मुझे भी चाहिए होता है,’ मैंने हर अपने कस्टमर की तरह उनको भी आश्वस्त किया तो वे बोले,‘ उनको अपनी पत्नी की मृत्यु का कहीं यूज करने को प्रमाणपत्र चाहिए था।’

‘तो कमेटी से ले आएं, असली मुत्यु प्रमाणपत्र जारी करने वाले अक्षम को हजार पांच सौ पकड़ा देना । इसमें मेरी सहायता की जरूरत क्या!’

‘नहीं मित्र! उनकी पत्नी जिंदा है,’ उन्होंने कहा तो मुझे काटो तो खून नहीं। उनमें यह कहते हुए रहा होगा, तो मैं कुछ कह नहीं सकता।

मतलब, अब बात यहां तक आ पहुंची है। लोग फर्जी चरित्र प्रमाणपत्रों से अव्वल दर्जे के चरित्रवान् तो होते ही रहे हैं, लोग फर्जी उपाधियां लेकर असली उपाधियां देने का काम भी करते रहे हैं, लोग फर्जी प्रमाणपत्र लेकर जनता को शाकाहारी के नाम पर मांसाहारी भी खिलाते ही रहे हैं, लोग संबंधों के मरने के फर्जी प्रमाणपत्र लेकर संबंधों से छुटकारा भी पाते ही रहे हैं! यहां तक तो माना सब ठीक है। पर अब जीवित पत्नी की मृत्यु का फर्जी प्रमाणपत्र!

माना ! हम गिरे हुए हैं। लेकिन इतने गिरे हुए भी नहीं। दूसरे चाहे शान से गरदन सीधी रख, जबरदस्ती सीधी की रीढ़ की हड्डी सबको दिखाते कितने ही गिरे हुए हों।, हम सबकी नजरों में एथिक्सहीन हों, तो होते रहें। भले ही एथिक्स से सजी संवरी कुर्सियों पर बैठने वालों के कोई एथिक्स न हों , पर अपने बिजनेस के भी कुछ एथिक्स हैं। ये भी माना कि आज हमारी पूरी की पूरी जिदंगी मरने से भी लिजलिजे धरातल पर खड़ी है, पर कम से कम एक दूसरे के मरने पर उनके मरने के प्रमाणपत्र तो असली लिया कीजिए। अच्छा लगेगा। कागजों में मरने वाले को भी और मारने वाले को भी।

पर दोस्त अपने थे , इसलिए उनको सही गाइड करना अपना फर्ज समझा । तब मैंने उनको गाइड करते कहा,‘ देखो! हर जगह सब फर्जी चलेगा तो लेगा। पर मरने का प्रमणपत्र फर्जी नहीं चलेगा।’

'तो?'

' तो ऐसा करो! इसे असली बंदों से ही बनवाओ तो मेरे हिसाब से ज्यादा बेहतर रहेगा। किसीके जीवित रहते उसका असली मृत्यु प्रमाणपत्र जारी करवाने करने वाले मरें या न , पर.... '

' पर ये सब मैनेज कैसे होगा?'

'वह ऐसे कि..... मेरे जैसे दलालों की ऑफिसों में कोई कमी नहीं। एक ढूंढो, दस मिलेंगे। वैसे भी अब एक से महानों ने देश की रखवाली करने के बदले दलाली का बिजनेस शुरू कर रखा है। अपने समाज में नागरिक कम तो दलाल अधिक हैं। पैसे देखकर यहां कौन नहीं बिक जाता?'

'मतलब?' मुझे वे दूसरों की टेंशन में टेंशन में दिखे तो अच्छा लगा! कम से कम कोई तो अपने आसपास अभी भी ऐसे हैं जो अपनी ही नहीं, दूसरों की भी टेंशन ले रहे हैं। सो मैंने उनसे सादर कहा,' बंधु ! सबकुछ लेने का, पर टेंशन बिल्कुल नहीं लेने का। न अपनी, न दूसरों की ! मैं हूं न! अब समझ लो तुम्हारी टेंशन मेरी टेंशन! जहां सही काम एड़ी चोटी लगाने पर भी न हों और गलत काम चुटकियों में हो जाएं ऐसे माहौल में जी रही जीवात्मा से बेझिझक कहो कि वे अपनी जीवित पत्नी की मृत्यु का असली प्रमाणपत्र ही लें। अच्छा लगेगा, उनकी जीवित पत्नी को भी। अपनी जीवित पत्नी का मृत्यु प्रमाणपत्र लेने के लिए सबसे पहले वे कागजों में श्मशानघाट के असली कर्मचारी को अपनी पत्नी को कागजों में जलाने वाली लकड़ियों के पैसे दे अपनी पत्नी को उससे जलवाएं। जब वह श्मशान के असली कर्मचारी के हाथों कागजों में जल जाए तो श्मशान के असली कर्मचारी से वे अपनी जिंदा पत्नी के दाह संस्कार का कागज लें। उसके बाद वे कमेटी जाकर मुत्यु प्रमाणपत्र जारी करने वाले अधिकारी की सेवा करें। एक तो वे मान जाएंगे। पर फिर भी जो वे सीधे न माने तो बीच में हजार दो हजार दे किसीको डलवा दें। '

'फिर?' लगा जैसे वे मेरी बातों को गहनता से ले रहे थे,'जब वहां से उनकी जीवित पत्नी का असली मृत्यु प्रमाणपत्र मिल जाए तो उसे वे जहां चाहते हों वहां पेश कर दें। अगर बीच में कोई दिक्कत आए तो बता देना। बंदा जरूरतमंदों के नेक कामों के लिए हरदम हाजिर है,' मैंने कहा तो वे इतने प्रसन्न कि मानो उनको ही.....

❐❐❐

1. गौतम निवास, अप्पर सेरी रोड़, नजदीक मेन वाटर टैंक, सोलन-173212 हि.प्र.
मो 9418070089

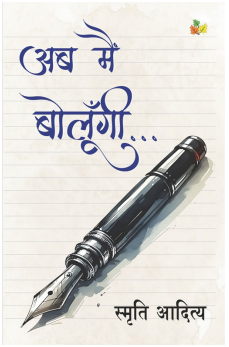

समीक्षक- शैली बक्षी खड़कोतकर

अब मैं बोलूँगी

डायरी

लेखक - स्मृति आदित्य

प्रकाशक- शिवना प्रकाशन, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, बस स्टैंड के सामने, सीहोर मप्र 466001

मोबाइल- 9806162184, ईमेल- shivna.prakashan@gmail.com

मूल्य- 150 रुपये प्रकाशन वर्ष- 2025

अब मैं बोलूँगी- एक खरी और ज़रूरी किताब

स्मृति आदित्य, मीडिया और साहित्य का सुपरिचित नाम, जब कहती हैं 'अब मैं बोलूँगी' तो सुनने वालों को सजग, सतर्क होकर सुनना होगा। शिवना प्रकाशन से प्रकाशित और हाल ही में पुस्तक मेले में विमोचित उनकी किताब 'अब मैं बोलूँगी' उन तमाम आवाजों की गूँज है, जो अव्वल उठाई नहीं जातीं या फिर दबा दी जाती हैं। इस किताब को पढ़ते हुए दुष्यंत कुमार बहुत याद आए- तुम्हारे पाँवों के नीचे कोई ज़मीन नहीं, कमाल ये है कि फिर भी तुम्हें यक़ीन नहीं।

मीठे लेकिन झूठे ख़्वाब से झकझोरकर उठाने का एहसास कड़वा हो सकता है, लेकिन उतना ही ज़रूरी भी। पत्रकारिता जगत में लंबी और उल्लेखनीय पारी के बाद अपने अनुभवों को स्मृति ने इस किताब में सँजोया है। नहीं...शायद सँजोना कहना ग़लत होगा। सलीक़े से, करीने से सजा-सँवार कर जो भी किया या कहा जाता है, उसमें कहीं बनावटीपन या दिखावा आ ही जाता है। जबकि यहाँ एक ईमानदार, मेहनती पत्रकार का सच्चा, अनगढ़, भावपूर्ण आवेग है, जो पाठक को बहा ले जाता है। इस किताब की पढ़ना साहित्य के राजपथ पर चलना नहीं है, उस पथरीली पगडंडी से गुज़रना है, जहाँ से हम में से बहुत से लोग गुज़रे हैं। उन खुरदुरे रास्तों के काँटों और पाँवों के छालों से कभी न कभी वास्ता पड़ा है।

डायरी विधा में लिखी यह किताब शुरू होती है, लगभग पंद्रह साल तन-मन से एक संस्थान से जुड़े रहने के बाद हुए मोहभंग और इस्तीफे से। फिर फ़्लैश बैक में पच्चीस साल पहले पत्रकारिता की शुरुआत के संघर्ष से होते हुए मीडिया संस्थानों के वर्क कल्चर पर आती है। उनके अनुभव इतने खरे और सच्चे हैं कि पाठक संवेदनाओं के साथ शुरू से अंत तक जुड़ा रहता है। जैसे 31 जुलाई वाले दिन, जो नौकरी का आख़िरी दिन था, वे लिखती हैं कि इतना हल्का महसूस कर रही थीं कि घर पहुँचकर 'कैडबरी गर्ल' की तरह नाची। इसमें पीड़ा और आक्रोश का जो अंडर करंट है, वह छू जाता है और पढ़ते हुए आँखों में अनायास नमी उतर आती है। बाई-लाइन और क्रेडिट के लिए जूझना, संपादकीय को हमेशा विज्ञापन और मार्केटिंग से कमतर आँकना, रिपोर्टिंग में आने वाले ख़तरे, इन स्थितियों का सामना लगभग सभी

मीडियाकर्मी करते हैं। पर महत्वपूर्ण यह कि कार्यस्थल पर जिस प्रतिस्पर्धा, इर्ष्या, असुरक्षा और शोषण की बात उठाई है, वह सिर्फ मीडिया तक सीमित नहीं है बल्कि प्राइवेट सेक्टर में काम करने वाले अमूमन हर शख्स की कहानी है। इस स्तर पर किताब एक ऐसा आईना है, जिसमें बहुतों को अपने दर्द का अक्स नज़र आएगा। यहाँ यह डायरी निजी अनुभव होते हुए भी सार्वभौमिक हो जाती है। और बकौल स्मृति यही उनकी किताब का उद्देश्य भी है कि 'अपने हिस्से का प्रतिरोध दर्ज करना ही चाहिए और शुरुआत कहीं से तो हो।'

कामकाजी लड़कियाँ तो अधिकांश जगह उनके साथ रिलेट कर सकती हैं। वे लिखती हैं, 'हम छोटी जगह की लड़कियाँ संकोच और स्वाभिमान के मिश्रण से बनी होती हैं, जिन्हें अक्सर हमारा अहम मान लिया जाता है ...वास्तव में हम सही वक्त पर सही कदम न उठाने की पीड़ा से गुज़र रही होती हैं।' इससे उस समय और कुछ हद तक आज भी छोटे शहरों की अधिकांश लड़कियों के मन को कितना सही उकेरा है। पूरी किताब दरअसल एक सच्ची, संवेदनशील लड़की का अपने आत्मसम्मान को बचाते हुए संघर्ष का दस्तावेज़ है। गिरना, बिखरना, टूटना, फिर खुद को समेटकर स्वाभिमान के साथ खड़ा होना, इसी जिजीविषा का नाम स्मृति है और यही जीवन है।

अंतिम पन्नों में वे कहती हैं, 'मैं हर हाल में खुश रहने वाली लड़की बस इतना चाहती हूँ कि इस पेशे की 'नैतिकता' को यथासंभव बचाया जाए ताकि आने वाली पत्रकारीय नस्ल और फसल हरी रहे, लहलहाती रहे।' चूँकि स्मृति बच्चों के बीच सम्मानीय और प्रिय मीडिया शिक्षक हैं, उनकी यह चिंता वाजिब है। पत्रकारिता में आने वाली पीढ़ी के लिए यह एक ज़रूरी और मार्गदर्शक किताब हो सकती है। जो बच्चे मीडिया की चकाचौंध से आकर्षित होकर इस क्षेत्र में आते हैं, उन्हें पहले इस तरह की किताबें पढ़ना चाहिए ताकि आने वाले संघर्षों के लिए तैयार होकर इस क्षेत्र में क़दम रखें। बच्चे यह भी सीखेंगे कि मुश्किल वक़्त में परिवार और दोस्तों के अलावा कार्यक्षेत्र में कुछ भले लोग भी मिलते हैं, जिनसे दुनिया में उम्मीद क़ायम है।

स्मृति के इस साहस को सलाम, इस आशा के साथ कि इसे ख़ूब स्नेह मिले, समर्थन मिले और उनकी आवाज़ में और आवाजें शामिल हों। फिर दुष्यंत कुमार के ही शब्दों में –

सिर्फ़ हंगामा खड़ा करना मेरा मक़सद नहीं,

मेरी कोशिश है कि ये सूरत बदलनी चाहिए।

मेरे सीने में नहीं तो तेरे सीने में सही,

हो कहीं भी आग, लेकिन आग जलनी चाहिए।

❐❐❐

1. संपर्क- ई-8, 157, भरत नगर, भोपाल– 462039 मोबाइल- 9406929314 ईमेल- shailykhadkotkar@gmail.com

मोक्ष

–कान्ता रॉय

बड़की दुल्हिन दुःख से पछार खा कर गिर रही थी। इस घर में अब वे अकेली रह गयीं थीं। दादी से मोह तो अपनी जगह था ही दूसरी बड़ी चिंता का कारण अंतिम संस्कार के लिए इंतजाम करने को घर में इस वक्त वह अकेली पुरखिन थी। इतने बड़े आंगन में एक भी पुरुष यहाँ उपस्थित नहीं था। तीनों दादा और दादीयाँ स्वर्ग सिधार गए थे। सबसे छोटी होने के कारण दादियों में यही एक मात्र बची हुई थी।

बड़की दुल्हिन ने आँख मलते हुए मसहरी से दीवाल पर घड़ी की टोह ली। सुबह के पाँच बज रहे थे। खिड़की से झांक कर बाहर दालान की ओर देखा, दूर भैंस की रंभाने की आवाज आई। जीबछ भैंस खोलकर ले जा चुका था।

डीह टोला के महंत स्थान से पराती गाने की आवाज आई...

हम नई जियब बिनु राम हे जननी, हम नई जियाब बिनु राम

होइत प्रातः हमहूँ बन जायब

जहाँ मिळत श्री राम हे जननी, हम नई जियब बिनु राम...

बड़की दुल्हिन ने तकिए के नीचे से चाभियों का गुच्छा उठाया और आंगन में आकर खड़ी हो गई। भंडार घर के ताले को खोलने के साथ कुलबुलाने लगी - इन लोगों से इतना नहीं होता कि पहले आकर इन सभी कमरों की सफाई कर ले।

बुधिया रोज सुबह मुंह अंधेरे आ जाती और सबसे पहले भंडार और रसोई घर को लिपती। फिर नलके पर घंटों तक बर्तनों की खरखराहट। बुधिया जब माँजना धोने के सभी कर्यों से उबर जाती तो रसोई के लिए पानी मटके में भर कर थोड़ी देर के लिए खेत पर चली जाती। बारह बजे तक लौटती तो फिर से चौका बर्तन समेट कर अपना खाना लेकर अपने घर लौटती।

बुधिया की सास और उसकी सास, चार पीढ़ियों से इस घर की सेवादार थी। इस कारण वह विश्वास के पात्र होने के साथ ही मुंह लग्गू भी थी। बड़की दुलहिन का अक्सर उससे बहस हो जाया करती थी। बीजनापुर वाली दादी की टहल-सेवा, रसोई-पानी कर करके बड़की दुलहिन अब उकता चुकी थीं पर मार-मजबूरी के विधवा ब्राह्मणी को अपने सद्गति के लिए धर्माचरण करना ही होता है। दूसरों के हाथ का

पकाया खाना उनके लिए वर्जित है। जाने क्यों आज सुबह से ही मन भारी हो चला था। संयम अब टूटने लगा था।

इधर जब बुधिया आंगन से बाहर निकलने लगी तभी दालान में ओसारे पर बीजनपुर वाली दादी का नाम लेकर पछार खाकर गिर पड़ी। बड़की दुल्हिन हड़बड़ा कर उसके पीछे भागी। देखा बीजनपुर वाली ओसारे पर बीचले खम्बे के सहारे मरणासन्न उस पर टिकी हुई हैं। मुंह खुला हुआ था और आंखें अधखुली। छाती धक् से रह गया। वे लम्बी यात्रा पर निकलने की तैयारी में थीं। जमीन पर लोटती बुधिया को पहले संभाला फिर बुधिया ने सुबकते हुए कमरे से दरी लाकर जमीन पर बिछा दिया और फिर उनके भारी और स्थूलकाय शरीर को एक दूसरे की मदद से बिछौने पर लिटा दिया। बीजनापुर वाली दादी के गोरे सफेद मुखमंडल पर दिव्यता झलक रही थी। ईश्वर से साक्षात्कार होने पर ऐसी दिव्यता मिलती होगी, बड़की दुलहिन ने अनुमान लगाया था।

दस मिनट के अंदर ही पूरे गांव में खबर फैल चुकी थी कि बीजनपुर वाली दादी का अंतिम समय चल रहा है। टोला पड़ोस के लोगों का जमावड़ा लग गया था।

बड़की दुल्हिन दुःख से पछार खा कर गिर रही थी। इस घर में अब वे अकेली रह गयीं थीं। दादी से मोह तो अपनी जगह था ही दूसरी बड़ी चिंता का कारण अंतिम संस्कार के लिए इंतजाम करने को घर में इस वक्त वह अकेली पुरखिन थी। इतने बड़े आंगन में एक भी पुरुष यहाँ उपस्थित नहीं था। तीनों दादा और दादीयाँ स्वर्ग सिधार गए थे। सबसे छोटी होने के कारण दादियों में यही एक मात्र बची हुई थी। और साथ में इनसे छोटी इनकी सेवादार पूतोहू बड़की दुल्हिन। बीजनपुर वाली दादी बाँझ थी तो क्या घर के बाकी पूतों ने तो वंश वृक्ष को खूब लतराया चतराया था। बड़े बाबा के चार बेटे और उन चारों से पांच लड़की और तीन बेटे, मझले बाबा के दो बेटे, दोनों के दो लड़के और दो लड़कियां। सबने उच्च शिक्षा ग्रहण की, अच्छी नौकरी प्राप्त की और गाँव छोड़ जहाँ गए वहीँ के होकर रह गए। बड़की दुल्हिन इस खानदान की सबसे बड़ी पुतोहू थी। पक्की गृहस्थन। तीन पोखर, पाँच अमराई और सौ बीघा किसानी राजपाट पर उनकी गहरी पकड़ थी। उनके पति को गुजरे भी पांच वर्ष हो गए थे। विदेश में बेटों के साथ एक बार रहने गयीं तो वहां के आबो हवा में बीमार पड गयीं। फिर बड़ी मुश्किल से वापस गाँव पहुंचाई गयी थी। बेटों ने कान पर हाथ रख कर अम्मा को फिर वहां न ले जाने की कसम खा ली थी। बीजनपुर वाली दादी और बुधिया के सहारे वह पुश्तों की जागीर सम्भाल रही थी। आँचल में आंसूओं को सहेजते हुए बीजनापुर वाली की ओर नजर फेरी, कैसे सब मोह त्याग कर सोने जा रही है, पर-पट्टीदारी संपत्ति का सब झगड़ा-रगड़ा यहीं तो छोड़ रही है, कुछ भी तो साथ नहीं जा रहा है।

बात बात में देवी देवताओं को कोसने वाली बीजनपुर वाली अब उन्हीं ईश्वर के सुपुर्द हो रही है। बड़की दुलहिन का मन करूणा से उब-डूब करने लगा था।

फोन पर देवर-देवरानियों और उनके बच्चे सहित अपने बच्चों को भी सूचना दी। सबका यही कहना था कि आप मैनेज कर लीजिएगा, हम सब तुरंत पहुंच पाने में असमर्थ हैं। वह डर गई कि कल को कहीं उसे कुछ हुआ तो उसके बच्चे मुखाग्नि देने में असमर्थता न जाहिर कर दें। मन ही मन कांप उठी थी। आस-पास के गांव से रिश्तेदार पहुंचने लगे थे। बड़की दुलहिन के समधियाने के लोग, उनके मायके वाले, उनकी बहनों के ससुराल से, ननिहाल से, बीजनपुर से भाई भौजाई सब पहुँच गए थे। सबके आने से बड़की दुलहिन को सहारा लगा। प्राण छूटने से पहले शीघ्रता से गोदान करवाने पर विचार किया गया। बड़की दुलहिन ने सहमति देते हुए तैयारी शुरू करवा दी। अब गोदान की तैयारी चल रही थी। इस साल थान पर ही गाय ने बछड़े को जन्म दिया था। उसी को नहला-धुला कर तैयार कर लिया था। कांसे की थाली, फूल का लोटा संदूक से निकाल लाई थी। साथ में स्वर्ण भी दान में रखना था। अन्न दान के लिए दस प्रकार के अन्न की ढेरी लगा दिया उसने। घर में किसी भी बात की कमी नहीं थी, और क्या-क्या रखना उचित रहेगा, वह सोच में पड़ गयी। बीजनपुर वाली की लोहे के पेटी पर नजर पड़ी। वह पेटी खोलकर तहों को टटोलने लगी। पीतल की मञ्जूषा में रखे गहनों को उलट-पलट कर देखने लगी। नवजात शिशु के गरम मोज़े और टोपा के साथ गहनों में सोने की चैन और लॉकेट, चांदी के पायजेब, करघनी, सोने के हंसुली, बाजूबंद, चूड़ियाँ, अंगूठियों के बीच रेशमी लाल कपडे में बंधी गिन्नी की वह पोटली जस की तस रखी हुई थी। ये वही गिन्नी है जो बड़की दुलहिन को बीजनपुरवाली मुंह दिखाई में देना चाहती थी। हो न हो ये बच्चों के कपड़े और गहने भी उसी के बच्चों के लिए बनवाई होंगी। बड़की दुलहिन के दुःख का पारावर न रहा। ऐसा क्लेश हृदय में उत्पन्न हुआ जिसको शब्दों में बयां नहीं किया जा सकता था। बीजनपुर वाली के दुखों का कारण वह भी तो थी ही। आज यह हवेली उसके लिए अभिशप्त कारागार के सामान थी। उसे लगा इस राजपाट में इस बाँझन की हाय लग गयी है। अब यहाँ बचा ही क्या है! बच्चों के लिए गाँव अब एक फैशन स्टेटस बनकर मात्र रह गया है तभी तो सन्नाटों से सांय-सांय करने वाली इक्कीस कमरों की हवेली गर्मियों की छुट्टियों में ऐसा भर जाता था कि कमरे कम पड़ जाते थे। बीजनपुर वाली दादी की अपनी कोई संतान नहीं हुई थी लेकिन ममता की ऐसी मूर्ति थी कि अपने दोनों जेठ के बच्चों को पालने-पोसने में पूरी उम्र खपा दिया था। जब बड़की दुल्हिन बहू बनकर आई थी तब आगे बढ़ कर अति उत्साह में जब बीजनपुर वाली दादी परिछन के लिए आईं तो रोक दी गयी थीं, उस दिन शायद उन्होंने पहली बार बाँझ होने का दंश सहा था। बड़की दुल्हिन ने घूँघट की ओट से सब महसूस किया था। जब उनके पैर पड़ने के लिए आगे बढ़ी तो उनकी सास ने कोहनी मार कर रोका था। बहन समान जेठानी के इस आचरण पर बीजनपुर वाली दादी

को धक्का लगा था। उन्होंने सब देखा और समझ लिया था। उसी वक्त आंसूओं को आँचल से पोछते हुए कमरे के बाहर चली गयी थी। बहू के परिछन के लिए उन्होंने कितने अरमान सजाये थे। मुंह दिखाई में बहू को देने के लिए रेशमी लाल टुकडे में जतन से गाँठ लगायी तोले भर की सोने की गिन्नी को छाती से लगाये अपने कमरे में जाकर बंद हो गयी। उनका मन वितृष्णा से भर उठा था और उस दिन से उनके व्यवहार में कई परिवर्तन देखने को मिला। फिर उसके बाद जब तक घर में मेहमान रहे वे कमरे से बाहर नहीं निकलीं।

इस खानदान में वह तीसरी पट्टीदारन थी अर्थात सम्पत्ति की तीसरी हकदार। लेकिन यह हक़ स्त्रियों को आज तक इस खानदान में मिला ही नहीं था। उसके ससुर का मानना था कि स्त्रियों का पुश्तैनी संपत्ति पर हक और अधिकार की बात करना हिन्दू समाज में सबसे बड़ा अपराध है। यह पत्रिका होने के लक्षण है। सनातनी सोच कि स्त्रियाँ संतान उत्पन्न करने से ही सत्कार योग्य हैं और बीजनपुर वाली दादी निःसंतान थी अतः वे न पूजिता थी न ही आदर की पात्र।

पुरुष जो ज्येष्ठ पुत्र है वही घर के मुखिया, उन्हीं के नाम घर की सारी संपत्ति। बंटवारा सिर्फ भाइयों के बीच होता है। स्त्रियों का इसमें कहीं कोई दखल नहीं, ऐसी स्थितियों में बीजनपुर वाली दादी का अपने अधिकारों की बात करना गाँव भर में चर्चा का विषय था। उनका आक्रोश कैसे फूटा उसकी भी एक अलग त्रासदीपूर्ण कहानी थी।

छोटे दादा टीबी के मरीज हो चुके थे इस कारण अब वे परिवार से अलग थलग दालान में ही एक तखत पर पड़े रहते।

घर का कोई उनके करीब नहीं जाता था। बुधिया का पति नहा-धुला कर दवा-पानी का इंतजाम कर दिया करता था। बीजनपुर वाली दादी के प्रति छोटे दादा का प्रेम सदा से जगजाहिर था। प्रत्येक दिन शाम को वे गाँव के चौक पर जाना और वहां से लच्छू साहू की दुकान से रसगुल्ला लेकर आना। इतने बड़े परिवार में रात के अंधेरे में सबके आंखों से छुपा कर रसगुल्ले की हांडी कमरे तक लेकर तो आते लेकिन उसके खाली होने के बाद अधरतिया में ही उठ कर उसे आंगन के बीच में बने उस कुएं में सिरा आते। सुबह डोल से पानी खींचने पर जब बाल्टी में हांडी तैर जाती तो अंगने में फुसफुसाहट शुरू हो जाती थी। बीजनपुर वाली दादी सब सुन कर भी अनसुना कर देती थी और अपने आप में मगन रहती थीं।

पति-पत्नी के बीच प्रेम का दरिया इसलिए तो नहीं बहता था कि परिवार में दूसरे दम्पत्ति उससे कुढे और ईर्ष्या रखते लेकिन उस निःसंतान दम्पत्ति के उस सुख को ईश्वर भी पचा नहीं पाए थे। छोटे दादा प्रत्येक वर्ष कुछ महीनों के लिए कलकत्ता जाते थे। जब लौटते तो घर भर के लिए नए कपड़े, बहुओं के लिए गहने, सुगन्धित तेल, स्नो-पावडर, खाने-पीने की चीजें लेकर लौटते थे। घर में जितनी भी लोहे के बक्से और

पेटियां हैं सब उन्हीं के लाये हुए हैं। दादी हर बक्से से जुड़ी कोई न कोई कहानी बच्चों को सुनाया करती थीं।

वह साल दादी की विवशताओं का साल था। उस साल पूरे आठ महीने बाद छोटे दादा कलकत्ते से लौटे थे। लोगों की जितनी मुंह उतनी बातें। छोटे दादा कलकत्ते में दलाली का धंधा करने जाया करते थे। दलाली तो वैसे जमीन की ही करते थे लेकिन उनका वास्ता वहां के अनैतिक व्यापारियों से सम्बंधित भी था। बीजनपुर वाली दादी को छोटे दादा ने कितना और क्या सच बताया यह तो राम ही जाने लेकिन इसके बावजूद दादी को छोटे दादा से बहुत प्यार था। कभी किसी बात की उनसे शिकायत नहीं करती थीं।

उस बार जब छोटे दादा आठ महीने बाद जब गाँव में आए तो आगे आगे उनकी बीमारी की खबर साथ चलकर आई। उनको देखने समाज उमड़ पड़ा था।वे इस बार बीमार अवस्था में कुछ जान पहचान के लोगों द्वारा गाँव पहुंचाए गए थे। यह सब देखकर बीजनपुर वाली दादी तो मानो काठ हो गई थी। उस दिन से दोनों पति-पत्नी अलग हो गए थे। उधर दादा की तीमारदारी दालान पर बुधिया का पति करता और इधर बीजनपुर वाली दादी अपना दुःख भुलाने की कोशिश में घर के बच्चों में खुद को रमाए रहतीं। क्षणिक ही सही बच्चों ने उनकी खिलखिलाहट को बनाए रखा था। वे जब बच्चों के साथ खेलते हुए हंसती तो फिर से घर की स्त्रियों में ईर्ष्या की एक तेज लहक-दहक उठती थी।

कैसी औरत है, जिस पति ने हाँडी भर-भर के रसगुल्ला खिलाया उसी की परवाह नहीं है इसे। कैसे इतना खुश रह सकती है? किसके लिए श्रृंगार करती है? ये डायन है डायन, किसी की भी नहीं हो सकती। सुनते-सुनते जब दादी को बर्दास्त नहीं हुआ तो एक दिन मुंह तोड़ सबको जवाब देने लगी। घर भर की इज्जत पर लच्छन-कुलछानों का व्योरा भारी पड़ने लगा। तेरी-मेरी बात से गली गलौज तक बात पहुच गयी थी।

दिन भर आंगन में तमाशा देखने वाली बाहरी औरतों का जमावड़ा लगा रहा। झगड़ा सिर फुटव्वल तक जा पहुंचा था। घर की सभी स्त्रियों ने उनके खिलाफ कमर कास लिया था। वह अकेली सबसे जूझ रही थी। विवाद को रोकने में नाकाम बड़की दुलहिन कमरे में जाकर बंद हो गयी थी। उन्हें दोनों पक्षों के व्यवहार से आपत्ति थी। उस दिन चूल्हा ठंडा पड़ा रहा। बच्चों को पड़ोसी आँगन से खाना लाकर खिलाया गया था।

उस दिन के बाद से बीजनपुर वाली दादी जो चुप हुई वह छोटे दादा के मृत्यु पर ही टूटी।

बच्चों को समझ में नहीं आया कि हंस हंस कर मजेदार कहानियां सुनाने वाली दादी को अचानक से क्या हो गया है। समझ में तो बीजनपुर वाली दादी को भी नहीं आया था कि आखिर उनकी गलती क्या थी लेकिन वह इतनी भी अबोध नहीं थी कि ईर्ष्या, डाह के इस संताप को न समझ सके।

जीव कोई भी हो जब आत्मरक्षा का सवाल पैदा हो जाता है तो बेजुबान भी आवाज निकालने लगता

है। अधिक दवाब यहाँ भी विस्फोट का कारण बना था। पति की मृत्यु के बाद वे अपने अधिकारों के प्रति सचेत हो गईं थीं।

बात-बात में हिस्सा-बाँट की बात करने लगी थी। आंगन में सिमट कर रहने वाली बीजनपुर वाली दादी अब अपने परिवार तक सीमित नहीं बची। गाँव के किसी भी आंगन-दरबज्जे पर बैठ जाती और अपनी कहानी, अपना प्रतिवाद कहना शुरू कर देती थी। उनकी कहानी में छोटे दादा के साथ उनकी शादी के किस्से होते और स्त्री होने के नाते उन्होंने मायके से ससुराल तक कितने अन्याय सहे यही मुख्य रूप से उनके प्रतिवाद में रहता था।

वे अपने पिता की सात संतानों में सबसे छोटी थी। माता-पिता ने अपनी जरावस्था में बेटी को जन्म दिया था। जिस समय उनकी माता ने इनको जना था ठीक उसके एक हफ्ते बाद ही उनकी बहू यानि बीजनापुर वाली की भाभी ने पहली संतान बेटी को जन्म दिया था और वह अपनी माता की पांचवी बेटी थी। उनके पैदा होने तक में बड़े भइया और दो बड़ी बहन व्याही जा चुकी थी। तीन ननदों के कन्यादान का बोझ को लेकर बहू को सास-ससुर से शिकायत थी कि अपनी बेटी की व्याह की चिंता करें, उसके लिए दहेज जोड़े कि ननदों, देवरों के लिए।

इन्हीं सबमें दादी का बचपन तनातनी में बीता था। पिसी-भतीजी में बात-बात में झगड़ा, जो वस्तु उन्हें पसंद आता वही उनकी हमउम्र भतीजी को भी। माता पिता का राज खत्म हो गया था और घर के मुखिया अब बड़े भैया बने हुए थे इस कारण से उसकी चाहतें भतीजी के सामने बलि चढ़ जाती थी। परिवार में बेटियों को देहरी लांघने की परम्परा नहीं थी सो विद्यालय जाने को नहीं मिला था लेकिन फिर भी बीजनापुर वाली दादी चिट्ठी लिखना जानती थी।

वे चिट्ठी लिखना कैसे जानती थी इसके बारे में वे नीले पंखों वाली एक राजकुमारी का जिक्र कहानी सुनाते हुए करती थी, जिसमें एक राजकुमार था जो वनवासी था। वनवास के दौरान उसे नीले पंखों वाली उस राजकुमारी से साक्षात्कार हुआ और वह उससे प्रेम करने लगा। इस प्रेम कहानी को परिवार के सभी किशोरवय के बच्चे बड़े मनोयोग से सुना करते थे।

राजकुमार का प्रेम जब जंगल में आग की तरह फैलने लगा तब जंगल के शासकों ने नीले पंखों वाली उस राजकुमारी का विवाह जबरदस्ती एक जंगली से करवा दिया। राजकुमारी इस बात को लेकर बहुत दुःखी हुई और एक दिन जंगल त्याग कर चली गई।

उनके जंगल से चले जाने के बाद वियोग में राजकुमार उनके नाम से पत्र लिखने लगे और पेड़ पौधों पर चिपकाने लगे। उन पत्रों में प्रेम का दरिया बहता था। वियोग की नाव में बहकर वे सारे पत्र राजकुमारी

तक पहुंच जाते थे। राजकुमारी को उन चिट्ठियों की सुगंध से यह तो पता चल जाता कि राजकुमार उससे कुछ कहना चाहता है लेकिन भाषा समझ में नहीं आ रही थी। उस चिट्ठी को पढ़ने का माध्यम तलाशते हुए वह सरस्वती देवी की पूजा करने लगीं। उसी पूजा के पुण्य से उन्हें अक्षर ज्ञान का आशीर्वाद प्राप्त हुआ था। पढ़ना सीखते ही नीले पंखों वाली राजकुमारी ने सबसे पहले राजकुमार के भेजे हुए पत्रों को पढ़ा। कहानियों में यह सब सुनते ही बच्चे कौतुहल से भर उठते थे। इन्हीं बातों को जोड़कर बच्चों ने यह जाना कि शादी से पहले बीजनापुर वाली दादी को प्यार हुआ था जो उनकी दुष्ट भाभी के कारण परवान नहीं चढ़ सका था। किसी अन्य एक कहानी में दादी ने यह भी इशारा किया कि बाद में उस राजकुमार से उनकी भतीजी व्याह दी गयीं थीं और वह राजकुमार के चार बच्चों की माँ भी बनी। बीजनपुर वाली दादी के मन में यह कचोट रहा कि अगर वे उस राजकुमार से व्याही जाती तो वे भी चार बच्चों की माँ होती।

दिन चढ़ आया था। गोदान का रस्म पूरा करते-करते बीच में ही उन्होंने संसार से विदा ले लिया। रिश्तेदारों की गहमागहमी तेज हो गयी थी। शास्त्र सम्मत तरीके से पार्थिव शरीर को शीघ्र अंतिम संस्कार करने की तैयारी अब अंतिम चरण में था। फूल-माला से अर्थी को सजाया गया। लोग पूरे सम्मान के साथ उनके अच्छे आचरणों की चर्चा करते हुए साड़ी, शाल, चादर श्रद्धा से चढ़ा कर परिक्रमा करते हुए श्रद्धांजलि अर्पित कर रहे थे। बड़की दुलहिन तसल्ली भाव से देख रही थी कि इसी सम्मान की चाहत में जिंदगी भर बीजनपुर वाली दादी बेकल रहीं थीं। मरणोपरांत सम्मान उन्हें मिल रहा था। आज वे जहाँ भी होंगी अपनी विदाई जरूर देख रही होंगी।

खुद को संयत करते हुए पार्थिव शरीर के समक्ष जाकर खड़ी हो गयीं। पूरे समाज की ओर सर उठाकर देखा और रुंधे गले से कहने लगी- इस घर से विदा होते हुए आप बीजनापुर वाली दादी अपने सारे अधिकार प्राप्त कीजियेगा। इस घर के कुलदीपकों के अनुपस्थिति में आज इस घर का मुखिया होने का हक़ मुझ विधवा स्त्री को मिला है। मैं आज आपके हिस्से की सारी जमीन आपके नाम करने का संकल्प करती हूँ। आपके अधिकारों की रक्षा अब मेरी जिम्मेदारी है। बहुत जल्दी आपकी स्मृति में आपके जमीन पर महिला महाविद्यालय का निर्माण कराया जायेगा। उचित तरीके से दाह संस्कार के तेरह दिनों के अन्दर ही आपके अधिकारों का हस्तांतरण करवाया जायेगा। आप जननी हैं, हमारी माँ हैं, आपको मोक्ष की प्राप्ति हो। यही आपके लिए उचित मृत्यु भोज होगा। कहते कहते बड़की दुलहिन भाव विह्वल हो गयी। परिक्रमा करते हुए पार्थिव शरीर पर पछाड़ खाकर गिर पड़ीं।

❐❐❐

1. मकान नम्बर-21,सेक्टर-सी, सुभाष कालोनी, नियर हाई टेंशन लाइन, गोविंदपुरा, भोपाल- 462023, फोन - 9575465147
ई मेल - roy.kanta69@gmail.com

साउथ ट्रिप का अंतिम पड़ाव

–डॉ. मुकेश असीमित

हमारी साउथ ट्रिप का आखिरी बिंदु था — ईशा योग सेंटर, जो कि कोयंबटूर के पास स्थित है। यह आश्रम मैं लगभग पाँच वर्ष पहले भी देख चुका था, और तभी यह ठान लिया था कि एक बार पूरे परिवार के साथ यहां फिर आना है।

हालांकि, चार दिन की दौड़भाग और घूमने-फिरने की थकान अब अपने असर दिखा चुकी थी। बच्चे और श्रीमती दोनों ही इस अंतिम गंतव्य के लिए ज़्यादा उत्साहित नहीं थे। पोटी से निकलते समय श्रीमती जी ने ड्राइवर को ताकीद कर दी कि जितना जल्दी पहुंच सकें, पहुंचा दें, ताकि वहां ज़्यादा रुकना न पड़े और सीधे एयरपोर्ट जाया जा सके।

रास्ते में कूनूर में एक डॉल्फिन नोज़ पॉइंट देखा। इसके बाद ड्राइवर ने हमें ईशा योग सेंटर की ओर मोड़ दिया। जैसे-जैसे सेंटर नज़दीक आता गया, एक अद्भुत आध्यात्मिक आभा ने हम सबको जैसे अपने घेरे में ले लिया।

मैं पूजा-पाठ, मान्यताओं या धर्म को अंध-श्रद्धा की दृष्टि से नहीं देखता, बल्कि उनके पीछे के वैज्ञानिक कारणों को समझने का इच्छुक रहता हूँ। सद्गुरु — जिन्हें मैं अक्सर सुनता हूँ — की बातों में जीवन-दर्शन, विज्ञान, प्रकृति और तर्क का अनूठा समन्वय होता है। मिट्टी, जल और पर्यावरण संरक्षण से जुड़े उनके अनेक विश्वव्यापी अभियानों ने मुझे प्रभावित किया है। उनका Inner Engineering कोर्स आज दुनिया भर में मान्यता प्राप्त है।

यहाँ भगवान शंकर को 'आदि योगी' के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है — पहले योग गुरु जिन्होंने 112 योग सूत्रों की व्याख्या की थी। सात ऋषियों ने इन सूत्रों को आत्मसात कर, ज्ञान की यह धारा संसार के विभिन्न क्षेत्रों में फैलायी।

'Inner Engineering' एक अत्यंत वैज्ञानिक कार्यक्रम है, जिसका उद्देश्य है — हमारे सबकॉन्शस माइंड के भीतर छिपी संभावनाओं को जागृत करना और चेतन रूप से आत्मानुभूति की दिशा में ले जाना।

मंदिर परिसर की वास्तुकला मानो आपको प्राचीन युग की स्थापत्य कला की ओर ले जाती है — जैसे आप पुरातत्व विभाग द्वारा संरक्षित किसी ऐतिहासिक धरोहर को निहारने आए हों।

दीवारों पर उकेरे गए चित्र, प्रतीक चिह्न, धार्मिक प्रतीकात्मकताएं और मूर्तियाँ — सभी न केवल अद्भुत शिल्पकौशल का प्रमाण हैं, बल्कि एक वैज्ञानिक रूप से प्रमाणित अवधारणा को भी मूर्त रूप देते प्रतीत होते हैं।

"परिसर में मोबाइल फ़ोन पूर्णतः वर्जित हैं — और यह निर्णय वास्तव में अत्यंत सराहनीय है।

ऐसी जगह, जहाँ आपको अध्यात्मिक अनुभव को महसूस करना होता है, वहाँ मोबाइल में दृश्यों को कैद करने की बजाय, मन और इंद्रियों से उन्हें आत्मसात करना अधिक महत्वपूर्ण है।

यह स्थान कैमरे में भर लेने के लिए नहीं, अपने भीतर कुछ भर लेने के लिए है।

यदि आपको कोई दृश्य सहेजना ही है, तो अपने शरीर के कैमरे — यानि आँखों का उपयोग कीजिए, और उसे हृदय में सुरक्षित कीजिए।

यहाँ आप किसी कॉल की प्रतीक्षा में नहीं, न ही किसी बॉस के मैसेज की चिंता में हैं।

यहाँ आप निश्चिंत होकर, स्वयं के साथ, पूर्णतः उपस्थित होते हैं।

और यही उपस्थिति — आपकी यात्रा को सार्थक बनाती है।"

जो बात मुझे यहाँ सबसे अच्छी लगी, वह थी — आश्रम की व्यवस्था और प्रकृति के साथ उसका सामंजस्य। एक विशेष दृश्य वो था जब हमने देखा कि कुछ विशालकाय नंदी बैलों को पारंपरिक गाड़ियों में जोतकर आध्यात्मिक परिसर का भ्रमण कराया जा रहा था — यह दृश्य सौंदर्य और सांस्कृतिक स्मृति दोनों का सम्मिलन था।

नंदी बैलों का यह सदुपयोग देखकर मुझे लगा की इसे शहरों में खुले घूम रहे आवारा पशु जैसे नंदीऔर सांडों का उचित उपयोग किया जा सकता है , नंदी बैलगाड़ी सवारी का उपयोग हेरिटेज होटल, रिसोर्ट लोक संस्कृति का निरूपण करते मेले, धार्मिक स्थल, मनोरंजन पार्क ,आदि में लाया जा सकता है..

ईशा योग केंद्र में देश-विदेश से हज़ारों श्रद्धालु वॉलंटियर के रूप में सेवा में जुटे हुए हैं — पूरा आश्रम उनकी मेहनत और समर्पण से ही संचालित हो रहा है।

सड़क पर जो सांड इधर-उधर घूमते रहते हैं, अगर नगरपालिकाएं और सरकारें चाहें तो ऐसे संगठित और उपयोगी उपयोग की ओर ध्यान दे सकती हैं।

यहाँ आने वाले श्रद्धालु न तो धर्मांध होते हैं, न ही टोने-टोटकों, गंडे-तावीज़, झाड़-फूंक या किसी चमत्कारी मंत्र से व्याधियाँ दूर करने की आशा लिए होते हैं।

यहाँ न तो कोई मंत्र फूँका जाता है, न कोई जादुई उपाय बताया जाता है।

यह स्थान विशुद्ध आध्यात्मिक प्रक्रिया पर केंद्रित है — जहाँ योग, ध्यान और आत्मचिंतन के माध्यम से भीतर की यात्रा की जाती है।

यहाँ आने वाले ज़्यादातर लोग उसी आध्यात्मिक अनुभूति को जीने आते हैं — जो आश्रम के परिसर में कदम रखते ही अनुभव होने लगती है।

आश्रम का मुख्य स्थल — एक गुम्बदाकार वास्तु संरचना — आध्यात्मिक ऊर्जा और प्राचीन ज्ञान का अद्भुत संगम है। कहा जाता है कि सद्गुरु ने इस स्थल को अपनी संपूर्ण साधना की ऊर्जा से प्राण-प्रतिष्ठित किया है। यहाँ मात्र दो मिनट आँखें बंद कर ध्यान लगाने से व्यक्ति गहरी ध्यानावस्था में चला जाता है — यह अनुभूति कई श्रद्धालुओं ने बताई है।

हालाँकि हमें वैसी कोई चमत्कारी अनुभूति तो नहीं हुई — लेकिन एक ऐसी अनकही शांति और अनुभव ज़रूर हुआ जिसे शब्दों में व्यक्त करना कठिन है।

हाँ, यहाँ आँख मूँदकर मानने जैसी कोई बात नहीं है। हर किसी का अनुभव भिन्न होता है — और शायद यही आध्यात्मिक यात्रा की सबसे सुंदर बात है।

मंदिर परिसर की वास्तुकला मानो आपको प्राचीन युग की स्थापत्य कला की ओर ले जाती है — जैसे आप पुरातत्व विभाग द्वारा संरक्षित किसी ऐतिहासिक धरोहर को निहारने आए हों।

दीवारों पर उकेरे गए चित्र, प्रतीक चिह्न, धार्मिक प्रतीकात्मकताएं और मूर्तियाँ — सभी न केवल अद्भुत शिल्पकौशल का प्रमाण हैं, बल्कि एक वैज्ञानिक रूप से प्रमाणित अवधारणा को भी मूर्त रूप देते प्रतीत होते हैं।

ऐसे ही एक लिंग भैरवी का भव्य मंदिर ,यह शक्ति की अधिस्तात्री देवी का मंदिर ,वहा के दर्शन कर हम एक गुम्बदनुमा संरचना में निर्मित ध्यान केंद्र पर पहुंचे। वहाँ दस मिनट के लिए ईशा क्रिया ध्यान' की प्रक्रिया संपन्न की गई थी।

बिलकुल पास ही एक सुंदर कुंड था, जिसमें स्नान किया गया।

पानी स्वच्छ, निर्मल और शीतल था।

वहाँ के नियमों के अनुसार सभी को अपने वस्त्र उतारकर, स्थान पर उपलब्ध पारंपरिक लुंगी पहनकर ही स्नान करना होता है—हालाँकि स्नान करना अनिवार्य नहीं था।

पर ध्यान रहे — यह कोई पिकनिक स्पॉट नहीं है।

यहाँ जाकर यदि आप तैराकी करने लगें, हो-हल्ला मचाएँ या जलक्रीड़ा में लिप्त हो जाएँ — तो यह स्थान के अनुशासन और आत्मिक गरिमा के विपरीत होगा।

यह एक आध्यात्मिक सरोवर है — जहाँ आप संयम और निर्देशों का पालन करते हुए भीतर की यात्रा पर जाते हैं।

यहाँ कोई दंड का भय नहीं, कोई प्रहरी नहीं — फिर भी सब कुछ अनुशासित है।

क्योंकि यह व्यवस्था किसी 'नियम-कानून की किताब' ने नहीं,

बल्कि मानव की आत्मा और धर्म के सहज संस्कारों ने गढ़ी है।

सच यही है — धर्म ही वह शक्ति है जिसने इंसान को इंसान होना सिखाया है।

और विडंबना यह भी है कि जब-जब धर्म को ग़लत समझा या जानबूझकर तोड़ा गया,

तब-तब इंसान पशुव्रत हो गया।

इसी धार्मिक आस्था और विश्वास के सहारे

वृहद स्तर के आयोजन, विशाल परिसर की कार्यव्यवस्था

पूरी अनुशासनबद्धता और मानव संसाधन की पूर्ण क्षमता के साथ सुचारु रूप से संचालित हो पाते हैं।

ऐसे आयोजनों में अनुशासन, सेवा-भाव और समर्पण इतना प्रबल होता है

कि बड़ी-बड़ी मानव संसाधन प्रबंधन की कंपनियाँ,

जिनके पास MBA डिग्रियाँ, मैनेजमेंट मॉडल और डेटा एनालिटिक्स की फौज है —

वे भी कई बार असफल हो जाती हैं।

क्योंकि यहाँ जिम्मेदारी का बोध कानूनी अनुबंध से नहीं,

बल्कि श्रद्धा, विश्वास और आत्मिक जुड़ाव से उपजता है।

इसके बाद हम पहुँचे विशाल 'आदि योगी' की प्रतिमा के परिसर में, जहाँ रात्रिकालीन लेज़र शो का आयोजन था।

उसकी विशालता, उसका आलौकिक सौंदर्य— हृदय को रोमांचित कर गया।गले मेंशेषनाग ,कानन कुंडल,माथे पर अर्ध चन्द्रमा धारण किये हुए ,जैसे साक्षात् शिव धरती पर अवतरित हुए हो !

श्रीमती जी ने बह्मवान शिव की मूर्ती को देखकर श्रद्धा से कहा — "वही तो हैं, शंकर भगवान् जिनकी हम पूजा करते हैं..."

मैंने उत्तर दिया — "हाँ, वही हैं — आदि गुरु।"

ये मानवता के पहले योगी हैं — पहले गुरु।

जिन्होंने आत्मज्ञान की अमृतधारा को प्रथम बार प्रवाहित किया।

उनके लिए न कोई जन्म, न मरण — वे जीवन और मृत्यु दोनों से परे हैं।

वे न पुरुष हैं, न स्त्री — वे "अर्धनारीश्वर" हैं, पूर्णता के प्रतीक।

लेज़र शो अंग्रेज़ी में था, लेकिन उसकी दृश्यावली इतनी आकर्षक थी कि बच्चे-बड़े सभी आनंदित हो उठे।

शो में 'आदि योगी', 'अर्धनारीश्वर', 'सप्तऋषि' और मानव चेतना की विकास यात्रा को लेकर बहुत कुछ बताया गया।

शो के बाद मेरी बिटिया ने कहा — "इस पूरे टूर का सबसे अच्छा अनुभव यही रहा।"

बस... यही सुनने को तो मैं आया था।

एक मधुर दीप स्मृति लेकर, हम वापसी की राह पकड़ चुके थे।

❐❐❐

लेखक, व्यंग्यकार एवं चिकित्सक, गर्ग हॉस्पिटल, गंगापुर सिटी (राजस्थान)

अनंत की यात्रा के पथिक

–मनोज कुमार शिव

'मुनिया! जल्दी-जल्दी हाथ चला! अभी बहुत काम बाकी है।'

उस पटाखा फैक्ट्री की तीसरी मंजिल के एक हॉल में कार्टन डिब्बों को मुनिया के पास लाकर राजू ने कहा।

' हाँ... ' हाँ . काम तो बहुत है लेकिन हाथ तो भगवान जी ने दो ही दिए हैं।' सुबह से तैयार किए पटाखों के पैकेट को डिब्बों में भरते हुए मुनिया बोली तो पास में काम कर रहा बबलू भी खीं..खीं.. कर हँसने लगा।

' मैंने तो सुबह से आतिशबाजी के बीस डिब्बे पैक कर लिए हैं।' उन्हीं की शिफ्ट में काम करने वाला बबलू उत्साह से बोला।

राजू, बबलू और मुनिया तीनों अपने घर से मीलों दूर इस पटाखा फैक्ट्री में पिछले दो वर्षों से काम कर रहे हैं। उनकी उम्र 15 से 18 वर्ष के बीच की है। घर पर आर्थिक हालात अच्छे नहीं थे कि गांव के बाकी बच्चों की तरह वे भी पढ़ाई लिखाई कर पाते। सब के नसीब में सुख कहाँ लिखा होता है !

राजू के घर में उसकी अपाहिज माँ व दो छोटे भाई-बहन है। पिता एक हादसे में गुजर गए थे। माँ घर- घर जाकर साफ सफाई का काम करती है। मुनिया के पिताजी अक्सर शराब के नशे में बेसुध पड़े रहते हैं। थोड़ा बहुत मेहनत मजदूरी करके जो कमाया हो उसी की दारू पीकर उड़ा देते हैं। घर में दूसरा कोई आय का स्रोत भी नहीं है।

बबलू को उसके मुंह बोले चाचा गाँव से शहर ले आए थे। बबलू के बाबा ने गाँव में किसी रईस से कुछ वर्ष पहले ऋण ले रखा है। हर वर्ष उस ऋण का कुछ ही हिस्सा चुका पाते हैं। वे गाँव में ईंट भट्टे में काम करते हैं। लेकिन काम नियमित तौर पर नहीं मिल पाता है इसलिए उन्होंने बबलू को फैक्ट्री में काम करने को भेज दिया है ताकि लिए गए ऋण को ब्याज सहित जल्दी लौटाया जा सके।

यह पटाखा फैक्ट्री शहर के पूर्वी इलाके में है। आसपास आबादी

राजू खुद तो आगे नहीं पढ़ पाया लेकिन वह अपने भाई बहन को जितना संभव हो सके पढ़ाना चाहता है। उसकी दिल्ली ख्वाहिश है कि उसके भाई-बहन पढ़ लिखकर अपने पैरों पर खड़े हो सकें। बबलू भी अपने गरीब मां-बाप की सहायता करना चाहता है। दूसरी यूनिट में काम कर रहे हैं 29 वर्षीय महेश को इस फैक्ट्री में काम करते हुए 8 वर्ष हो गए हैं।

बसती है। यह एक पाँच मंजिला इमारत है। हर मंजिल पर बड़े-बड़े हॉल बने हैं। यहां काम करने वाले ज्यादातर महिलाएं और बच्चे हैं। हर कार्य को एक चरणबद्ध तरीके से पूरा किया जाता है। मान लीजिए पटाखों को बनाना है तो इस प्रक्रिया में सबसे पहले मोटे कागज को मशीनों या हाथ से गोलाकार या बेलनाकार काटा जाता है फिर उन कटे हुए भागों में दूसरे मजदूर वर्ग द्वारा तैयार किए हुए बारूदी पेस्ट को पटाखों को वांछित आकृति देकर भर दिया जाता है। साथ ही ऊपरी सिरे पर ज्वलनशील बत्ती लगा दी जाती हैं। अब इसे दो-तीन दिन तक सुखाया जाता है और अंततः डिब्बों में पैक कर बेचने को भेज दिया जाता है।

मुनिया आज थोड़ी परेशान है वो इसलिए कि एक महीने बाद दीपावली का महापर्व आने वाला है और इस उत्सव के लिए उसकी कोई भी तैयारी नहीं है। अभी उन्हें फैक्टरी प्रबन्धन से पिछले महीने का मेहनताना भी नहीं मिला है। मुनिया सोच रही है कि वो आज फिर ठेकेदार से पैसे मांगेगी। क्या पता मुआ कुछ रुपए दे ही दे ताकि समय रहते पैसे घर पहुंचाए जा सके। जिससे माँ दीपावली के मौके पर अपने लिए साड़ी और छोटी बहन के लिए मिठाइयां व पटाखे खरीद सके।

पिछली दफा पैसे भेजने में देर हो गई थी। माँ तो नाराज नहीं हुई थी लेकिन छोटी बहन ने दो दिन तक बात नहीं की थी। क्योंकि उसकी सभी सहेलियों के पास दीपावली के मौके पर नई गुड़िया ,मिठाइयां और पटाखे थे। वक्त ने छोटी ही उम्र में मुनिया के मासूम कंधों पर जिम्मेदारियों का बोझ डालकर उसे समय से पहले ही परिपक्व बना दिया था।

राजू अपनी माँ के लिए बड़ा सहारा है। गांव में ही एक दिन भारी बोझा उठाते हुए माँ अचानक गिर पड़ी थी। टांग की हड्डी टूटने से अब वह पहले जैसा काम नहीं कर पाती लेकिन लोगों के घर जाकर जैसे तैसे झाड़ू पोंछा लगाकर,साफ सफाई अभी भी करती है।

दीपावली नजदीक होने पर आजकल काम का ज्यादा जोर है। ठेकेदार दिन में दो-दो दफा आकर काम देख कर जाता है अगर कोई मजदूर सुस्ताता हुआ पाया जाए तो वे उसे बुरी तरह हड़काता है पगार में कटौती सो अलग।

मुनिया, राजू ,बबलू जैसे कामगार देश के दूसरे प्रांतों से यहां आकर काम कर रहे हैं। ज्यादातर मजदूर उत्तर प्रदेश और बिहार से हैं। फैक्ट्री में आने का तो समय निश्चित है लेकिन जाने का कोई समय नहीं है और आजकल तो त्योहार की वजह से काम को लेकर अधिक मारामारी है। पिछले दो हफ्तों में चार लॉरी लोड होकर जा चुके हैं। फैक्ट्री का मालिक इस मौक़े पर ज्यादा से ज्यादा पैसा कमाना चाहता है।

इस पूरी पटाखा फैक्ट्री में बारूदी रसायन की तेज गंध घुल गई है। यह रसायन मानवीय त्वचा व फेफड़ों को नुकसान पहुंचाता है। जब बारूद के घोल का पेस्ट बनाया जाता है तो बारूदी पाउडर के अति सूक्ष्म कण हवा में फैल जाते हैं जो की फेफड़ों में समाकर एलर्जी ,दमा , कैंसर जैसी बीमारियों का कारण बनते हैं। मुनिया, बबलू और राजू के पास न तो मास्क है और ना ही हाथ की त्वचा को बचाने के लिए दस्ताने। बाकि कामगार भी इन ज़हरीले रसायनों से स्वास्थ्य पर पड़ने वाले प्रतिकूल प्रभावों से बेखबर है।

राजू ने महसूस किया है कि ज्यादातर कामगारों को खांसी व एलर्जी जैसी शिकायत हमेशा ही बनी

रहती है। पिछले हफ्ते से बुजुर्ग रेशमा ताई अब काम पर नहीं आ रही है। पता चला था कि उन्हें दो हफ्तों से बहुत ज्यादा खांसी की शिकायत हो गई थी।

मुनिया ने अपने घर में हर ज़रूरी चीज़ के लिए संघर्ष देखा है। आय के साधन नगण्य थे। अभावग्रस्त जीवन था। वह तभी से विचार करती थी कि कैसे गरीबी की इन बेड़ियों को तोड़ा जा सकता है। गरीब के लिए क्या तीज त्यौहार ?? सभी दिन एक जैसे ही होते हैं। इन खास मौकों को मनाने के लिए उमंग व उत्साह के साथ साथ जेब में पैसा होना भी जरूरी है। मुनिया ने देखा है कि गांव में कुछ रईस लोग त्योहार आदि के मौके पर अपने समकक्ष धनवान लोगों को उपहार व मिठाई आदि भेंट कर बधाई देते हैं। मुनिया के मन में हमेशा ये बात रहती है कि कब वे भी इस तरह से तीज त्योहार मना पाएंगे ? कब उनके आर्थिक हालात बदलेंगे?

राजू खुद तो आगे नहीं पढ़ पाया लेकिन वह अपने भाई बहन को जितना संभव हो सके पढ़ाना चाहता है। उसकी दिल्ली ख्वाहिश है कि उसके भाई-बहन पढ़ लिखकर अपने पैरों पर खड़े हो सकें। बबलू भी अपने गरीब मां-बाप की सहायता करना चाहता है। दूसरी यूनिट में काम कर रहे हैं 29 वर्षीय महेश को इस फैक्ट्री में काम करते हुए 8 वर्ष हो गए हैं। अगले महीने उसकी बहन की शादी है। उसे विश्वास है कि ठेकेदार से गुहार लगाकर वह बहन की शादी के लिए कुछ पैसे एडवांस ले लेगा ताकि बारातियों के आने व खाने-पीने का उचित प्रबंध किया जा सके।

यह फैक्ट्री इन कामगारों के लिए मात्र एक बिल्डिंग नहीं है बल्कि उनके सपनों को पूरा करने का एक बहुत बड़ा साधन है। यह उनके लिए किसी मंदिर से कम नहीं है। तभी तो ज्यादातर कामगार सुबह फैक्ट्री के गेट से अंदर प्रवेश करते हुए जमीन को स्पर्श कर रजकणों को माथे पर लगाते हैं। उन्हें अपने पेशे, अपनी अजीविका से लगाव है... गहरी आस्था है।

फैक्ट्री रोड़ से थोड़ी ही दूर है। रोड़ से फैक्ट्री तक एक छोटी सड़क आती है। इस फैक्ट्री में लगभग 40- 50 कामगार अलग-अलग शिफ्ट में काम कर रहे हैं। कामगार दिन के लिए खाना खुद साथ ही ले आते हैं। वैसे तो यह फैक्ट्री 5 मंजिला है लेकिन कार्टन बॉक्स, पटाखों के लिए बारूद व अन्य चीज़ें बहुत अव्यवस्थित तरीके से रखी गई हैं। एक कमरे से दूसरे कमरे में जाने वाले रास्तों व सीढ़ियों पर सामान रखा है जिससे रास्ता और भी संकरा हो गया है। इस फैक्ट्री में काम करने वाले कामगारों के दोस्त जो दूसरे उत्पाद बनाने वाली फैक्ट्रियों में काम कर रहे हैं उन्हें उनकी फैक्ट्री प्रबंधन द्वारा दीपावली पर बोनस व उपहार में मिठाइयां दी जाने वाली है। उनके मेहनताने में भी बढ़ोतरी की खबर है।

मुनिया, बबलू, राजू और महेश जैसे कामगारों को भी अपनी फैक्ट्री प्रबंधन की तरफ से उपहार व वेतन में बढ़ोतरी की उम्मीद है। राजू लम्बे समय से अपनी अपाहिज माँ का किसी अच्छे अस्पताल में इलाज करवाने का सोच रहा है। मुनिया अपनी माँ के पास थोड़ा और पैसा पहुंचाना चाहती हैं। लापरवाह नशेड़ी बाप को अपने परिवार की कोई परवाह ही नहीं है।

नन्हे बबलू को लगता है कि उनकी मेहनत से ही लोग जश्न मना पाते हैं। चाहे कोई शादी हो या किसी

जीत की खुशी हो। चाहे कोई त्यौहार हो या चुनाव के नतीजे आने हो। उनके जैसे ही कामगारों के द्वारा फैक्ट्री में बनाए गए पटाखों को फोड़कर ही खुशी का इजहार होता है। जश्न मनाया जाता है। वह सोचता है कि लोगों की खुशियों में उन जैसे बहुत से कामगारों का भी बहुत बड़ा हाथ है।

दीपावली को अब केवल एक सप्ताह रह गया है। त्यौहार को लेकर शहर में अभी से बहुत रौनक बढ़ चुकी है। बहुमंजिला इमारतों को रंग-बिरंगी रोशनी की झालरों से सजाया गया है। लगभग हर दुकान में खरीदारी पर लकी ड्रॉ ,कूपन और गिफ्ट आदि की योजनाएं चल रही है। बाजार में हर आयु वर्ग के ग्राहकों को रिझाने के लिए जोरदार प्रयास किया है। पिछली शाम को फैक्टरी से जल्दी निकल कर मुनिया ,बबलू और राजू बाजार गए थे। बाजार की चकाचौंध देखकर उनकी आंखें चुंधिया गई।

मुनिया की नज़रें माँ के लिए साड़ी की खोज कर रही थी। बेचारी माँ के पास कोई नई साड़ी नहीं रह गई थी।राजू अपने छोटे भाई बहन के लिए जूते तलाश रहा था।विद्यालय जाने के लिए 2 साल पहले जो जूते उन्हें दिलाए थे वह अब बुरी तरह फट गए थे। बबलू का ध्यान तो हलवाई की बड़ी-बड़ी दुकानों पर शीशे के पीछे करीने से सजा कर रखी मिठाइयों पर था। सबके मन में भरपूर उत्साह था। लेकिन ये उत्साह भौतिक वस्तुओं की प्राप्ति से जुड़ा था और आर्थिक तंगहाली के चलते उनका ये उत्साह अल्पकालीन ही रहने वाला था। उन्हें उम्मीद है कि फैक्ट्री मालिक एक-दो दिन में उन्हें उनकी पगार दे देगा। जिससे वो भी बाकी लोगों की तरह बाजार से कुछ ना कुछ पसंदीदा खरीद पाएंगे।

फैक्ट्री के चारों तरफ आठ 10 फुट की ऊंची दीवार लगी हुई है। एक बड़ा सा काले रंग का गेट है लेकिन हैरानी की बात यह है कि गेट पर या आसपास फैक्ट्री और फैक्ट्री के मालिक के नाम का कोई भी साइन बोर्ड नहीं लगा है।गेट के साथ ही सुपरवाइजर की गाड़ी के साथ एक दो और गाड़ियां खड़ी रहती हैं। यह इलाका समतल है। अधिकतर कामगार साइकिल का प्रयोग करते हैं। साइकिलों की एक लंबी कतार बिल्डिंग की पिछली तरफ लगी रहती है।

दीपावली के 2 दिन पहले सभी को चौंकाते हुए फैक्ट्री प्रबन्धन ने एडवांस में उस महीने का मेहनताना और मिठाई दिए जाने की घोषणा कर दी। अब सभी कामगारों के मन में दीपावली को लेकर उत्साह दोगुना हो गया था। राजू ,मुनिया ,बबलू के साथ फैक्ट्री के बाकी कामगार भी आज बहुत खुश थे क्योंकि आज सभी कामगारों को फैक्ट्री प्रबंधन की तरफ से मिठाई और महीने भर का मेहनताना मिलने वाला था। शाम को मिलने वाले पैसों का क्या करना है , क्या खरीदना है, सभी के मन में कुछ न कुछ चल रहा था। सभी कामगार जल्द से जल्द आज का काम खत्म करने में लगे थे। हर कामगार फैक्टरी प्रबंधन का मिठाइयों व पगार के लिए धन्यवाद कर रहे थे। फैक्टरी प्रबंधन के खिलाफ उनके मन में जमा रोष आज कहीं गायब हो गया था।

फैक्ट्री प्रबंधन को इस वर्ष काफी मुनाफा हुआ था इसलिए उन्होंने कामगारों को दीपावली बोनस के साथ पगार और मिठाइयां बांटी थीं। आज दोपहर बाद तक अपना सारा काम निपटा कर राजू, बबलू और मुनिया बाजार जाने को उतावले थे। वह तीनों खुशी खुशी बाजार पहुंच गए। बाजार में काफी भीड़

थी। ग्राहकों को आकर्षित करते दुकानदारों का शोर ,लाउडस्पीकर पर बज रहे धार्मिक संगीत , उस विशेष अवसर की विशेषता को और ज्यादा प्रदर्शित कर रहे थे। हर दुकान व स्टॉल पर काफी लोग जमा थे। ग्राहकों और दुकानदारों के बीच मोल भाव को लेकर सौदेबाजी चल रही थी। मुनिया ने अपनी माँ के लिए एक पीले लाल रंग की बनारसी साड़ी व अपनी छोटी बहन के लिए एक बहुत सुंदर फ्रॉक और गुड़िया खरीदी। राजू ने अपने छोटे भाई-बहन के लिए जूते व नए कपड़े खरीदे। बबलू की नज़रें नाना प्रकार की मिठाइयों पर थी। उसने अपने व मुनिया और राजू के लिए जलेबी खरीद ली थी। वह तीनों आज बाजार घूम कर व खरीदारी करके बहुत खुश थे। आज मिली पगार ने उनकी खुशियों को जीवंत कर दिया था। उनका आज का दिन बहुत अच्छा बीता था।

वे अगले दिन भी उसी खुशी और उत्साह के साथ फैक्ट्री लौटे। आज काम करते-करते उन्हें बड़ा आनंद आ रहा था। क्योंकि कल दीपावाली थी और आज दोपहर बाद उन्होंने अपने अपने घर के लिए भी निकलना था।

' मुझे अचानक घर में देखकर तो माँ हैरान हो जाएगी और छोटी... वो तो खुशी से पागल ही हो जाएगी..उसे तो खाने के लिए मिठाई और दोस्तों के साथ फोड़ने के लिए पटाखे चाहिए। ' मुनिया बोली।

दोपहर के लगभग 2:00 बजे का वक्त हो रहा था। कुछ कामगार साथ लाया हुआ भोजन कर रहे थे। आज दो लॉरी पटाखे लोड होने वाली थी। लोड होने वाले पटाखों को एक जगह इकट्ठा कर दिया गया था। अचानक फैक्ट्री की दूसरी मंजिल पर एक जोरदार धमाका हुआ और धुएं का एक जबरदस्त गुब्बार उठा। कुछ क्षणों को यूं लगा मानो जैसे दिन में ही अंधेरा हो गया हो। उसके बाद तो एक के बाद एक सैंकड़ों धमाके होने लगे। मानो जैसे परमाणु बम की नाभिकीय विखंडन श्रृंखला हो।

देखते ही देखते हाहाकार मच गया। चारों तरफ धुआं ही धुआं ... काला धुंआ... सफ़ेद धुंआ...आग को खुद में समेटे धुंआ...।

चींख.. पुकार... बचाओ .. बचाओ.. जैसी दर्दनाक आवाज़ों से आसमान गूंज उठा था। देखते ही देखते पूरी फैक्ट्री धू धू कर जलने लगी। बारूद के भंडार को जैसे ही आग लगी एक जोरदार विस्फोट के साथ पूरी बिल्डिंग भरभरा कर जमींदोज हो गई।

चारों तरफ हो हल्ला ... हाए तौबा... ये क्या हो गया ... हे भगवान! जैसे स्वर हवा में तैरने लगे। फायर ब्रिगेड की गाड़ियां कुछ ही देर में पहुंच गई थीं लेकिन आग पर काबू पाना आसान नहीं हो रहा था। कुछ कामगार जो किसी काम के लिए बाजार तक गए थे अपने साथी कामगारों को ध्वस्त हो चुकी फैक्ट्री में कैद पाकर बुरी तरह रोने लगे। पुलिस की दो गाड़ियां भी वहां पहुंच चुकी थी। फैक्ट्री के सुपरवाइजर और मालिक के खिलाफ एफआईआर दर्ज हो चुकी थी। फैक्टरी के बारे में बात करते हुए कुछ लोग कह रहे थे कि यह फैक्ट्री यहां पर पिछले 10-12 सालों से गुपचुप तरीके से चल रही थी। इस फैक्ट्री में काम करने वाले कामगारों का न तो पंजीकरण हुआ था न ही सुरक्षा को लेकर कोई एहतियात बरते जा रहे थे। बारूदी प्रयोग के दुष्प्रभावों से कामगारों के गिरते स्वास्थ्य के प्रति फैक्टरी प्रबंधन बिल्कुल भी सजग नहीं था।

राजू , बबलू , मुनिया का भी इस दुर्घटना में कोई अता पता नहीं था। धमाके इतनी जोरदार थे कि आसपास की इमारतों के शीशे भी चकनाचूर हो गए थे। फैक्ट्री के पीछे जहां कामगारों की साइकिल लाइन में लगी रहती थी वहां अब टूटी-फूटी साइकिलों का कबाड़ जमा था।

पुलिस ने थोड़ा बहुत जांच पड़ताल की तो पाया की फैक्ट्री अवैध तरीके से चलाई जा रही थी। इस फैक्ट्री में काम करने वाले मजदूरों की जान जोखिम में डालकर उनसे काम लिया जा रहा था। फैक्ट्री में काम करने वाले कितने मजदूर थे ....कहां से थे....उनका स्वास्थ्य कैसा रहता था... क्या उनका कोई एकल या सामूहिक बीमा हुआ था...इस बात का किसी को कुछ भी पता नहीं था। फैक्टरी के मालिक सारे नियमों को दरकिनार करते हुए मनमाने तरीके से उत्पादन कर रहे थे।

अब तक आसपास के काफी लोग वहां जमा हो चुके थे। बड़ी बड़ी मशीनों की सहायता से बचाव कर्मी इस हादसे में जल चुके व घायल हुए लोगों को मलबे से बाहर निकाल रहे थे। कुछ देर बाद अपने लंबे काफिले के साथ स्थानीय विधायक वहां पहुंच गया। उसने मृतकों व घायलों के लिए मुआवजे की घोषणा कर दी।

'मुआवजा दिलाने का तो नाटक है' एकत्रित भीड़ में से कोई फुसफुसाया। कुछ तो कह रहे थे कि फैक्ट्री के मालिक और नेता की आपस में अच्छी बनती है। ध्वस्त हुई इमारत के नीचे दबकर मरे कामगारों के शवों को पोस्टमार्टम के लिए अस्पताल ले जाया जा रहा था। बचाव और राहत कार्य देर रात तक चलता रहा। नेताजी किसी जरूरी काम का हवाला देखकर घटनास्थल से चलते बने। इस दुर्घटना में जो कामगार जिंदा भी बचे थे वो बहुत बुरी तरह जल चुके थे। भयानक विस्फोट की वजह से किसी की बाजुएं नहीं रहीं थी तो किसी को अपनी टांगों से हाथ धोना पड़ा था।

अगले दिन दिवाली थी। अगला दिन,,... यानि नया दिन... आज हादसों में मारे गए कुछ लोगों के परिजन अस्पताल में अपनों की लाशों को ले जाने आए थे। उनकी चीखों से अस्पताल गूंज उठा था। जिन मृतकों की पहचान नहीं हो पाई थी ,कुछ एनजीओ और सामाजिक कार्यकर्ता उनका अंतिम संस्कार करने के लिए आगे आए थे।

शाम होते-होते शहर पिछले कल की घटना को भूलकर दीपावली के जश्न में डूब चुका था। आज ही के दिन भगवान राम कई वर्षों के बाद घर लौटे थे। उनके लौटने की खुशी में नगर वासियों ने घी के दीपक जलाकर उनका स्वागत किया था। कल हुए हादसे में मारे गए लोगों के परिजन भी उनका घर पर इंतज़ार कर रहे होंगे। लेकिन उन्हें क्या पता कि वे तो इस लोक को छोड़कर अनंत की यात्रा के पथिक हो गए थे।

❐❐❐

1. घ्याल, पत्रालय –नम्होल,तहसील – सदर, जिला – बिलासपुर (हिमाचल प्रदेश), पिन – 174032
मोबाइल – 8219995180/8679146001 - व्हाट्स एप नंबर) ई - मेल : shivkumarmanoj@gmail.com

1

लाख आँसू हमारे ढ़लते हैं।
लोग पत्थर कहाँ पिघलते हैं।
जान पायेंगे हम उन्हें कैसे,
शक़्ल पे शक़्ल जो बदलते हैं।
शूल महफ़ूज रहते शाखों पर,
फूल पेरों तले कुचलते हैं।
ये ज़माना है अज़नबी उनसे,
जो घड़ी भर कहीं निकलते हैं।
बात हो आपकी असर कैसे,
आप कहते जिसे फिसलते हैं।

2

अगर मेरी कही वो मान लेगा।
सभी मर्ज़ी मेरी पहचान लेगा।
लगाकर और इक इल्ज़ाम मुझपर,
कहाँ मुझसे मेरा ईमान लेगा।
चुकाएगा सभी बदले पुराने,
सज़ा देगा कि मेरी जान लेगा।
कभी रहता नही अपनी रज़ा पर,
कहाँ तक और का फ़रमान लेगा।
चला है कारवाँ जिस रास्ते पर,
नज़र उस ओर अपनी तान लेगा।
ज़रूरत या वज़ह के काम सब वो,
करेगा तब उसे जब ठान लेगा।

3

ख़ुशी देखी नहीं जाती।
हँसी रोकी नहीं जाती।
लबों की चुप्पियाँ मुश्क़िल,
जुबाँ भी सी नहीं जाती।
रिवाज़ों, क़ायदों से डर,
वफ़ा तोड़ी नहीं जाती।
सभी कुछ पा लिया लेक़िन,
कमी अपनी नहीं जाती।
ज़ुदा है मामला दिल का,
लगी इसकी की नहीं जाती।

4

तीर लगते नहीं निशाने तक।
पाँव उठते नहीं ठिकाने तक।
अश्क़ पलकों में आ ठहरते हैं,
वो छलकते नहीं रुलाने तक।
डूबते तो सभी ने देखा था,
कोई आया नहीं बचाने तक।
ताश के घर-महल बनाते हो,
ये संभलते नहीं जमाने तक।।
हाल है इन तमाम रिश्तों का,
साथ चलते नहीं निभाने तक।
आग अंदर है अलग बाहर से,
ये सुलगती नहीं बुझाने तक ।

नवीन माथुर पंचोली
अमझेरा धार मप्र, पिन 454441 मो 9893119724